# साहित्य अमृत

मासिक

वर्ष-२२ अंक-८ ❖ पृष्ठ ८४ | फाल्गुन-चैत्र, संवत्-२०७३-७४ | मार्च २०१७

*संस्थापक संपादक*
**स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र**
❖
*पूर्व संपादक*
**स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी**
❖
*संपादक*
**त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी**
❖
*प्रबंध संपादक*
**श्यामसुंदर**
❖
*संयुक्त संपादक*
**डॉ. हेमंत कुकरेती**
❖

*कार्यालय*
४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३
इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com
❖

**शुल्क**
एक अंक —₹ ३०
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००
वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००
*विदेश में*
एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)
वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)
❖
प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६, कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।
❖

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

## *इस अंक में*

**संपादकीय**
**राजस्थान राज्य अभिलेखागार"** ४

**प्रतिस्मृति**
**काहे फिरत बौरानी हो रामा**/ *कमलापति मिश्र* ८

**कहानी**
**देहदान**/ *मनोहर पुरी* १०
**विमला**/ *विष्णु भट्ट* २०
**प्रेम की जीत**/ *देवकीनंदन शुक्ल* ३३
**नैना**/ *रेनू सैनी* ३८
**आखिर वो मर्द है**/ *रहिला रईस* ४६

**आलेख**
**पाठालोचन : प्रो. डी.एल.एन. के स्मृतिपूर्ण मार्गदर्शन के साथ**/ *बी.वाई. ललितांबा* १४
**नंदकुँवर खेलत राधा संग होरी"**/ *ज्योति प्रकाश खरे* २४
**ब्रज बीथिन मच रही होरी**/ *विभा सिंह* ३०
**पौराणिक साहित्य में संस्कृति का चिंतन**/ *मरूफ उर रहमान* ६८

**पुस्तक-अंश**
**मितभाषी, गंभीर और स्पष्ट चिंतन**/ *ओमप्रकाश कोहली* १८

**लघुकथा**
**कड़वा सच**/ *अनिता देवी* १७
**प्रवचन और राशिफल**/ *संजय कुमार* ५६
**पैसे का डिब्बा**/ *जय किशोर बरेरिया* ७५

**स्मरण**
**डॉ. रमाशंकर शुक्ल 'रसाल' : हिंदी साहित्य का एक अनूठा व्यक्तित्व**/ *दयाशंकर शुक्ल* २६

**कविता**
**सरस्वती वंदना**/ *सुरेश चंद्र निशिकर* ९
**भूख**/ *सितम सागर वेदवाक्* १२
**तुम हर बगिया"**/ *रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'* १३
**फागुन आ गया**/ *संजय पंकज* २३
**हाथ लिये पिचकारियाँ**/ *अणिमा सिंह* ३२
**रंग-रंग हैं मस्तियाँ**/ *अशोक 'अंजुम'* ५३
**नीति के दोहे**/ *नरेंद्र दीपक* ५९
**बस यूँ ही**/ *सुनीता बहल* ७०
**अवध में फागुन"**/ *प्रतिमा अखिलेश* ७१

**पत्र**
**बाबू गुलाब राय व निरालाजी के पत्र**/ *विनोद शंकर गुप्त* ३६

**हास्य-व्यंग्य**
**उस होली से इस होली तक**/ *शमीम शैख* ४४

**राम झरोखे बैठ के**
**हमारे मोहल्ले के लोग**/ *गोपाल चतुर्वेदी* ५०

**साहित्य का भारतीय परिपार्श्व**
**अगला जन्म**/ *दिनकर जोशी* ५४

**रिपोर्ताज**
**सिंहस्थपुरी के अविस्मरणीय क्षण**/ *अखिलेश सिंह श्रीवास्तव* ५७

**साहित्य का विश्व परिपार्श्व**
**दिनभर का इंतजार**/ *अर्नेस्ट हेमिंग्वे* ६०

**यात्रा-संस्मरण**
**लला, फिर आइयो खेलन होरी**/ *प्रेमपाल शर्मा* ६२

**लोक-साहित्य**
**लोकगीतों में राम"**/ *तिलक राज शर्मा* ७२

**बाल-संसार**
**बिन दिमाग**/ *कोमल वाधवानी 'प्रेरणा'* ७४

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ७६
वर्ग-पहेली ७८
साहित्यिक गतिविधियाँ ७९

संपादकीय

# राजस्थान राज्य अभिलेखागार की अत्यंत महत्त्वपूर्ण उपलब्धि

राजस्थान राज्य का भूमि अभिलेखागार बीकानेर में है। उस समय मुख्य राज्यों की जो राजधानियाँ थीं, उनमें नवनिर्मित राजस्थान राज्य के मुख्य कार्यालयों को वितरित करने का निश्चय किया गया। राज्य अभिलेखागार द्वारा १० लाख से अधिक रिकार्डों का डिजिटलाइजेशन लेखागार बीकानेर और निदेशालय में स्थापित करना तय हुआ। यह उचित ही था, क्योंकि बीकानेर नरेश महाराज गंगा सिंह ने अपने समय में अपनी रियासत के विभिन्न सरकारी महकमों के आधुनिकीकरण के अनेक प्रयास किए थे। प्रशासनिक सेवा में आने के उपरांत राजस्थान हमारी कर्मभूमि रही। राजस्थान के इतिहास, शौर्य और बलिदान की गाथाओं से जो भावनात्मक लगाव बचपन से ही था, वह भावनात्मक आकर्षण आज भी वैसा ही है। वहाँ के अनेक स्थलों को देखने के बाद, कुछ साहित्य पढ़ने और राजस्थान में कई प्रसिद्ध इतिहासकारों से मिलने के बाद उसमें वृद्धि ही हुई। वर्ष १९९४ के नवंबर में मुख्यमंत्री मोहनलाल सुखाड़िया के सचिव होने का अवसर मिला। उस समय हम नौसिखिया थे, व्यावहारिक प्रशिक्षण उत्तर प्रदेश में समाप्त कर १९९३ में ही अपनी कर्मस्थली काडर में पहुँचे थे। सुखाड़ियाजी के पास ही शिक्षा और संस्कृति विभाग थे। उनकी भी आकांक्षा थी कि राजस्थान के हर क्षेत्र में आधुनिकता के मूल्य और कार्य-प्रणाली लाई जाए। साथ-ही-साथ पुरातत्त्व और हमारी पारंपरिक प्राचीन विरासत का भी संरक्षण हो। मुख्यमंत्री के सचिव होने के नाते एक आयोजन में अगले वर्ष जाना हुआ। अपनी आदत के अनुसार अभिलेखागार और म्यूजियम देखने गया तथा दोनों से बहुत प्रभावित हुआ। म्यूजियम से कुछ पुस्तकें भी खरीदीं।

एक अंतराल के बाद फिर अभिलेखागार को देखने गया, उसमें काफी कुछ और विकास हुआ था। प्रसन्नता हुई कि देख-दिखाव की दृष्टि से भी व्यवस्था ठीक है। उनके कुछ नए प्रकाशन भी लिये। इतिहास केवल राजा-महाराजाओं का इतिहास नहीं है, वह जनता का भी इतिहास है; सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक एवं वैचारिक जनस्पंदन का भी इतिहास है। यह वहाँ की कलाओं और स्थापत्य तथा परिवर्तनशील समय पर भी प्रकाश डालता है। अभिलेखागार इतिहास लेखन और अपनी अस्मिता पहचानने के बड़े साधन हैं। इसलिए सरकारों को उनकी अहमियत समझनी चाहिए और उनको हर प्रकार से सुविधाएँ प्राप्त होनी चाहिए। खैर, यह तो अपने में महत्त्वपूर्ण है ही, किंतु कुछ आश्चर्य हुआ, हमें जब हमारी पुत्री अनुराधा चतुर्वेदी, जो दिल्ली के योजना एवं वास्तुकला विश्वविद्यालय में एसोसिएट प्रोफेसर है, अपने कुछ विद्यार्थियों के साथ बीकानेर गई थी, अभिलेखागार की सामग्री के डिजिटलाइजेशन में हुई प्रगति के बारे में बताया। यह सामग्री शोधार्थियों के लिए ऑनलाइन (www.rsad.rajasthan.gov.in) पर उपलब्ध है। अब तक राजपूताने के रजवाड़ों के ७० लाख ऐतिहासिक और प्रशासनिक रिकॉर्ड डिजिटलाइज्ड हो चुके हैं। उनमें आठ लाख चौंतीस हजार पन्ने जयपुर राज के, तोजी और अरसहा रिकॉर्ड, तेरह हजार पन्ने विभागीय प्रकाशनों के और दो लाख पन्ने जोधपुर महकमा-खास के हैं। बीकानेर रजवाड़े के रिकॉर्ड बड़ी संख्या में ऑनलाइन पर उपलब्ध हैं। इसी प्रकार अलवर, जयपुर, जोधपुर, किशनगढ़, सिरोही, भरतपुर, झालावाड़, अजमेर आदि के रिकॉर्ड भी आसानी से ऑनलाइन पर देखे जा सकते हैं। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि उन्होंने एक अच्छी आर्काइवल लाइब्रेरी भी शोधार्थियों की सुविधा के लिए तैयार की है। यह सब तभी संभव है, जब अभिलेखागार को अच्छा नेतृत्व प्राप्त हो। इसलिए इसके निदेशक डॉ. महेंद्र खडगावत बधाई के पात्र हैं। यह आश्चर्यजनक उपलब्धि उन्हीं की सूझबूझ का परिणाम है। वे न केवल अपने सहयोगियों को मार्गदर्शन प्रदान कर सके बल्कि इसके लिए उनको उत्साहित भी किया। पेनसिल्वेनिया विश्वविद्यालय ने डॉ. खडगावत को अपने उल्लेखनीय कार्य के विषय में विस्तार से बताने के लिए आमंत्रित किया है। इतिहास के लेखन और शोध के लिए डॉ. खडगावत की यह बड़ी देन है। आशा है, इसे और विस्तार देने में सफल होंगे।

हमें यह जानकर हर्ष हुआ कि पूर्व निदेशक डॉ. नाथूराम खडगावत (स्वर्गीय) की संपादित पुस्तक '१८५७ इन राजस्थान' का पुनर्मुद्रण हो गया है। इस पुस्तक के लिए सुखाड़ियाजी ने ही डॉ. नाथूराम खडगावत को प्रोत्साहित किया था। 'Rajasthan Through Ages' को तीन भागों में तैयार कर प्रकाशित किया जाए, इसकी भी परिकल्पना सुखाड़ियाजी के समय ही हुई थी। प्रथम खंड छप भी गया था। बिहार के तत्कालीन राज्यपाल श्री आर.आर. दिवाकर ने एक वृहद ग्रंथ 'Bihar Through Ages' के प्रकाशन का आयोजन किया था। वह एक अच्छा उदाहरण सामने आया था। सुखाड़ियाजी से विचार-विमर्श में यह निर्णय हुआ कि नई शोध में जो सामग्री मिले, उसको देखते हुए 'Rajasthan Through Ages' का तीन भागों में इस प्रकार प्रकाशन होना चाहिए—प्राचीनकाल, मध्यकाल और अर्वाचीन राजस्थान के निर्माण तक। राजस्थान सरकार अब तीन भागों का हिंदी में अनुवाद कराने की व्यवस्था करे। एक समय डॉ. गौरीशंकर हीराचंद ओझा ने राजपूताने के कई रजवाड़ों के अलग-अलग इतिहास प्रकाशित कर बहुत प्रशंसनीय कार्य किए थे। अब आवश्यकता है कि नए परिवेश में आज के राजस्थान के सब रजवाड़ों का सम्मिलित इतिहास प्रकाशित हो। राजस्थान और देश के लिए यह सुखाड़ियाजी का अमूल्य अवदान है। इसके साक्षी और सहायक होने के कारण ही हमने इसकी चर्चा की है। यह सर्वविदित है कि राजस्थान के रजवाड़ों के संपर्क गुजरात से लेकर सुदूर दक्षिण तक थे। मध्य एशिया से व्यापार का रास्ता राजस्थान होकर ही था। जयपुर के राजा सवाई जयसिंह तो अफगानिस्तान से कामरूप तक अपनी दूरदर्शिता में बहादुरी की छाप छोड़ आए थे। गुरु गोविंद सिंह राजस्थान होते हुए ही नांदेड़ गए थे। वीर बंदा बहादुर भी गुरु के दो निर्दोष बालकों को दीवार में चुने जाने के प्रतिशोध के लिए राजस्थान होते हुए

पंजाब पहुँचे थे। इतिहास शोध के लिए राजस्थान में बहुत सामग्री बिखरी पड़ी है। राजस्थान अभिलेखागार के तत्त्वावधान में फारसी फरमानों के प्रकरण में एक काम और अच्छा हुआ है कि 'मुगलकालीन भारत' एवं 'राजपूत शासक' तीन भागों में प्रकाशित किया है। वास्तव में एक सक्रिय अभिलेखागार भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक विशेष देन है।

**भारत रत्न बिसमिल्ला खाँ**

२०१५ में इसी स्तंभ में सूचना दी गई थी कि अगले वर्ष श्रीमती एम.एस. सुब्बालक्ष्मी और शहनाईवादक उस्ताद बिसमिल्ला खाँ की जन्म शताब्दी है और उनके विषय में कुछ विशेष चर्चा करेंगे, पर लंबी अस्वस्थता के कारण वह संभव नहीं हो सका। अतएव अब उनके विषय में कुछ चर्चा करना उचित रहेगा। भारत सरकार ने दोनों को 'भारत रत्न' से आभूषित किया। उस्ताद बिसमिल्ला खाँ बड़े नर्म दिल के व्यक्ति थे। शहनाई को उन्होंने न केवल जनप्रिय बना दिया, बल्कि उसको क्लासिकल म्यूजिकल इंस्ट्रूमेंटस की श्रेणी में प्रतिष्ठित कर दिया। पद्मभूषण पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी की स्मृति में स्थापित 'हमारा लखनऊ पुस्तकमाला' का ४१वाँ पुष्प हाल ही में प्रकाशित हुआ है। नाम है 'लखनऊ का आकाशवाणी रेडियो स्टेशन' और लेखक हैं श्री नवनीत मिश्र, जो न केवल लखनऊ रेडियो में करीब ३१ वर्ष कार्यरत रहे, बल्कि स्वयं एक उच्च कोटि के कहानीकार हैं। अपने इस छोटे से मोनोग्राफ में उन्होंने भारत में रेडियो तकनीक का प्रवेश और प्रस्तार की चर्चा करते हुए लखनऊ रेडियो के विकास और उससे जुड़ी कुछ नामचीन हस्तियों का जिक्र किया है। पुस्तिका बहुत दिलचस्प है, नवनीत मिश्र साधुवाद के पात्र हैं। उस्ताद बिसमिल्ला खाँ के संबंध में जो कुछ उन्होंने लिखा है, उसको पाठकों के लिए उद्धृत करना चाहूँगा। 'यह सम्मान उस्ताद बिसमिल्ला खाँ को ही प्राप्त हुआ कि पं. नेहरू के समय से ही १९४७ में स्वाधीनता दिवस और १९५० में गणतंत्र दिवस की पूर्वसंध्या पर दिल्ली के ऐतिहासिक लालकिले से उनकी शहनाई का कार्यक्रम आयोजित किया जाता रहा। यह सम्मान भी उस्ताद बिसमिल्ला खाँ साहब को ही नसीब हुआ कि आकाशवाणी केंद्रों की पहली सभा का शुभारंभ उनकी शहनाई की मंगलध्वनि से होता है।'

बिसमिल्ला खाँ साहब के मन में रेडियो के प्रति बहुत कृतज्ञता का भाव रहता था। वे खुले मन से इस बात को स्वीकार करते थे कि यदि रेडियो न होता तो देश-दुनिया के लोग बिसमिल्ला खाँ को न जान पाते। वे जब कभी रेडियो स्टेशन आते तो प्रवेश करने से पहले रेडियो स्टेशन के फाटक पर वहाँ की धरती को छूकर आँखों से लगाते और स्टेशन निदेशक से अवश्य मिलते। रेडियो पर उनका शहनाई-वादन का पहला कार्यक्रम लखनऊ रेडियो स्टेशन से प्रसारित किया गया था। डुमराव (बिहार) में उनका जन्म २१ मार्च, १९१६ को दरबारी गायक श्री बचई खाँ के घर हुआ था और अपने चाचा अलीबख्श 'बिलायतू' से शहनाई बजाना सीखने लगे थे, जो काशी विश्वनाथ मंदिर में शहनाईवादक थे। बिसमिल्ला खाँ में गंगा और सरस्वती के प्रति अगाध श्रद्धा थी। एक बार अमेरिका के एक विश्वविद्यालय में वहाँ शहनाई शिक्षक के रूप में उनके उपस्थित रहने का प्रस्ताव रखा और उसके लिए उनकी शर्तें जाननी चाहीं। उस्ताद बिसमिल्ला खाँ ने बस एक ही शर्त रखी कि गंगा नदी को अमेरिका ले आइए, मैं भी अमेरिका में बस जाऊँगा।

बनारस को परिभाषित करते हुए वे कहा करते थे, 'जहाँ बना रहे रस, वही है बनारस।' उस्ताद बिसमिल्ला खाँ काशी विश्वनाथ मंदिर में भगवान् शंकर के सामने शहनाई बजाते तो लोग इस मंगल वाद्य को सुनकर भक्तिरस में डूब जाते और वही बिसमिल्ला खाँ जब मोहर्रम में काले लिबास में शहनाई पर नौहर की मर्मभेदी मातमी धुन बजाते हुए सड़कों पर निकलते तो आसुँओं से रोते हुए लोगों की भीड़ उनके पीछे चला करती थी। पत्नी की मृत्यु के बाद वे अपनी शहनाई को ही अपनी बेगम कहते थे। २१ अगस्त, २००६ में जब उनका निधन हुआ तो उनकी इच्छानुसार उनकी बेगम अर्थात् उनकी शहनाई को भी उनके साथ ही खाक-ए-सुपुर्द कर दिया गया। पिछले दिनों उनकी चाँदी से चढ़ी हुई पाँच-छह शहनाइयों, जो उनके प्रशंसकों ने समय-समय पर उनको भेंट में दी थीं, की चोरी का मामला समाचार-पत्रों में आया। शीघ्र ही पता लगा कि उनके एक पौत्र ने ही उन्हें एक सुनार को बेच दिया। सुनार और पौत्र तो गिरफ्तार हो गए, पर शहनाइयों की चाँदी तो गल ही चुकी थी। अब उनका परिवार चाहता है कि उनके घर को उनकी स्मृति में म्यूजियम बना दिया जाए और उनका जो कुछ सामान है, उसको भी प्रदर्शन के लिए रख दिया जाए। राज्य सरकार और भारत सरकार को इस पर विचार करना चाहिए। अभी यह जानकारी मिली है कि बिहार सरकार ने उनके जन्मस्थान डुमराव में उनकी एक मूर्ति लगाने का निर्णय लिया है और एक म्यूजियम भी बनाने का निश्चय किया है। यह अच्छा है, बिहार उनको अपना मानता है। डुमराव उनकी जन्मभूमि थी, किंतु कर्मभूमि तो वाराणसी रही, इसलिए उत्तर प्रदेश सरकार को भी पीछे नहीं रहना चाहिए। वहाँ पर शहनाई सिखाने की व्यवस्था की जा सकती है। खाँ साहब के परिवार में सिवा एक पुत्र के, जो उनका शहनाई पर साथ देता था, किसी अन्य ने शहनाई बजाना नहीं सीखा। खाँ साहब भी अपने कार्यक्रमों में व्यस्त रहते थे और उन्होंने भी शहनाई प्रशिक्षण की ओर ध्यान नहीं दिया।

उनका परिवार बड़ा लंबा-चौड़ा था और हमेशा पैसे की तंगी रहती थी। शहनाई बजाते हुए वे टिप्पणियाँ भी करते रहते थे, जो बहुत दिलचस्प होती थीं। अपने और परिवार के बारे में बहुत कुछ कह जाते। भारत की ओर से मांट्रियल केंस एवं आर्ट फेस्टीवल और ओसाका ट्रेड फेयर में उन्होंने शिरकत की। संभवत: दुनिया के अनेकानेक देशों की राजधानियों में उनके कला-कौशल का प्रदर्शन हुआ। विश्वभारती और बनारस विश्वविद्यालय ने उन्हें मानद डॉक्टरेट की उपाधि से नवाजा। संगीत नाटक अकादमी के वे फेलो नामित हुए। पद्मश्री, पद्मभूषण, पद्मविभूषण और अंत में भारत रत्न से वे सम्मानित किए गए। खाँ साहब के बारे में कहा जाता है कि वे हवाई सफर से बहुत डरते थे और उससे बचने के लिए असंभव माँगें रख देते थे। उनको जब एडिनबरा फेस्टीवल के लिए निमंत्रित किया गया तो उन्होंने शर्त रखी कि पहले उन्हें और उनके सहयोगियों को मक्का-मदीना ले जाया जाए और इस तरह उन्होंने हज भी कर डाली। इस प्रकार से खाँ साहब की कुशाग्र बुद्धि और व्यावहारिकता का भी पता चल जाता है। श्रीमती

सुब्बालक्ष्मी के विषय में अगले अंक में लिखना संभव होगा। सवाल यही है कि खाँ साहब के स्तर की शहनाई की गूँज अब कब सुनाई देगी?

### टाटा उद्योग समूह का विकास

देश-विदेश में टाटा उद्योग की प्रतिष्ठा एवं नाम है। १९वीं सदी के उत्तरार्ध में जमशेदजी नसेरवान टाटा (जे.एन. टाटा) चाहते थे कि व्यापार से धन कमाने के लिए भारत में लोहे और इस्पात बनाने का कारखाना डाला जाए। अंग्रेजी राज के समय दिल्ली का घोर विरोध था। बड़ी दौड़-धूप कर बिहार में उन्होंने इस कारखाने के लिए जमीन की व्यवस्था की। जमशेदनगर का विकास वहीं हुआ। जे.एन. टाटा बड़े दृढप्रतिज्ञ, धैर्यवान और अध्यवसायी थे। कारखाना शुरू करने के लिए टेक्नीशियन और इंजीनियरों की जरूरत थी। जो उस जमाने में भारत में उपलब्ध नहीं थे। उसके लिए उन्होंने अमेरिका जाना निश्चय किया। जापान से अमेरिका जानेवाले जहाज में संयोग से उनका मिलना स्वामी विवेकानंद से हुआ। स्वामीजी शिकागो में आयोजित सर्वधर्म सभा में भाग लेने जा रहे थे। बातचीत के दौरान जमशेदजी ने स्वामीजी को अपना मंतव्य बताया। स्वामीजी ने उनके विचार का पुरजोर समर्थन किया, परंतु कहा कि कुछ दिनों के लिए तो आप अमेरिकी टेक्नीशियन और इंजीनियर मँगा सकते हैं, अंग्रेज सरकार इसकी विरोधी है, अतएव भविष्य में भारत में ही इंजीनियर, टेक्नीशियन और वैज्ञानिक तैयार करने होंगे। तभी संभव होगा देश में औद्योगीकरण। हर प्रकार के कारोबारी तैयार करने होंगे। यह सब स्वदेशी आंदोलन के पहले की बात है। इस सुझाव में कितनी दूरदर्शिता और सूझबूझ निहित है। बंगलौर (अब बंगलुरु) में Institute of Science की स्थापना इसी का प्रतिफल है। इस्पात का कारखाना प्रारंभ करने के लिए अच्छी धनराशि की भी आवश्यकता थी। उस समय के बैंक भी सरकार के रुख को देखते हुए मदद को तैयार नहीं थे। निर्धन देश के सीमित साधनोंवाले निवासियों ने दस-दस रुपए के बॉण्ड खरीदकर जमशेदजी को प्रोत्साहित किया। उनका इस्पात का कारखाना देशभक्ति और विकास की आकांक्षा का प्रतीक बन गया।

मूल कंपनी टाटा ऐंड संस है और उसके अंतर्गत अनेकों कंपनियाँ हैं। शायद ही कोई क्षेत्र हो, जहाँ टाटा की भागीदारी न हो। यही नहीं, शिक्षा, समाज-कल्याण आदि क्षेत्रों में भी टाटा द्वारा स्थापित ट्रस्टों और फाउंडेशनों ने अत्यंत प्रशंसनीय कार्य किए हैं। कारोबार में नैतिकता, गुणवत्ता में विश्वास और सामाज केंद्रीय नीतियों के लिए टाटा प्रबंधन प्रसिद्ध रहा है। टाटा ऐंड संस के चेयरमैन, केवल एक बार छोड़कर, टाटा परिवार के ही रहे हैं। रतन टाटा जो पूर्व चेयरमैन थे, उन्होंने अपने भाई को छोड़कर एक अन्य सहयोगी सिरस मिस्त्री को चेयरमैन बनवाया। मिस्त्री के परिवार पालोन्नजी का भी टाटा ऐंड संस में एक बड़ा शेयर है। कुछ समय के बाद रतन टाटा ऐंड संस के बोर्ड में मतभेद शुरू हो गए। बोर्ड द्वारा सिरस मिस्त्री को हटाकर चार महीने के लिए रतन टाटा को फिर अध्यक्ष बनाया गया, ताकि इस बीच उपयुक्त व्यक्ति को चिह्नित किया जाए। अखबारों में सिरस मिस्त्री के बयान आने लगे। मुकदमेबाजी शुरू हो गई। सरकारी नियंत्रक संस्थान सेवी आदि के पास भी शिकायतें गईं। धीरे-धीरे मिस्त्री को टाटा ऐंड संस की अन्य औद्योगिक इकाइयों से भी हटा दिया गया। विशेष शेयर होल्डर्स की बैठक में भी रतन टाटा का पलड़ा भारी रहा। टाटा का नाम जो उद्योग-जगत् में सदैव सर्वोपरि रहा, विवाद में फँस गया। भारतीय पत्र-पत्रिकाओं में ही नहीं, प्रत्युत विश्व की सब आर्थिक पत्र-पत्रिकाओं में तरह-तरह की टिप्पणियाँ आईं। काफी शंकाएँ प्रकट की गईं। प्रशासन के स्तर पर या अदालतों के स्तर पर यह खींचातानी चलती रहेगी, पर टाटा कंपनियों की व्यवस्था ठीक से चल निकली है। विवाद बहुत कुछ फिलहाल थम गया है। खेदजनक यही है कि एक उद्योग समूह, जो भारत का गौरव माना जाता रहा है, वहाँ भी विवाद प्रारंभ हो गया। टाटा नाम की जो विश्वनीयता रही है, उसको धक्का लग सकता है। संतोष का विषय यह है कि टाटा ऐंड संस के बोर्ड ने टाटा समूह में ही काम करनेवाले व्यक्ति को अब चेयरमैन चुना है, जो पारसी नहीं हैं और उनकी शिक्षा-दीक्षा भी भारत में हुई है। वे एक मेधावी तमिल ब्राह्मण हैं, नाम है एन चंद्रशेखरन। उनके अन्य दो भाई भी उन्हीं की तरह अन्य संस्थानों में कार्य कर रहे हैं। चंद्रशेखरन टाटा कंसल्टेंसी सर्विलेंज टाटा उद्योग की एक इकाई के चेयरमैन थे। चंद्रशेखरन को संगीत में विशेष रुचि है, अपनी संस्कृति और परंपराओं का आदर करते हैं। प्राय: मैराथन दौड़ों में भाग लेना उन्हें बहुत पसंद है। अपने सिद्धांतों के पक्के, निर्णयात्मक क्षमता के धनी वे आज के औद्योगिक विश्व की प्रतिस्पर्धा और चुनौतियों से भलीभाँति परिचित हैं। साथ-ही-साथ टाटा उद्योग समूह की क्या उपलब्धियाँ हैं, परंपराएँ हैं, आज की क्या समस्याएँ हैं और क्या संभावनाएँ हैं, उनके भी जानकार हैं। आशा है, वे टाटा उद्योग समूह को वांछित मार्गदर्शन प्रदान करेंगे।

एक नए उद्योग समूह इनफोसिस और नारायण मूर्ति के नाम से सब परिचित हैं। इनफोसिस की कहानी सूझबूझवाले और दूरदर्शी युवा एंटरप्रेनोयरिओ की है। सूचना तकनीकी क्षेत्र में उसका भी नाम है। पिछले दिनों में उसके बोर्ड में भी नई तथा पुरानी पीढ़ी के दृष्टिकोण के मतभेद की बात अखबारों में आई, टी.वी. और अखबारों में साक्षात्कार भी आए। नैतिकता के सवाल भी उठे हैं। आज के समय की माँग के अनुसार परिवर्तन अपेक्षित है, यह भी कहा जा रहा है। किंतु जिन मूल्यों और विजन को लेकर इनफोसिस की स्थापना हुई, उनको नकारा नहीं जा सकता है। नियंत्रक संस्थान सेवी के अध्यक्ष ने इस विवाद के विषय में आश्वस्त किया है कि कोई चाहे कितना भी ऊँचा व्यक्ति हो, यदि कानून और मर्यादाओं की कोई अवमानना हुई है तो सेवी सख्त से सख्त काररवाई करेगी। इनफोसिस की प्रतिष्ठा और भविष्य के हित में है कि उसका बोर्ड भी आत्म-संतुलन रखे। उद्योग-जगत् में तभी वे अपनी अविश्वसनीयता और सफलता को संरक्षण प्रदान कर पाएँगे। अधिक नहीं कहना है। आशा है, जो मतभेद हैं, उनका निराकरण सहजता से हो जाएगा।

### कानून को हाथ में लेने का औचित्य

पिछले दिनों जयपुर में जब फिल्म निर्माता और निर्देशक भंसाली अपनी फिल्म 'पद्मावती' की शूटिंग के लिए गए; हीरो-हीरोइन के रूप में रणवीर सिंह और दीपिका पादुकोन वहाँ उपस्थित थे। स्थानीय 'श्री राजपूत करनी सेना' के सदस्यों ने फिल्म निर्माता भंसाली के साथ मारपीट की, तो

कलाकारों को मुंबई वापस जाना पड़ा। 'करनी सेना' के अध्यक्ष ने मारपीट को टी.वी. पर वाजिब ठहराया। उनको आशंका थी कि रानी पद्मावती को विकृत रूप में प्रस्तुत किया जाएगा। किसी तथाकथित स्वप्न के सीन के बारे में उन्हें एतराज था। हम नहीं जानते कि उन्होंने स्क्रिप्ट देखी थी? यह भी पता नहीं कि 'करनी सेना' ने भंसाली से इस बारे में कुछ बातचीत की थी। हीरोइन पादुकोन ने एक बयान में कहा भी कि पद्मावती के चरित्र को किसी गलत तरीके से पेश करने का सवाल ही नहीं। अलाउद्दीन खिलजी का रोल अदा कर रहे रणवीर सिंह ने भी इसी बात को अन्य शब्दों में दोहराया। मीडिया और बॉलीवुड ने इस विवाद को अभिव्यक्ति के अधिकार का प्रश्न बनाया, पर हम उस विवाद में नहीं पड़ना चाहते हैं। हमारा पूर्ण विश्वास है कि ऐतिहासिक तथ्यों के साथ फिल्मों में खिलवाड़ नहीं होनी चाहिए, विशेषतया जहाँ आस्था और भावनाओं का प्रश्न है। हमारा कहना है, अगर कोई आशंका थी तो पहले निर्माता और कलाकारों से पूछताछ तो कर लेनी थी। कानून अपने हाथ में लेना कहाँ तक वाजिब है। यह हमारा प्रश्न है? कुछ लोग पद्मावती के अस्तित्व को ही नकारते हैं। उनका कहना है कि सूफी कवि जायसी के पद्मावत में ही उनका चरित्र दरशाया है, वह एक आख्यान है। कोई ऐतिहासिक विश्वसनीय जानकारी उपलब्ध नहीं है। पर कुछ चीजें जनस्मृति में ऐसी घुलमिल जाती हैं कि वे घटनाएँ और व्यक्ति जीवंत हो जाते हैं। बचपन से ही रानी पद्मावती की शौर्यगाथा करोड़ों आदिवासियों के साथ हमारे दिल और दिमाग पर छाई हुई है।

पांडेजी का खंडकाव्य 'जौहर' कभी दसियों बार पढ़ा और उसके शब्द अब भी कानों में गूँजते हैं। जौहर खंडकाव्य आज भी रोमांच पैदा करता है। हमारे लिए रानी पद्मावती की स्मृति वंदनीय है। राजस्थान में जयपुर आने के बाद पहले बलिदान और शौर्यतीर्थ के दर्शन करने हम और पत्नी तथा कुछ मित्रों के साथ चित्तौड़ गए थे। किंतु उनके नाम की दुहाई देकर ऊधम मचाना, असामाजिक तत्त्वों को प्रोत्साहित करना और कानून को हाथ में लेना कहाँ तक उचित है? इस पूरे मामले में पुलिस की भूमिका भी शंका पैदा करती है। पुलिस कानून के पालन के लिए है या कुछ प्रभावशाली व्यक्तियों या समुदाय की आज्ञा पालन के लिए? राज्य सरकार की उदासीनता भी विचित्र लगती है। बाद में आश्चर्य हुआ, जब केंद्र के एक मंत्री, जो जयपुर गए थे, उन्होंने करनी सेना की काररवाई को पूरी तरह उचित बताया। हम एक संवैधानिक व्यवस्था में रह रहे हैं, केंद्र का राज्यमंत्री कानून को हाथ में लेने का समर्थन करे, यह उस शपथ के विरुद्ध है, जो उसने ली है। मंत्री बनने पर आज जब अराजकता और आक्रामकता की बयार देश में जोर पकड़ रही है, तो मंत्रियों को अपने व्यवहार और वाणी पर और भी नियंत्रण तथा संयम रखना चाहिए। उमा भारतीजी का हम बहुत आदर करते हैं। उन्होंने बड़े गर्व से कहा कि जब वे मुख्यमंत्री थीं तो बलात्कारियों की पहले अच्छी तरह मरम्मत करवाती थीं। अपने बयान को उन्होंने पूरे आत्मविश्वास के साथ एक दूसरी जनसभा में दोहराया। इस कॉलम में हम महिला उत्पीड़न के बारे में बार-बार और अनेक दृष्टिकोणों से लिखते रहते हैं, और आगे भी लिखेंगे। अपनी शासन-व्यवस्था की कमजोरियों को सीनाजोरी से नहीं ढका जा सकता है। यह विचारणीय प्रश्न है।

## पूर्ववर्ती प्रधानमंत्री को प्रधानमंत्री मोदी का जवाब

कांग्रेस पार्टी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के राज्यसभा में दिए गए भाषण से तिलमिला गई है, जो उन्होंने राष्ट्रपति के अभिभाषण की बहस के बाद प्रत्युत्तर के रूप में दिया था; विशेषतया उन्होंने जो इशारा पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के विषय में किया। नोटबंदी की बहस में मनमोहन सिंह ने उसकी कटु आलोचना करते हुए 'व्यवस्थित लूट और प्लंडर' की संज्ञा दी थी। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी उस समय उपस्थित थे, और उनके भाषण के बाद वे उनके पास गए तथा हाथ मिलाया। इसका प्रत्युत्तर उन्होंने राष्ट्रपति के भाषण के समय देना उचित समझा। उन्होंने कहा कि डॉ. मनमोहन सिंह एक लंबे अरसे तक वित्तमंत्री और उसके बाद प्रधानमंत्री रहे तथा आर्थिक मामलों में उनका वर्चस्व रहा। १९९२ के स्टॉक एक्सचेंज के घोटाले के उपरांत इतने घोटाले हुए, पर उन पर कोई आँच नहीं आई, वे बचे रहे। उन्होंने कहा कि स्नानघर में रेनकोट पहनकर नहाने की कला डॉ. साहब ही जानते हैं। विमुद्रीकरण की बहस में मनमोहन की आक्रामकता पर यह मोदी का उत्तर था। एक उदाहरण यहाँ हम देना चाहेंगे। सिक्योरिटी और स्टाक एक्सचेंज के घोटाले के विषय में तत्कालीन वित्तमंत्री मनमोहन सिंह ने बहस के दौरान यहाँ तक कह दिया था कि क्या वे अपनी नींद इस स्कैम के कारण खो दें। हम उस समय सांसद ही नहीं, रामनिवास मिर्धा की अध्यक्षता में जो जॉइंट संसदीय समिति बनी थी, उसके सदस्य भी थे। वित्तमंत्री की हैसियत से वे समिति के सामने पेश हुए थे। प्रशासन में पूर्व सहयोगी रहने के कारण हमने पूर्व वित्तमंत्री और वित्तसचिव रहे रिजर्व बैंक के गवर्नर से कई सवाल किए। अनेक सदस्यों ने काफी पैने सवाल किए थे, जिनका उन्होंने कोई संतोषजनक उत्तर नहीं दिया था। मोदी के कटाक्ष को कांग्रेसी सदस्य अब पूर्ववर्ती प्रधानमंत्री का अपमान कह रहे हैं। वैसे हमने कई बार लिखा है कि राजनैतिक वाद-विवाद का स्तर गिरता जा रहा है। आज का वाक्युद्ध इसी प्रकार का है।

प्रधानमंत्री मोदी के प्रधानमंत्री बनने और उसके पहले कोई कम कटु शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया था। उनकी तुलना हिटलर-मुसोलिनी से की गई। सोनिया ने उन्हें मौत का सौदागर कहा, विषबीज बोनेवाला कहा। कांग्रेस उपाध्यक्ष राहुल गांधी ने अपनी किसान यात्रा के उपरांत अपने स्वागत समारोह में दिल्ली में जो कुछ कहा, क्या यह आज के प्रधानमंत्री का अपमान नहीं है? लोग भूले नहीं हैं, जब डॉ. मनमोहन सिंह योजना आयोग के सदस्य, उपाध्यक्ष थे, तब तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने योजना आयोग के सदस्यों को एक 'वंच ऑफ जोकर्स' यानी 'मसखरों की जमात' कहा था। क्या ये सम्मानीय शब्द हैं? स्वयं राहुल गांधी ने प्रेस कॉन्फ्रेंस में कैबिनेट के प्रस्ताव को नॉनसेंस कहकर फाड़ डाला था। यह अच्छा हुआ कि वह ऑर्डिनेंस नहीं आया, पर राहुल गांधी का वह व्यवहार तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के प्रति क्या आदर प्रदर्शन था?

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

**(त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी)**

# काहे फिरत बौरानी हो रामा

● **कमलापति मिश्र**

होली मानव के इतिहास में उतनी ही पुरानी है, जितना शैशव की अपेक्षा-यौवन। होली को हम अनादिकाल से यौवन मानते आए हैं। 'भविष्योत्तर पुराण' में उसका जैसा वर्णन मिलता है, वैसा ही आजकल यह प्रचलित भी है। 'जैमिनीय पूर्वमीमांसा' में 'होलिकाधिकरण' अलग से एक अध्याय है। बौद्धों के 'धम्मपद' में 'बालनक्खत्त' का बड़ा मनोरम वर्णन है। 'बालनक्खत्त' का का अर्थ होता है, 'मूर्खों का समारोह।' वात्स्यायन का 'कामसूत्र' तो इसके वर्णन से बहुत ही सुरभित है। सातवीं सदी के हर्षवर्धन का वर्णन तो बड़ा ही हृदयग्राही है। उदयन की कौशांबी में जिस प्रकार होली मनाई जाती थी, उसकी कल्पना से आज भी मन पुलक उठता है। १०२० ई. के लगभग महमूद गजनवी की राजसभा के एक विद्वान् अलबरूनी भारत पधारे थे। उन्होंने अपने लिखे हुए यहाँ के वृत्तांत में बड़ी विशदता से होली का वर्णन किया है। मुगल बादशाह तो बराबर होली खेलते थे। बेगमों के साथ जहाँगीर के होली खेलने का एक चित्र भी मिलता है।

सच तो यह है कि यह ऋतु ही विलास की ऋतु है। यौवन बड़ी उद्दामता से अपने निकट की शैशव और जरा नाम की दोनों अवस्थाओं पर अपना प्रभाव डालने से नहीं चूकता। जो यौवन में होते हैं, उनकी रक्षा तो इस मौसम में शिव के भी बूते की बात नहीं।

प्रकृति का स्पष्ट और पारदर्शी सौंदर्य देखना हो तो इस अवसर पर गाँवों में चले जाइए। वहाँ की रमणियाँ इस समय प्रकृति की विचरती हुई शोभा सी महसूस होती हैं। वहाँ लगता है, पुरुष जाति वसंत और नारी जाति ऋतु बनकर यौवन समारोह बना रहे हों। सुनिए, वहाँ से कैसा मधुर स्वर आ रहा है—

*आइउँ पिताजी की चोरी, भला केउ रंग न छाँड़ै।*
*पहिलिन होरी ससुरजी से खेल्यों।*
*खेल्यों घुँघटवा की ओट॥ भला. ॥*

*दुसरिन होरी जेठजी से खेल्यों।*
*खेल्यों बरोंठवा की ओट॥ भला. ॥*

*तीसर होरी देवरजी से खेल्यों।*
*खेल्यों नयनवा की ओट॥ भला. ॥*

*चौथी होरी बलमजी से खेल्यों।*
*खेल्यों जोबनवा की ओट॥ भला. ॥*

सखियाँ एक-दूसरे से इस ऋतु में कोमल अनुभूतियों की आत्मीयता की बड़ी बौरानी छेड़छाड़ करने लगती हैं। बताइए, इसका क्या जवाब है—

*काहे फिरत बौरानी हो रामा, सखि नैहर में।*
*आइ गए तोरे गौने क दिनवाँ बहुत रहत अलसानी हो रामा।*
*खेलत खात बरस बहु बीते सो बस ह्वै है कहानी हो रामा।*

वास्तविकता तो यह है कि होली के महीनों पूर्व जड़-चेतन समेत सारी सृष्टि की नस-नस में संगीत समा उठता है। वन-उपवन गा उठते हैं। युवतियों की आँखों में कामदेव अँगड़ाइयाँ लेने लगता है। फूल चिटख उठते हैं। भौंरों की गूँज पर मधु चू-चूकर बरस पड़ता है। इस अवसर के जुलूस देखते ही बनते हैं। लगता है, प्रकृति जैसे स्वयं सितम ढाती हुई चल रही हो। रास्ते में जाती हुई भीड़ पर मकानों के छज्जों से अपनी चितवनों को दाएँ-बाएँ फेंकती हुई कामिनियाँ रंग छिड़कने लगती हैं तो उस समय पुरुष बाहर से भी सराबोर हो उठता है और भीतर से भी। इस अवसर के गीत क्या होते हैं और कैसा उन्माद पैदा करते हैं, यह बताने का नहीं, अनुभव करने का विषय है—

*नकबेसर कागा ले भागा*
*सैयाँ अभागा ना जागा!*

कृष्ण को अहीर जाति का समझकर उनकी प्रियतमा उनका कैसा परिहास कर रही हैं—

*बने-बने गइया चरावै रे कन्हइया,*
*घरे-घरे जोरत पिरीत।*
*आनकी बिअहिया क सान मार आवै,*
*आखिर त जतिया अहीर।*

एक कामिनी अपनी सहेली के कमनीय कलेवर में उभरते हुए यौवन का चित्रण कैसी मदिरता से कर रही है, देखिए—

*अमवा क लाग टिकोरवा रे सँगिया,*

*गूलरि फरी है हड़फोरि।*
*गोरिया क उकसा है छाती क जोबनवा,*
*पिया के खेलौना रे होई॥'*

किसी नायिका को अपनी देह और मन पर उद्दामता से तुरंत प्रभाव डालनेवाले यौवन की अनुभूति नहीं है देखें—

*बईद-हकीमवा बुआलो कोई गुइयाँ,*
*कोई लेओ री खबरिया मोर।*
*खिरकी से खिरकी ज्यों फिरकी,*
*फिरत दुओ पिरकी उठल बड़े जोर॥*

एक होली गीत का रस लीजिए—

*होरी खेलन जनि जाहु लाल*
*कोऊ रंग डारि दीहैं।*
*ब्रज की नारि समै मदमाती*
*तोहिके पकड़ि लै जइहैं।*
*छीन लेइहैं पट भाल मुरलिया*
*सिर पर चुनरी ओढइहैं।*
*बेंदी भाल नयन बिच काजर*
*नकबेसर पहिरइहैं।*
*माँग में सेनुर कान में गहना*
*बार में चोटी लगइहैं।*
*विश्वनाथ करि जोरि विनय करैं*
*तोहिके नाच नचइहैं।*

एक और होली गीत द्रष्टव्य है, जिसकी ब्रज में सर्वत्र गूँज है—

*आज बिरज में होरी रे रसिया!*
*होरी रे रसिया बरजोरी रे रसिया॥*
*उड़त गुलाल लाल भए बादर,*
*केसर रंग में बोरी रे रसिया!*
*बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ,*
*और मँजीरन जोरी रे रसिया!*
*फेंट गुलाल हाथ पिचकारी,*
*मारत भर-भर झोरी रे रसिया!*
*इत सों आए कुँवर कन्हैया,*
*उत सों कुँवरि किसोरी रे रसिया!*
*नंदगाँव के जुटे हैं सखा सब,*
*बरसाने की गोरी रे रसिया!*
*दोउ मिलि फाग परसपर खेलैं,*
*कहि-कहि होरी-होरी रे रसिया!*

होली वसंत ऋतु की कीर्ति है, समारोह है। कालिदास ने लिखा है कि इन दिनों काम स्त्रियों के रोम-रोम में समा उठता है। वे आनंद में इतनी विभोर हो जाती हैं कि उनका चलना-बोलना भी कठिन हो जाता है। टेढ़ी भौंहों से उनकी चितवन बड़ी कँटीली लगने लगती हैं। मद से अलसाई हुई रसीली स्त्रियाँ प्रियंगु, कालीयक और चंदन मिले केसर के घोल में कस्तूरी मिलाकर अपने गोरे-गोरे अंगों पर चंदन का लेप लगाने लगती हैं। अपनी प्रियाओं-पत्नियों से दूर रहने के कारण जिनका जी बेचैन हो रहा है, वे यात्री जब मंजरियों से लदे हुए आम के पेड़ों को देखते हैं तो अपनी आँखें बंद करके रोते और पछताते हैं कि कहीं मंजरियों की भीनी-भीनी महक उनके रोम-रोम को मदिर न कर दे, आकुल न कर दे और विह्वल न कर दे।

***प्रस्तुति : नलिनी मिश्र***
ए-१/६३, ऐक्टर-बी,
अलीगंज, लखनऊ-२२६०२४
दूरभाष : ९९८४७६२६५८

**दोहा**

# सरस्वती वंदना

● **सुरेश चंद्र निशिकर**

बजा दो माँ वीणा के तार।
झंकृत कर दो तन-मन ऐसे, बहे करुण रसधार।

देवी ऐसी तान सुना दो,
अंधकार को दूर भगा दो।
जीवन में अमृत बरसा दो,
सूखे उपवन को सरसा दो।
पीड़ित मानवता के उर में, ला दो नई बहार।

बजा दो माँ वीणा के तार।
झंकृत कर दो तन-मन ऐसे, बहे करुण रसधार।

टूटे ईर्ष्या द्रोह की कारा,
लोभ-मोह का बंधन सारा।
बहे प्यार की अविरल धारा,
निर्बल नर को मिले सहारा।
जब गूँजे भू-नभ में तेरी वीणा की झंकार।

बजा दो माँ वीणा के तार,
झंकृत कर दो तन-मन ऐसे, बहे करुण रसधार।

३४ बी/बी-५ धवलगिरि अपार्टमेंट
सेक्टर-३४, नोएडा-२०१३०१
दूरभाष : ०९६५०४३०३२५

कहानी

# देहदान

● मनोहर पुरी

सुपरिचित साहित्यकार। उपन्यास, व्यंग्य-संग्रह, कहानी-संग्रह, कविता-संग्रह, लघु-काव्य के अलावा समीक्षात्मक ग्रंथ एवं अनेक पुस्तकें (हिंदी-अंग्रेजी) प्रकाशित। विगत चार दशकों से पत्रकारिता के क्षेत्र में सक्रिय। 'पत्रकार रत्न सम्मान', 'बहुमुखी प्रतिभा रत्न' सहित कई अन्य सम्मान।

बहुत देर से टेलीफोन की घंटी बज रही थी। अपने कमजोर कदमों को घसीटते हुए मास्टर त्रिलोकीनाथ शर्मा अपनी टूटी-फूटी चारपाई से उठकर बहुत कठिनाई से दूसरे कोने में रखी मेज तक पहुँचने में सफल हुए। इतनी दूरी तय करने में ही उनकी साँस धौंकनी की तरह चलने लगी थी। मेज पर पिछले तीस साल से टेलीफोन का एक चोगा रखा था। अस्वस्थ होते हुए भी इसे मास्टरजी नियमित रूप से साफ करते थे। बाहर अधिक सर्दी होने अथवा बर्फ पड़ने पर वह भले ही पूजा करने से पहले नहाने का नागा कर जाएँ, परंतु इस चोगे की सफाई करने से नहीं चूकते थे। हर इतवार को कई बार गीला कपड़ा मार-मारकर इसे चमका देते थे। जब-जब उन्हें अपने प्रवासी पुत्र ललित की याद आती, वह इस चोगे पर प्यार से हाथ फेरकर कल्पना में ही उसका सिर सहला लिया करते थे। वह कभी भी इस मेज और कुरसी पर स्वयं नहीं बैठते थे, जिस पर तीस वर्ष पूर्व उनका पुत्र ललित कुछ दिनों के लिए बैठा था।

तीस वर्ष पूर्व मास्टरजी सहित संपूर्ण गाँव ने गाजे-बाजे के साथ ललित को अपना भविष्य उज्ज्वल करने के लिए अमेरिका विदा किया था। शायद ही कोई ऐसा घर था, जिसका कोई सदस्य उस विदाई समारोह में भाग लेने के लिए गाँव की सीमा तक न पहुँचा हो। आखिर उस छोटे से गाँव के लिए यह एक अभूतपूर्व घटना थी। उस गाँव से तो क्या, अब तक उस पूरे जिले से कभी कोई व्यक्ति अमेरिका नहीं गया था।

मास्टर त्रिलोकी नाथ शर्मा के अथक प्रयासों से जिस वर्ष उनके गाँव में प्राइमरी स्कूल खुला था, उसी वर्ष उनके इसी कच्चे घर में ललित का जन्म हुआ था। उससे पहले शर्माजी को प्रतिदिन मीलों पैदल चलकर दूर गाँव के एक छोटे से स्कूल में पढ़ाने के लिए जाना पड़ता था। उस गाँव में भी मात्र दस-पंद्रह बालक-बालिकाएँ विद्यालय में आते थे। इसके लिए भी मास्टरजी को कितना परिश्रम करना पड़ा था, यह वही जानते हैं। कैसे उन्हें एक-एक घर का दरवाजा खटखटाकर बच्चों के अविभावकों को इसके लिए मनाना पड़ा था। वास्तव में शिक्षा की हवा अभी तक भारत के इस दूरस्थ क्षेत्र को छू नहीं पाई थी। न ही प्रशासन की ओर से इस दिशा में कोई गंभीर प्रयास हुआ था। जब उस स्कूल में एक समीप के गाँव में रहनेवाले अध्यापक की नियुक्ति हुई तब शर्माजी ने अपने गाँव में स्कूल खुलवाने के लिए सरकार से पत्र-व्यवहार शुरू किया था। गाँव में मास्टरजी ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे, जिन्हें पत्र लिखना आता था। उन्हीं के प्रयासों से उसी वर्ष गाँव में एक उप-डाकघर की भी स्थापना हुई थी। धीरे-धीरे गाँव में थोड़ी-बहुत समृद्धि आने लगी थी और लोगों को शिक्षा का महत्त्व समझ में आने लगा था। संयोग से मास्टरजी के एक पुराने छात्र का पितामह संचार मंत्री बन गया था। उसने न केवल मास्टरजी के घर तक बल्कि हिमाचल प्रदेश के अनेक छोटे-छोटे गाँवों तक टेलीफोन की सुविधा पहुँचा दी थी। अब तक किसी व्यक्ति के घर में टेलीफोन होना बहुत सम्मान की बात थी। मास्टरजी का तो वैसे भी लोग बहुत आदर करते थे।

इस जर्जर-कच्चे से घर से लगती हुई उनके पास तीन बीघा जमीन थी, जिस पर शर्माजी और उनकी पत्नी थोड़ी-बहुत सब्जियाँ पैदा करके कुछ अतिरिक्त कमाई जुटा लेते थे। पाँचवीं कक्षा के बाद ललित अपनी पढ़ाई जारी रख सके, इसके लिए शर्माजी ने उसे अपनी दूर के रिश्ते की एक बहन के पास शिमला के समीप एक कस्बे में भेज दिया था। जहाँ से उसने दसवीं की परीक्षा अच्छे अंकों के साथ उत्तीर्ण कर ली। जब ललित दसवीं पास करके गाँव वापस लौटा, वह दिन गाँववालों के लिए ऐतिहासिक और उत्सव जैसा था। ऐसा उत्सव गाँव में कभी-कभार तब मनाया जाता था, जब वहाँ पर किसी नेता का आगमन होता था अथवा जिस दिन चुनावों के लिए मतदान का दिखावा होता था। चुनाव वाले दिन पूरे गाँव के लिए किसी बाहुबली प्रत्याशी द्वारा खाने और दारू पीने की व्यवस्था की जाती थी। एक ही मतदान केंद्र पर दरोगाजी द्वारा सबके मतों का गुप्त दान हो जाता था।

मास्टरजी के साथ-साथ अब ललित भी उच्च शिक्षा प्राप्त करके कहीं अच्छी नौकरी करने की लालसा मन में पालने लगा था। ललित की माँ जानकी देवी इस बात के पूरी तरह से विरुद्ध थीं। वह किसी भी मूल्य पर ललित को किसी बड़े शहर में भेजने के लिए तैयार नहीं थी। उसका मत था कि यदि एक बार बच्चे को शहर की हवा लगी तो वह अपने माँ-बाप के किसी काम का नहीं रहता, परंतु शर्माजी को अपने दिए गए संस्कारों और ललित की समझ-बूझ पर पूरा विश्वास था।

मास्टरजी ने अपनी पत्नी से असहमत होते हुए दो टूक शब्दों में अपना निर्णय सुना दिया था, 'यदि मेरा मेधावी पुत्र विदेश जाकर भी पढ़ना चाहेगा तो मैं किसी भी सीमा तक जाकर ललित को विदेश भेजने

में आना कानी नहीं करूँगा।' जोश में उन्हें इस बात का ध्यान भी नहीं रहा कि उनकी इतनी औकात ही नहीं थी। आमतौर पर शर्माजी अपनी पत्नी की किसी बात का विरोध नहीं करते थे। ललित के लिए ऊँची शिक्षा का जो यज्ञ त्रिलोकीनाथजी ने करवाया, उसमें उनकी तीन बीघा भूमि सामग्री बनकर स्वाहा हो गई। मास्टरजी के माथे पर एक भी शिकन नहीं आई, जबकि जानकी देवी निरंतर कहती रहीं, 'एक ओर तो हम अपने बेटे से वंचित होने जा रहे हैं, दूसरी ओर जो थोड़ी सी भूमि पुरखों से मिली है, उससे भी हाथ धो बैठेंगे।' शर्माजी को सुनहरे भविष्य के लिए यह सौदा बहुत सस्ता दिखाई दिया था।

दिल्ली शहर की चकाचौंध और हॉस्टल में रहनेवाले समृद्ध सहपाठियों ने ललित की प्रतिभा को देखते हुए उसे अमेरिका जाने के सपने दिखाने प्रारंभ कर दिए। इस प्रकार उन्हें ललित द्वारा तैयार किए जानेवाले 'नोट्स' सहज ही उपलब्ध हो जाते। वह स्वयं भी उड़कर अमेरिका जैसे स्वर्ग में पहुँचने के मनसूबे बनाने लगा। वह दिन-रात पढ़ने लिखने में व्यस्त रहने लगा। उसका इस बात की ओर तनिक भी ध्यान नहीं था कि उसके माता-पिता किस प्रकार अपना पेट काट-काटकर उसकी जरूरतों को पूरा कर रहे हैं। वह तो किसी भी प्रकार देश से बाहर निकल जाने के सपने सँजोने लगा था।

अभी वह बी.कॉम के अंतिम वर्ष की परीक्षा दे ही रहा था कि एक बहुराष्ट्रीय कंपनी ने उसे अमेरिका में जॉब देने का ऑफर दे दिया। अंधा क्या चाहे, दो आँखें। ललित को लगा जैसे लॉटरी निकल आई हो। मास्टरजी को लगा कि हमारे ही नहीं, पूरे गाँव के भाग्य खुल गए। उन्हें लगा था कि अब उनके दलिद्दर के दिन तो समाप्त होंगे ही, गाँव की उन्नति का मार्ग भी खुल जाएगा। उन्होंने कई बार पढ़ा था कि अनेक प्रवासी भारतीय अपने गाँव के विकास के लिए वहाँ से बड़ा मोटा पैसा भेजते हैं। एकल विद्यालयों के विषय में तो उन्हें पक्की जानकारी थी कि उनके लिए अनेक प्रवासी भारतीय धन उपलब्ध करवाते हैं।

अमेरिका में ललित को किसी प्रकार की कठिनाई होनेवाली नहीं थी, क्योंकि जिस कंपनी में उसकी नियुक्ति हुई थी, वहाँ रहने आदि की व्यवस्था करने का सारा दायित्व उसी का था। जल्दी ही ललित के फोन प्रति सप्ताह घर पर आने प्रारंभ हो गए और अपने इस नियम को उसने कभी भंग नहीं किया। शर्मा दंपती इसी बात से प्रसन्न थे कि उनके बेटे का भविष्य बन रहा है और उसने उन्हें भुलाया भी नहीं। जब कभी वह अपने पिता से पूछता कि आपको पैसे की कोई आवश्यकता तो नहीं है, वह अपने स्वाभिमानी स्वभाववश यह कहकर टाल देते कि बेटा जब जरूरत होगी तो तुम्हें ही तो बताएँगे। तुम्हारे सिवा इस दुनिया में हमारा और है ही कौन? हाँ, अपने कुशल-मंगल के बारे में सूचित करते रहना, हम यहाँ पर प्रसन्न हैं। जानकी हर बार यह कहती थी कि जब भी संभव हो, एक बार मिल आओ, परंतु वह किसी-न-किसी बहाने इस बात को अनसुनी कर देता था। ऊपर से प्रसन्न दिखनेवाली जानकी भीतर-ही-भीतर बेटे के गम में घुलने लगी थी। उसका मन कहता था कि अब वह जीवन में अपने बेटे से कभी मिल नहीं पाएगी। इस पर मास्टरजी कहते, 'भली मानस, कुछ दिनों की बात है, उसके पैर जम जाएँ तो वह उसको विवाह के लिए वापस बुला लेंगे और फिर यदि तुम चाहोगी तो वापस नहीं जाने देंगे। बहू बेटे से खूब सेवा करवाना।'

जब कभी उसके रिश्ते की बात होती, शर्माजी गरदन ऊँची करके इनकार कर दिया करते। वैसे भी विदेश में नौकरी कर रहे लड़के का रिश्ता लेकर आनेवाला बहुत सोच-विचारकर ही इतना साहस करता था। एक दिन फोन पर ललित ने बताया कि उसने अपने साथ काम करनेवाली कन्या डॉली जॉनसन के साथ विवाह करने का निश्चय किया है। उसने बताया कि मैं आपके अमेरिका आने की तैयारी कर रहा हूँ। इतना सुनते ही शर्मा दंपती के पैरों तले की जमीन खिसक गई। उन्हें यह स्पष्ट दिखाई देने लगा कि अब उनका बेटा कभी स्वदेश नहीं लौटेगा। मास्टरजी ने उसके माध्यम से इस गाँव और जिले की उन्नति के जो सपने देखे थे, वह ताश के पत्तों की तरह बिखरते दिखाई देने लगे।

जानकी, जो पहले ही उसके गम में घुली जा रही थी, बहुत अधिक चिंतित रहने लगी। उसने चारपाई पकड़ ली। आसपास कहीं अच्छे इलाज की व्यवस्था नहीं थी और शिमला, चंडीगढ़ अथवा दिल्ली जाकर इलाज करवाना उनकी समर्थ्य से बाहर था। सेवानिवृत्त होने के बाद वैसे भी उनका गुजारा थोड़ी सी पेंशन और कुछ बच्चों को ट्यूशन के दम पर होता था। इसके अतिरिक्त दोनों के पास पासपोर्ट तक नहीं थे। यदि किसी तरह पासपोर्ट बन भी जाए और ललित टिकट भेज दे तब भी अमेरिका का वीजा मिलना एक जंग जीतने के समान था। इसके अतिरिक्त जानकी के गिरते हुए स्वास्थ्य और अन्य विवशताओं के सामने उन्होंने हथियार डाल दिए और बेटे-बहू को फोन पर ही आशीर्वाद देकर अपने मन को सांत्वना दे ली। अपने जाननेवालों और गाँववालों को भी मास्टरजी ने समझा दिया कि बेटे की जिद के बावजूद वह लोग वीजा न मिलने के कारण अमेरिका नहीं जा पा रहे।

अब तक ललित ने एक बार भी कभी भारत आने की बात नहीं की थी; बल्कि एक बार जब गाँव के निवासियों ने मिलकर गाँव की सौवीं वर्षगाँठ पर उसे सम्मानित करने का कार्यक्रम बनाया तब भी उसने कह दिया कि ऐसे छोटे-मोटे सम्मान का उसके जीवन में कोई महत्त्व नहीं है। वह अमेरिका में बहुत अच्छी कंपनी में, बहुत ऊँचे पद पर काम कर रहा है, इसलिए अब वह भारत आना ही नहीं चाहता। अपनी इज्जत बचाने के लिए मास्टरजी ने गाँववालों से माफी माँगते हुए कह दिया था, अपनी व्यस्तताओं के कारण उसका भारत आना संभव नहीं है, परंतु यह बात

उन्हें बहुत अंदर तक चुभ गई थी।

जल्दी ही डॉली गर्भवती हो गई। अब उसे अपनी माँ सरीखी किसी महिला की आवश्यकता का अहसास हुआ, परंतु अब तक जानकी का स्वास्थ्य बहुत गिर चुका था। इसलिए उसका वहाँ जाना संभव नहीं था और वह लोग यहाँ आना नहीं चाहते थे। जिस दिन ललित के यहाँ पुत्र का जन्म हुआ उसी, सप्ताह जानकी अपने बेटे और पोते को देखने की लालसा मन में लिये इस संसार से विदा हो गई। जब इसकी सूचना ललित को दी गई तो उसने कहा, 'ऐसी स्थिति में मेरा वहाँ आना संभव नहीं। वैसे भी अब मेरे आने से होगा क्या। जो होना था हो चुका। जब तक मैं आने की व्यवस्था करूँगा, आप सभी संस्कार संपन्न कर चुके होंगे। वैसे भी मैं ऐसे आडंबरों में विश्वास नहीं करता तो बेकार ही मैं अपना समय और पैसा क्यों बरबाद करूँ।' अब मास्टरजी को अहसास हुआ कि जानकी ठीक ही कहती थी कि एक बार बच्चा बाहर गया तो कभी नहीं लौटेगा, परंतु हमेशा ऐसा तो नहीं होता। अधिकांश युवक निरंतर अपने माँ-बाप से मिलने अथवा उनके सुख-दु:ख में सम्मिलित होने के लिए आते ही हैं। यदा-कदा माता-पिता को भी अपने पास रहने के लिए बुलाते हैं। अब तो ललित के साथ उनका रिश्ता टेलीफोन की एक तार के माध्यम से ही जुड़ा हुआ था। बहुत चाहने पर भी वह इस डोर को तोड़ना नहीं चाहते थे। उनका दुनिया में कोई और था ही नहीं। हमेशा हँसमुख रहनेवाले मास्टरजी गुमसुम रहने लगे और किसी-न-किसी प्रकार जीवन के शेष दिन अपनी संगनी के अभाव में अकेले ही काटने लगे। उनका बलिष्ठ शरीर अब पहले जैसा नहीं रहा। फिर भी वह किसी प्रकार अपनी पेंशन और अड़ोस पड़ोस की कृपा, सहायता अथवा सहयोग पर आश्रित होकर जीवन व्यतीत करने लगे। ललित की ओर से उनका मन बहुत खट्टा हो गया था, परंतु वह इसे जाहिर करना नहीं चाहते थे। उन्होंने टेलिफोन के इस चोगे को ही अपना पुत्र मान लिया था, जिसके साथ वह अपना सुख-दु:ख बाँट लेते थे। कभी हँस लेते थे और प्राय: चुपचाप रो लिया करते थे। यदा-कदा ललित औपचारिकतावश यह पूछ लिया करता था कि उन्हें पैसे की कोई जरूरत तो नहीं, परंतु अपने आप उसने कभी यह नहीं सोचा कि आखिर मेरे जन्मदाता की हालत क्या होगी और उनका गुजारा कैसे चलता होगा?

कँपकँपाते हाथों से उन्होंने टेलीफोन का चोगा उठाया तो ललित ने बहुत हर्ष भरे स्वर में कहा, 'पिताजी, आपका पोता इतना बड़ा हो गया है कि अपनी गर्लफ्रेंड के साथ दक्षिणी अमेरिका के कुछ देशों में भ्रमण के लिए गया है। वह तो चाहता था कि वह एक बार भारत आए और अपने पिता के गाँव को देख ले, परंतु मैंने ही समझाया कि अपनी इस गर्लफ्रेंड को लेकर उस गंदे से गाँव में जाकर क्या करोगे और वहाँ जाकर कहाँ ठहरोगे। आस-पास कोई पाँच सितारा होटल भी तो नहीं है। फिर इस आयु में आपको भी असुविधा होती। इसका ध्यान करके मैंने ठीक निर्णय लिया न पिताजी।'

'हाँ बेटा, आपका फैसला तो हमेशा से ही ठीक रहा है। मैंने भी गत दिनों एक निर्णय किया है, ताकि मेरे बाद आपको किसी प्रकार का कष्ट अथवा समस्या न हो। गत दिनों हमारे गाँव में एक कैंप लगा था, उसमें मैंने अपनी देह का दान कर दिया है।' इतना कहकर मास्टरजी ने फोन काट दिया और अपने कमजोर हाथों से झुर्रियों में लुप्त होने से पहले ढलकते आँसुओं को पोंछ लिया और निढाल होकर पहली बार उस कुरसी पर बैठ गए।

८२, साक्षर अपार्टमेंट्स,
ए-३, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-११००६३
दूरभाष : ९८१०३९५२२३

# भूख

कविता

● सितम सागर वेदवाक्

भूखे को न दे सके कोई निवाला कभी,
प्यासे को न दे सके कोई प्याला कभी।
बिक जाती है भूखे की तसवीर लाखों में,
लेकिन उस बच्चे को न कोई पाला कभी।

पूछते नहीं हैं लोग यहाँ हुआ क्या,
कोई करता नहीं है इनके लिए दुआ क्या।
डॉक्टर भी रोने लगा जब पूछा एक बाल-मजदूर ने,
मिलेगी भूख मिटाने की कोई दवा क्या?

स्टेशनों पर लोगों के पाँव पकड़ लेते हैं,
कुछ खाने के खातिर वो हाथ जोड़ लेते हैं।

कहीं मिलती है गाली, कोई देता है धक्का,
मजबूर हो वह खाली थैली भी जकड़ लेते हैं।

दर-दर भटकते फिरते हैं कुछ पाने को,
होटलों में छोड़ जाते हैं लोग खाने को।
ये तो अपनी-अपनी किस्मत की बात है,
किसी को कदर ही नहीं
तो कोई तरसता है एक दाने को॥

ग्राम-टिटिलागढ़
डी.ए.वी. कॉलेज कॉम्प्लेक्स के निकट
पोस्ट-भाटिपारा, जिला-बोलंगीर-७६७०४२ (उड़ीसा)
दूरभाष : ८०१८०५७२२४

# तुम हर बगिया को दो बहार

● रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'

सुपरिचित कवि-गीतकार। १२६ मौलिक ग्रंथ, जिनमें पाँच प्रबंध-काव्य, दस गीत-संग्रह, पाँच नई कविता, दस नाटक, चार कथा-साहित्य, पाँच निबंध-संग्रह, बारह शोध एवं आलोचना-ग्रंथ प्रकशित। भारत सरकार से नाटक-पुरस्कार, राजस्थान साहित्य अकादमी से तीन बार काव्य-पुरस्कार तथा अन्य अनेक सम्मान। कई देशों की यात्रा। संप्रति भीली भाषा पर शोध एवं स्वतंत्र लेखन।

### नए वर्ष के अभिनंदन में

बहुत हो चुका, अब रोको रथ हिंसा और अनय का।
नए वर्ष के अभिनंदन में, खोलो द्वार अभय का।
जिन कदमों से रौंद रहे तुम मानवता की थाती।
यह धरती उनको मंजिल तक कभी नहीं पहुँचाती।
कितने डूबे चुके, डूबोगे, पंथ नहीं यह जय का।
नए वर्ष के अभिनंदन में, खोलो द्वार अभय का।

नई सदी में नव प्रकाश ले नया वर्ष फिर आया।
चारों ओर नए जीवन का सर्जन-स्वर लहराया।
नागासाकी-हिरोशिमा से, सीखो पाठ समय का।
नए वर्ष के अभिनंदन में, खोलो द्वार अभय का॥

उठें जहाँ भी हाथ प्रेम के, तुम भी हाथ मिलाओ।
तोड़ो सभी कलुष-मन-बंधन, जीवन-ज्योति जलाओ॥

संवेदन के महासिंधु से, मुक्ता चुनो विनय का।
बहुत हो चुका अब रोको रथ, हिंसा और अनय का॥

गाता-गाता गया कबीरा, एक राह सब आए।
नवल वर्ष की नई सुबह यह, सारे भेद मिटाए।

शंख बजे समता-ममता का, वंदन करो उदय का।
नए वर्ष के अभिनंदन में, खोलो द्वार अभय का॥

### गंदा न करो सरयू पानी

ये गीत तुम्हारे लिए लिखे,
गाओ सरगम-झंकार दिखे।
मैंने वसंत के फूलों से,
भावों का बाग सजाया है।

है प्यार देश की माटी से,
नदियों की बीहड़ घाटी से।
खादर में गायों का चरना,
खेतों में फसलों का झरना।
डाली-डाली पर बागों ने,
मधु मौसम-राग बजाया है।

श्रावण, होली, दीवाली का,
त्योहार ईद खुशहाली का।
हर गली प्रेम सरसाता है,
सब गाँव मल्हारें गाता है।
जो चाँद गगन के लिए दूर,
वह यहाँ चाँदनी लाया है।

गंगा धरती पर बहने दो,
यमुना को निर्मल रहने दो।
गंदा न करो सरयू-पानी,
तुम से कहता हूँ विज्ञानी!
कोकिल-कंठी मंजरियों का,
संदेश भ्रमर फिर लाया है।
मैंने वसंत के फूलों से,
भावों का बाग सजाया है।

### हर बगिया को दो बहार

तुम हर बगिया को दो बहार,
हर पतझर में मधुमास बनो।
जो गली भरी हो काँटों से,
चुन-चुनकर सुमन बिछा दो तुम।
जो कूल भटकते मिलने को,
बन जीवन-धार मिला दो तुम।
हर ओर फैलते मरुथल में,
हरियाली का त्योहार बनो।

कुछ उतर अहं के शिखरों से,
धरती की प्यास बुझाओ तुम।
निर्झर बन सकते नहीं अगर,
तो बादल बन लहराओ तुम।
हर एक कली को मौसम दो,
हर डाली का शृंगार बनो।
जो जीवन बाँहें फैलाकर
हर समय बाँटता प्यार तुम्हें,
क्या हुआ अगर वह देता है
दो क्षण को सिर का भार तुम्हें।
हर थके चरण को छाया दो
हर रुकी साँस की राह बनो।

मत छीनो कोकिल का मधु स्वर
तुम अपनी बीन बजाने को।
मत लूटो माली की मेहनत
तुम अपना गला सजाने को।

हर शब्द गीत, हर भाव सुमन,
बन जाए, ज्योति का दान बनो।

जिसकी श्रद्धा मिट्टी को भी
देवता बनाती रहती है,
अर्चना हर्ष के आँसू बन
जिसकी आँखों से बहती है।

दानव की घृणा न दो उसको,
बन सको अगर, भगवान् बनो।

तुम हर बगिया को दो बहार,
हर पतझर में मधुमास बनो।

सी-७१२, गरिमा विहार, सेक्टर-३५,
नोएडा-२०१३०७ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९२१०८६२९६८

# पाठालोचन : प्रो. डी.एल.एन. के स्मृतिपूर्ण मार्गदर्शन के साथ

● बी.वाई. ललितांबा

मैसूर के महाराजा कॉलेज की विद्वत्ता का एक संभ्रांत इतिहास है। कन्नड़ भाषा के ही नहीं, विद्वत्ता की खान उस महाविद्यालय में उसके नाम की सार्थकता उस बीसवीं सदी में भी थी। कहाँ वह भारत का गौरव, महान् शिक्षक सर्वपल्ली राधाकृष्णन, वह राष्ट्रकवि कुवेम्पु, प्रो. एस.बी. रंगण्णा, प्रो. राघवाचार, प्रो. रामचंद्र राव गिनते जाओ, गिनते ही रह जाओगे, वह शैक्षणिक वातावरण, सांस्कृतिक हावभाव; इन सबके बीच वह कन्नड़ विभाग के प्रोफेसर लोग 'सरस्वती श्रृति महती महीयताम्' आज भी महाराजा कॉलेज की सीढ़ियों के बीच बैठी मंदस्मिता महती सरस्वती शान से विराजती है।

उसी महाराजा कॉलेज के दो दिग्गज विद्वान्, कन्नड़ विभाग के आचार्य ती.नं. श्रीकंठय्या और डी.एल. नरसिंहाचार थे। दोनों के बीच वह आदरभाव, सख्य भाव एक आदर्श गुरुकुल की याद दिलाता है। उनके आश्रम में पढ़े विद्यार्थी आज तक अपनी विद्वत्ता और सामर्थ्य को संसार के चारों ओर फैला रहे हैं। आश्चर्य की बात, वह सौ प्रतिशत 'ए' क्लास विद्यार्थी साहित्य और भाषा विज्ञान प्रशासन, भाषण कला सभी में विद्वान्, ऐसे गुरु मनीषियों में से डी.एल. नरसिंहाचार एक सरल जीव शोध की सभी दिशाओं के उद्भट विद्वान् द्वारा रची 'कन्नड़ पाठ संपादन' वाली पुस्तक का आज भी कोई सानी नहीं।

ती.नं. श्री ने भारतीय काव्य मीमांसा ग्रंथ की रचना कर कन्नड़ भाषा के विद्यार्थियों के लिए काव्यशास्त्र और रस सिद्धांत को सरल-सुगम बनाया तो डी.एल.एन. ने पाठालोचन पर 'कन्नड़ ग्रंथ संपादन' पर एक कालजयी ग्रंथ की रचना कर पाठालोचन को, उसके इतिहास को कन्नड़ के विद्यार्थियों को सुलभ बनाया।

प्रो. डी.एल.एन. मेरे गुरु थे। गुरु कहते ही उनका वह कायिक-बौद्धिक चेहरा सामने आ खड़ा होता है। अभूले-अमिट वह पारंपरिक तिलक, धोती, कमीज, कोट, टोपी; प्रोफेसरवाले उनके उस छोटे से कमरे में बैठकर विद्यार्थियों को बढ़ाते समय दर्शित उनकी सहज आत्मीयता व आदरणीय व्यक्तित्व अभूला है। पढ़ाने में कोई दिखावा नहीं, सहज शोधात्मक, गवेषणात्मक दृष्टि, कोई भी विषय पढ़ाने को तैयार, लगता भी नहीं था कि लोग बैठकर उनके आश्रम में पढ़ रहे हैं। इस प्रकार के प्रोफेसर आजकल बहुत कम मिल पाते हैं, उनके स्मरण के साथ उनसे रचित उक्त ग्रंथ के कुछ अंशों का आधार ग्रहण कर पाठालोचन को परिभाषित कर कुछ प्रमुख बिंदुओं को प्रस्तुत करने का यहाँ उद्देश्य है।

सुपरिचित लेखिका। 'हिंदी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति', 'तुलनात्मक साहित्य', 'तुलनात्मक भाषा', 'अनुवाद एवं अनुवाद कला', 'अनुप्रयुक्त भाषा एवं समाज भाषा विज्ञान' समेत लगभग पचास ग्रंथ प्रकाशित। कन्नड़ से हिंदी में अनुवाद। दो सौ से ज्यादा शोध। 'गणेशशंकर विद्यार्थी पुरस्कार' समेत लगभग दो दर्जन पुरस्कार प्राप्त।

## पाठालोचन पूर्व-पश्चिम और संभावनाएँ

पाठालोचन को कन्नड़ भाषा में 'ग्रंथ संपादन' कहा जाता है और अंग्रेजी में टेक्सचुअल क्रिटिसिज्म कहते हैं। अपने समय में हमने अंग्रेजी के ए.ए रिचर्डस के 'टेक्सचुअल क्रिटिसिज्म' नामक ग्रंथ के बारे में सुना भी था।

चूँकि अपनी छात्र दशा में इसको एक अध्ययन का विषय नहीं बनाया था। इस विषय की हमें एक अध्यापक से स्थूल जानकारी मिली थी। पौर्वात्य और पाश्चात्य देशों में काफी समय से इस दिशा में गंभीर चिंतन जरूर हुआ है।

पाठालोचन का उद्देश्य स्पष्ट है—मूल पाठ की सुरक्षा। प्राचीन ग्रंथों की पाठ परिशुद्धता की सुरक्षा। ऐसे समय में, जबकि लिपि का चिंतन और विकास नहीं हुआ था और लिखने के लिए कागज की खोज नहीं हुई थी, प्राचीनकाल के चिंतक-मनीषियों ने वाचन की परंपरा को गठित किया था।

इस परंपरा में दो तकनीकों का महत्त्व था—एक तो अनुकरण व अनुरणन। इस परंपरा में निरंतर अभ्यास और विद्यार्जन के लिए पूर्ण कालावधि समर्पण आवश्यक था। इस कारण समाज का एक वर्ग इस कार्य के लिए समर्पित था।

भाषा चूँकि पैतृक संपदा नहीं और वैयक्तिक ध्वनि यंत्रों द्वारा मूल पाठ का अनुकरण होता था, भाषा कभी स्थिर या शून्य नहीं हो सकती, मूल पाठ में ध्वन्यंतर का होना स्वाभाविक हुआ करता है।

भारतीय जीवन में इस कारण ग्रंथ संपादन के कई मजबूत तरीके अपनाए गए। वेदों का हर शब्द, समास, प्रत्यय और अक्षर बिना किसी परिवर्तन के आज तक सुरक्षित होते हुए आए हैं।

आज तक इस अर्थ में, हालाँकि वेद ग्रंथस्थ हो चुके हैं, तब भी

गुरु-शिष्य परंपरा में गुरु मुखेन वेदों के स्वर पाठ की और मूल ग्रंथों की सुरक्षा होती आई है।

वेदोच्चारण में क्रम पाठ, पद पाठ, जटा पाठ, धन पाठ आदि क्रम अपनाकर पाठों की सुरक्षा हुई है। 'पद पाठ' यानी हर शब्द को उसकी पिछली और अगली संधि, समास, प्रत्यय आदि को विश्लेषित कर उच्चारण करना है। एक ही शब्द को उसके पिछले शब्द के साथ जोड़कर, एक बार उसके अगले शब्द के साथ जोड़कर, दूसरी बार उसका उच्चारण करना क्रम पाठ होता है। जैसे समझ लीजिए—ए, बी, सी, डी नामक चार शब्द हैं, उन्हें एबी, बीसी, सीडी कहकर उसका पठन करना।

जैसे संगीत की पहली कक्षा में एक विद्यार्थी को अष्टताल के साथ जोड़कर 'सा रे ग म प ध नि सा, सा नि धा प म ग रे स' को द्वितीय तृतीय चतुर्थ आवृत्तियों में दो-दो, तीन-तीन तथा पूर्ण पंक्तियों की पुनरावृत्ति द्वारा राग और कंठ पाठ की शिक्षा दी जाती है, उसके बोध से पूर्व वेदों के उच्चारण में पहली बार अनुलोम, दूसरी बार विलोम, तीसरी बार अनुलोम द्वारा उच्चारण किया जाता है। फिर जटा पाठ में ए बी, बी ए, बी सी, सी बी, बी सी के रूप में उसके उच्चारण को देखा जा सकता है। 'अग्नि मीळे पुरोहितम्' को इस दृष्टि से उच्चारण कर पद पाठ की सुरक्षा पर ध्यान दिया जा सकता है।

'जटा पाठ' के बाद धन पाठ की बात आती है। इसमें आठ प्रकार का क्रम अपनाकर वेदपाठ की सुरक्षा की गई है। इस क्रम को वेदाध्ययन में उदात्त-अनुदात्त और स्वरित के रूप में पहचाना गया है। एक ऊपर की ध्वनि, मध्यमा तथा निचली ध्वनि। संगीत के अभ्यासी को यही 'आरोह-अवरोह' के रूप में सिखाया जाता है।

'धन पाठ' में ए बी, बी ए, ए बी सी, सी बी ए, ए बी सी और बी सी, सी बी, बी सी डी आदि क्रम अपनाए जाते हैं।

वेद यद्यपि प्रमुख रूप से चार माने जाते हैं, ऋग्वेद में कुल १०१७ अथवा १०२३ सूक्त हैं। सामवेद के ऋक् में ७५ को परे रखकर बाकी सब ऋग्वेद से ही लिए गए हैं। यजुर्वेद के ऋक् में करीब ७०० ऋग्वेद के ही हैं, बाकी सब या तो गद्यभाग हैं या सूक्त। अथर्ववेद में ७३० सूक्त और ६००० ऋक् हैं। इनमें भी १२०० ऋक् ऋग्वेद से ही लिए गए हैं। अथर्ववेद में दो-तिहाई अंश गद्य में हैं। इस कारण विद्वानों के मतानुसार ऋग्वेद पाठ सीखकर बाकी अंशों को आसानी से पठन कर सकते हैं।

वेदों के अलावा भारतीय पुराण ग्रंथों की सुरक्षा भी वाचन के माध्यम से होती आई है। अंतर मात्र यह है कि रामायण और महाभारत के लिए वेदों के पठन का क्रम नहीं अपनाया गया। इस कारण पाठालोचन की समस्या उद्‌भूत हुई। प्राय: यह भी हुआ होगा कि इनको वेदों की तुलना में उतना पवित्र नहीं माना गया, हर व्यक्ति के जीवन की साधना का अथवा अज्ञात को खोज निकालने की दिशा में प्रयत्न नहीं हुआ।

एक और बात भी कि ये दोनों बृहदाकार ग्रंथ थे। पीढ़ियों के साथ भाषा का प्रवाह और नई भाषाओं का जन्म और नई संस्कृतियों के साथ संपर्क के कारण भी मूल पाठ की सुरक्षा में कठिनाई आई होगी।

अध्ययन तथा जन-जीवन के साथ जोड़कर देखने से भी पता चलता है कि जमीनी जन-जातियों के जीवन के साथ जुड़कर कई प्रकार की रामायण और महाभारत की कथाओं का विकास हुआ है और होता रहा है। इसके अलावा भारत में लिपियों के ईजाद से भी ग्रंथों को लिपिबद्ध करने की परंपरा का आरंभ हुआ होगा। पीढ़ी-दर-पीढ़ी वाचन के माध्यम से बहते आए इन पुराण ग्रंथों में मूल रूप की सुरक्षा नहीं हुई होगी।

'निघंटु'—कोश का पर्यायवाची शब्द है; पाठ अथवा ग्रंथ संपादन के कार्य में मूल पाठ की सुरक्षा के उद्‌देश्य से कोशों की रचना का महत्कार्य जो हुआ, इसे एक ऐतिहासिक घटना माना जा सकता है। 'निघंटुओं की व्याख्या भी इसी उद्‌देश्य से लिखी जाती रही। उदाहरण के लिए, यास्काचार्य रचित निघंटु और उस पर देवराज यज्वन द्वारा रची गई व्याख्या।

यज्वन द्वारा दी गई एक व्याख्या हमें प्राप्त होती है। वह कहते हैं, हस्तलिखित प्रतियों में कुछ अर्थों को देते समय लेखक ने कुछ शब्दों को ज्यादा डाल दिया है, कुछ और प्रतिलिपियों में कुछ शब्द लुप्त हो गए हैं। कुछ अन्य प्रतिलिपियों में मूल शब्दों को हटाकर, कुछ दूसरे शब्दों को जोड़ा गया है; अक्षर बदल गए हैं, इस तरह कोशों में बहुत अव्यवस्था बनी हुई है, इन हस्तलिखित प्रतिलिपियों में नियमों का पालन नहीं हुआ है, निर्वचन का स्वरूप शास्त्रीय स्वरूप का नहीं, इस कारण नैघंटिक खंड जैसे नष्ट स्वरूप का बना हो।

वह यह भी कहते हैं कि अपने वंश में निरंतर शास्त्राध्ययन होता रहा है, वेंकटाचार्य के पुत्र माधव द्वारा रचित भाष्य ग्रंथ में नाम आख्यात, स्वर निपात, वाक्य रचना आदि का क्रम सोचकर कई प्रदेशों से लाई गई कई हस्तलिखित प्रतियों का परीक्षण कर पाठ को परिशुद्ध बनाया गया है। देवराज यज्वन ने अपने समय से पूर्व के व्याख्याकार स्कंद स्वामी, भट्ट भास्कर मिश्र, माधव आदि द्वारा दिए गए अलग-अलग पाठों को अंकित किया है और साथ ही उसके पाठ को शुद्ध बनाने का प्रयत्न किया है।

यही नहीं, भारतीय वेदांत की परंपरा में भी हमें निरंतर पाठ परिशुद्धि के कई निदर्शन मिलते हैं।

तेरहवीं सदी में मध्वाचार्य ने अपने 'भारत तात्पर्य निर्णय' नामक ग्रंथ में लिखा है—

*क्वचित् ग्रन्थान् प्रक्षिपंति क्वचित् अंतरितानपि।*
*कुर्यु: क्वचिच्व्यत्यासं प्रमादात् क्वचिदन्यथा॥*
*अनुत्पन्ना अपि ग्रन्था व्याकुला इति सर्वश:।*
*सत्सन्ना: प्रायश: सर्वे कोट्‌यंशेपि न वर्तते॥*

उस पर वादिराज तीर्थ अपनी व्याख्या देते हैं। तात्पर्य यह कि मूल पाठ के साथ प्रक्षेपों को जोड़ने और उसे शुद्ध पाठ के संपादन की कोशिश हमारे यहाँ पहले भी होती आई है। प्रश्न यह उठता है कि पाठालोचन की नौबत क्यों आती है।

चिंतकों के अनुसार इसका कारण एक तो दुर्मति होती है; दूसरा यह प्राचीन ग्रंथों का आधार ग्रहण कर अपने मत-धर्मों के प्रचार हेतु कुछ अपने श्लोकों की रचना कर, मूल ग्रंथ में जोड़ देना और अपने वाद

की पुष्टि में मूल ग्रंथ की कुछ ऐसी बातें, जो अपने धर्म के विरुद्ध हो, उसे छोड़ देना; कहीं कही गई बात को दूसरी जगह मोड़कर लिख देना आदि। और कई बार ऐसा भी होता है कि विद्वान्, नकलकार अनजाने अथवा अपने ज्ञान को जोड़ने के लिए भी मूल पाठ को मिटा देते हैं।

यह भारतीय पाठालोचन का स्वरूप रहा। पाठालोचन की आवश्यकता के कुछ उदाहरण रहे तो पाश्चात्य साहित्य में भी इसके अपवाद बहुत कम मिलते हैं, पश्चिम के साहित्य में एक तो ईसाई धर्मग्रंथ बाइबिल है, दूसरी तरफ ग्रीस के साहित्य में उपलब्ध काव्य, नाटक, शास्त्र, रोमन साहित्य, संस्कृति और यहूदी संस्कृति के तीन प्रवाह हमें प्रमुख रूप से दिखाई देते हैं।

**आज के संदर्भ में इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के साधन से रिकॉर्ड ध्वनिमुद्रण सुलभ साध्य बना है। लोक जीवन में पारंपरिक गायकों के कई परिवार हैं, जो गाते हुए लोककाव्यों को सुरक्षित रखते हैं। इन लोक-वाचक काव्यों के संपादन में एक कठिनाई यह आती है कि वाचन की शैलियाँ और कथा-स्वरुपों में भिन्न परिवार और भिन्न स्थानों के अनुसार अंतर आता है। समस्या यह कि किसे प्रामाणिक माना जाए?**

इन तीनों से संबंधित साहित्य की मात्रा बहुत बड़ी व विस्तृत है। इन सबके अध्ययन-पाठालोचन की वहाँ पुरानी परंपरा है। उदाहरण के लिए, कहा जाता है कि मिस्र के राजा टालेमी प्रथम के समय से ही यानी ई.पू. ३२३-२८५ तक ग्रंथ संपादन का कार्य संपन्न हो चुका था। जीनोडोटस टालेमी के दरबार का एक नामी विद्वान् था। उसने होमर के काव्यों का एक शब्दकोश तैयार किया था। उसने ई.पू. २७४ करीब ईलियड और ओडिसी काव्यों की पुरानी प्रतियों के आधार पर उसका पाठ संपादन किया था। उसने इन काव्यों को २४ अध्यायों में बाँटा था। प्रक्षेपवाली पंक्तियों को (+) निशान बनाकर दिखाया था।

जीनोडोटस का शिष्य अरिस्टोफेनिस था। उसने प्रक्षेपों को ही नहीं, ग्रंथ संपादन में कई पहचान, संकेत-चिह्नों को ईजाद किया। नक्षत्र का चिह्न, जहाँ अर्थ अस्पष्ट हो, ? का चिह्न, प्रक्षेप अधिक हों, उनको अंकित करने और पुनरुक्तियों के लिए '›' चिह्नों का उसने प्रयोग किया।

उसका शिष्य था अरिस्टर्कस। कहते हैं, उसने अलेक्सांड्रिया शहर में व्याकरण ग्रंथ संपादन की एक पाठशाला खोली थी। उसमें ४० विद्यार्थी थे। होमर के काव्यों का इसने दोबारा संपादन किया था।

जिन संकेत चिह्नों का उपयोग किया गया, वे निम्नानुसार हैं—

(१) + (कटार का संकेत चिह्न) प्रक्षेप पंक्तियों को इंगित करता है।

(२) › (वाण का संकेत) : भाषा, विषय में प्रक्षेप।

(३) › जीनो और अरिस्टार्कस के पाठ भेदों को दर्शित करता है। दोनों के विचारों में अंतर दर्शित करता है।

IV * अन्यान्य स्थानों पर पुनरावर्तित चरण

V * (Sigma) प्रक्षेप का संदेह सूचक

VI B (Anti Sigma) पदक्रम में हेराफेरी को दर्शित करता है।

इसके पाठालोचन के प्रमुख अंश निम्नानुसार हैं—

(१) होमर के भाषा वैलक्षण्य का गहरा अध्ययन

(२) प्रतिलिपियों के आधार पर ही निर्णय पर पहुँचते हैं; विरोधी पाठ के रहते उसी कवि के अन्य प्रयोगों को देखना; उहा को आधार बनाकर परिवर्तन सुझाते समय तटस्थ रहने की सावधानी बरतना।

(३) विषय विस्तार के लिए उसके द्वारा लिखी गई टिप्पणियाँ। इसने जो पाठ शुद्धि का क्रम अपनाया है, वह दूसरे लोगों की तुलना में काफी शास्त्रीय स्वरूप का है। उसने अपने संपादन कार्य में दो तरीके की हस्तलिखित प्रतियों को आधार बनाया। एक तो उसके स्वामी के नामवाला और दूसरा, जहाँ जिस प्रदेश में मिले हैं, उसका उसमें उल्लेख हो। उसने इसके अलावा अपने समय में प्रचलित पाठों की प्रतियों का भी उपयोग किया।

पाठालोचन संबंधी उपरोक्त पाश्चात्य रीतियों की यह एक पीठिका मात्र है, उसका अपना लंबा इतिहास है। आलेख की सीमा के कारण यह आरंभिक उल्लेख मात्र है। फिर स्वाधीन भारत में और बीसवीं सदी के आरंभकाल से ही साहित्य प्रेमियों ने कई तरह के प्रयत्नों से ग्रंथालोचन का कार्य किया है, दुर्लभ ग्रंथों को लक्ष्य बनाया है।

यहाँ के लोकजीवन में आज भी वाचकीय परंपरा में कई लोककाव्य बिखरे पड़े हैं। बोडो रामायण, भीलोनु भारथ, कन्नड़ में कई लोक महाकाव्य जैसे मंटेस्वामी पद, मले मादेश्वर काव्य, जनपद रामायण, जनपद महाभारत, निमाड़ का सिंगाजी महाकाव्य; ये कुछ उल्लेख मात्र हैं, जिन सबका संपादन समकालीन विद्वज्जनों ने किया है।

आज के संदर्भ में इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के साधन से रिकॉर्ड ध्वनिमुद्रण सुलभ साध्य बना है। लोक जीवन में पारंपरिक गायकों के कई परिवार हैं, जो गाते हुए लोककाव्यों को सुरक्षित रखते हैं। इन लोक-वाचक काव्यों के संपादन में एक कठिनाई यह आती है कि वाचन की शैलियाँ और कथा-स्वरूपों में भिन्न परिवार और भिन्न स्थानों के अनुसार अंतर आता है। समस्या यह कि किसे प्रामाणिक माना जाए?

ऐतिहासिक दृष्टि से और कथा-भाषा की दृष्टि से आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इसी उद्देश्य से पृथ्वीराज रासो को अर्ध-प्रामाणिक कहा और वीसलदेव रासो को अप्रामाणिक माना। वर्तमान समय में उपरोक्त तथा अन्याय लोक काव्यों के संपादन में उपस्थित विभिन्न स्वरूपों को यथावाचकीय स्वरूप में ही संपादित किया जा रहा है। साहित्य अकादेमी ने भी लोनु भारथ के संपादन में यही क्रम अपनाया है।

मध्य प्रदेश की आदिवासी लोककला अकादमी ने पिछले वर्षों में, लोकजीवन में उपलब्ध इस प्रकार के कई लोककाव्यों का संकलन कर जनता को उपलब्ध कराया है। दक्षिण कन्नड़ जिले में एक भूताराधन की परंपरा है। आदिवासी जीवन का यह आराधन होता है। यह एक प्रकार से लोक रंगमंच का स्वरूप भी माना जा सकता है। इसमें काव्य नाम की वस्तु के अभाव में भी भूत के लिए प्रयुक्त भाषा अपरूपी होती है, जिसका सामाजिक भाषा से कोई संबंध नहीं होता।

इस प्रकार के लोकनाट्य संबंधी तत्त्वों का ग्रंथ संपादन अत्यंत

कठिन कार्य हुआ करता है। जापानी 'नो' मंच की इससे तुलना की जा सकती है।

भूताराधन की विषयवस्तु उसके अर्थात् भूताराधन के भेद, जैसे जालाटा उसका एक भेद है। उसके पात्र, उनका समय संदर्भ के साथ महत्त्व, उसमें प्रयुक्त परंपरा आदि सबको ग्रंथस्थ किया है, मंगलूर विश्व विद्यालय के कुलपति चिन्नप्प गौड़ा ने। भूताराधन कई प्रकार के होते हैं, उनके कई नाम होते हैं। उस प्रकार के ग्रंथ का पाठ-संपादन चूँकि अभी तक एक ही व्यक्ति द्वारा हुआ है, प्रस्तुत तसवीर घटित मंचीय स्वरूप का वर्णन आदि द्वारा एक विनूतन रीति अपनाकर हुआ है, वास्तव में आकर्षण का विषय है।

कंप्यूटर-इंटरनेट के आगमन के साथ पाठांतरों का, वाचकीय स्वरूपों की विविधता का आधार बनाकर संपादन किया जाता है, यह तरीका काफी सुविधाजनक माना जा सकता है।

नए युग के साथ, नए उपकरण पाठ संपादन के सुगम मार्ग के द्वार खोल रहे हैं। आशा है, उन वैज्ञानिक तरीकों से हम इतिहास की सही जानकारी पाठ-संपादन को सुगम बना सकती है।

१३०४, प्रथम 'सी' मेन, द्वितीय स्टेज
ब्लॉक-९, नगरभावी, बेंगलुरु-५६००७२
दूरभाष : ९४४८८५६१७४

लघुकथा

# कड़वा सच

● अनिता देवी

सुदक्ष गृहिणी। लिखने-पढ़ने का शौक। पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

घरेलू डॉक्टर के निर्देशानुसार मैं अपनी गरदन के नीचे आइसपैक लगाकर सोई थी, दिनभर के काम से मेरा शरीर सुबह अकड़ जाता था, मैं अपने शरीर के दर्द पर कम ही ध्यान रखती थी, लेकिन मुझे आज निर्मल के पसंद का खाना बनाना था, वह रातभर पढ़ता था और मुझे उसे उसकी पसंद का खाना परोसना चाहिए, इसलिए सुबह जल्दी उठकर मैं भोजन बनाकर उसे सरप्राइज देना चाहती थी, क्योंकि निर्मल अब सी.ए. फाइनल की परीक्षा की तैयारी कर रहा था।

दरअसल, मैं अपनी मनोदशा व शारीरिक व्याधि के बारे में घरवालों को बताकर परेशान नहीं करना चाहती थी और निर्मल ने बताया कि नवंबर माह में उसकी परीक्षा होने के बाद वह ट्रेनिंग पर जाकर छह माह में पूरी करेगा। अब वह बड़ा हो गया था और उसके रिश्ते व सगाई का भी समय आ गया था!

निर्मल मेरा बेटा बड़ा समझदार व सहनशील तथा स्नेह देनेवाला पुत्र मुझे कभी भी बेटी की कमी महसूस नहीं होने देता और मेरे हर कार्य में मदद करता था।

लेकिन मेरे पड़ोस की मेरी सहेलियाँ कहती हैं कि बेटा-बेटा होता है और बेटी-बेटी होती है, उनकी इन बातों से मुझे कभी-कभी क्रोध व दु:ख भी होता है। मेरा बेटा, जो बेटी की तरह मेरा खयाल रखता और कहता कि आप अपनी पसंद का खाना बनाओ, जो भी आप बनाएँगी, वह मेरी पसंद का होगा। वह मुझे एक बेटी का सुख देने के लिए हमेशा तत्पर रहता था; लेकिन सगाई होने के बाद जब बहू घर पर आई तो उसका रवैया बदल गया और वह मुझसे दूर-दूर रहने लगा तो मैंने पूछने की कोशिश करनी चाही, लेकिन मैं पूछ न पाई।

मेरे पति भी उसके व्यवहार से नाराज होने लगे। अब वह अपनी व्यक्तिगत बातें अपनी पत्नी से करने लगा और हमसे दूर-दूर रहने लगा। क्या यही जीवन का 'कड़वा सच' है?

ऐसे कई सवाल मुझे खाए जा रहे हैं और मेरी मानसिक स्थिति खराब होती जा रही है। अत: मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा कि मैं क्या करूँ, क्या न करूँ?

जब मैं और ज्यादा बीमार हुई तो मुझे आई.सी.यू. में एडमिट किया गया था। यहाँ से पूर्ण स्वस्थ हुई तो मेरे बेटे (निर्मल) ने आकर मुझे सारी बात बताई कि मैं ऐसा व्यवहार क्यों कर रहा था। अपनी पत्नी, जो किसी की बेटी है, मैं उसे भी दु:खी व अपनी जन्मदात्री माँ को भी दु:खी नहीं करना चाहता था, इसलिए मैं दोनों से सामान्य व्यवहार रखने की कोशिश कर रहा था। मुझे अब पता चला कि बेटे को 'वंश-वृद्धि' का द्योतक क्यों माना गया है। कभी-कभी आज भी मुझे अपने पुत्र के बचपन की आदतों को सोचकर हँसी आ जाती है।

मकान नं. ३५०, बाली रोड, लुनावा
गाँव-लूणावा, तहसील-बाली,
जिला-पाली (राज.)

# मितभाषी, गंभीर और स्पष्ट चिंतन

● **ओमप्रकाश कोहली**

संघ के वरिष्ठ प्रचारक माननीय सोहन सिंहजी का अभाव बेहद खलेगा। वे कार्यकर्ताओं की बात सुनने में ज्यादा रुचि लेते थे। बैठकों में, विशेष रूप से छोटी बैठकों में, उनका आग्रह रहता था कि सभी कार्यकर्ता, यदि यह संभव न हुआ तो अधिक-से-अधिक कार्यकर्ता निस्संकोच अपना मत व्यक्त करें। बैठकों में कार्यकर्ता मौन बैठा रहे और अपना मत अभिव्यक्त न करे, उन्हें यह अच्छा नहीं लगता था। सबकी सुनने के बाद वह नपे-तुले शब्दों में अपना संबोधन प्रस्तुत करते थे और बैठक संपन्न हो जाती थी।

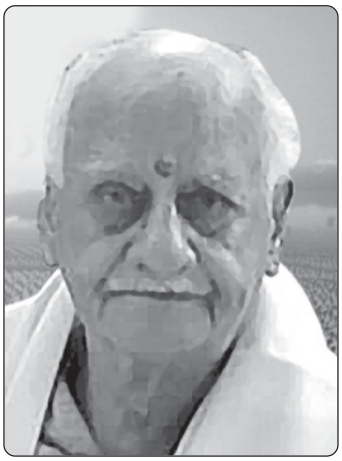

*(स्व. मान. सोहन सिंहजी)*
*(१८ अक्तूबर, १९२३— ४ जुलाई, २०१५)*

मैं वर्ष १९९२ के उत्तरार्द्ध में दिल्ली प्रदेश भाजपा का अध्यक्ष बना। कुछ महीने बाद ही वर्ष १९९३ में लंबे अंतराल के बाद दिल्ली विधानसभा के चुनाव होने थे। चुनाव लड़ने के लिए दिल्ली प्रदेश भाजपा की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। कोष बहुत कम था। वरिष्ठ कार्यकर्ताओं और सहयोगियों से बातचीत कर राष्ट्रीय अध्यक्ष को १ करोड़ रुपए की थैली भेंट करने का निर्णय लिया गया। निर्णय पर प्रदेश कार्यकारिणी ने भी मुहर लगा दी। मुझे ऐसी कल्पना थी कि दिल्ली प्रदेश भाजपा में कई वरिष्ठ नेता हैं, जिनमें धन-संग्रह का सामर्थ्य भी है और वे धन-संग्रह की कला भी जानते हैं। उन्हीं के भरोसे १ करोड़ रुपए की थैली भेंट करने का निर्णय लिया गया था। लेकिन धन-संग्रह के लिए जिन बड़े नेताओं पर मैं निर्भर था, उनका रवैया ठंडा था। परिणामत: धन-संग्रह के काम में उठान नहीं आ पा रहा था, दिन बीतते जा रहे थे। मैं भी निराश होने लगा था। तभी एक दिन मैं दोपहर को किसी कार्य के लिए संघ कार्यालय गया। सोहन सिंहजी भोजन करके भोजनालय से बाहर निकले ही थे और अपने कमरे की ओर बढ़ रहे थे। मैंने उन्हें नमस्कार किया और सम्मान तथा शिष्टाचारवश उनके साथ-साथ उनके कक्ष तक चला गया। उन्होंने भीतर आने को कहा और सहज भाव से पूछताछ शुरू की कि नया दायित्व कैसा लगता है? राजनीतिक क्षेत्र का अनुभव कैसा है? मैंने उनसे कहा कि और सब तो ठीक है, लेकिन विधानसभा के चुनाव सिर पर हैं और प्रदेश की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है।

उन्होंने पूछा कि 'फिर क्या सोचा है?' मैंने उन्हें बताया कि 'राष्ट्रीय अध्यक्ष को एक करोड़ रुपए की राशि की थैली भेंट करने का निर्णय किया है।' वह बोले, 'इस काम में कहाँ तक बढ़े?' मैंने सकुचाते हुए कहा, 'धन-संग्रह की इस योजना में उठान नहीं आ रहा। जो धन-संग्रह कर सकते हैं, ऐसे बड़े नेता उदासीन-से हैं।' यह सुनकर वे क्षण भर रुके और फिर बोले, 'गिने-चुने बड़े लोगों पर निर्भर रहने के बजाय मझले और छोटे कार्यकर्ताओं का आत्मविश्वास जगाना चाहिए।' दो-चार इधर-उधर की और बातें करने के बाद मैं उनके कक्ष से बाहर आया और दिल्ली प्रदेश कार्यालय की ओर लौट पड़ा। लेकिन रास्ते में उनके वे शब्द मेरे मन में उमड़ते-घुमड़ते रहे कि मध्यम और छोटे कार्यकर्ताओं का आत्मविश्वास जगाओ। उनके शब्दों ने मुझे एक नई दिशा सुझा दी। मैंने बड़ों पर निर्भरता छोड़ी और मध्यम व छोटे कार्यकर्ताओं को धन-संग्रह के लिए प्रेरित करना प्रारंभ किया। इसके परिणाम निकलने लगे।

छोटे कार्यकर्ता बहुत बड़ी राशि एकत्र करने में चाहे समर्थ न रहे हों, पर छोटी-छोटी राशियाँ प्रदेश के कोष में उनके प्रयासों से जमा होने लगीं। दिल्ली के तालकटोरा स्टेडियम में जिस दिन राष्ट्रीय अध्यक्ष को थैली भेंट करनी थी, उस दिन तक प्रदेश के कोष में १ करोड़ १९ लाख रुपए जमा हो चुके थे। यह राशि मध्यम और छोटे कार्यकर्ताओं के प्रयास से जुटाई गई थी। इसके मूल में सोहन सिंहजी की सुझाई हुई दृष्टि ही थी।

मैं जब पहली बार उन्हें मिला तो मेरे मन पर यह छाप पड़ी कि वह दृढ इच्छा शक्तिवाले, गंभीर व्यक्ति हैं। मितभाषी, गंभीर, सुस्पष्ट चिंतन के धनी और लाग-लपेट के बिना अपनी बात कहनेवाले। सोहन सिंहजी अपने प्रति निरंतर कठोर बने रहे। बाह्य कठोरता के नीचे कार्यकर्ताओं के प्रति सहज स्नेह और आत्मीयता की निर्मल धारा निरंतर प्रवाहित होती रहती थी। उनकी रुचि के प्रमुखत: दो विषय रहते थे— शाखाएँ कैसे बढ़ें, सक्षम बनें और कार्यकर्ता का पूर्ण विकास कैसे हो। जब मुझे जुलाई २०१४ में गुजरात के राज्यपाल का दायित्व दिया गया तो मैं गुजरात जाने से पूर्व उनका आशीर्वाद लेने के लिए संघ कार्यालय गया था। वह आँखें बंद कर लेटे हुए थे या सो रहे थे। कुछ देर उनके कमरे में ही बैठा रहा और उनके जागने की प्रतीक्षा करता रहा। उनकी नींद में व्यवधान न पड़े, ऐसा सोचकर मैं चला आया। बाद में मुझे पता चला कि उन दिनों स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण वे आँखें बंद कर लेटे रहते थे,

जिससे आगंतुक को कभी-कभी ऐसा लगता था कि वह सोए हुए हैं। जो भी हो, मैं उनका आशीर्वाद लेने से वंचित रह गया और अब इस प्रसंग के लगभग एक वर्ष बाद मेरे ओ.एस.डी. श्री देवदत्त भारद्वाज, जो विभाग प्रचारक रहे हैं, ने सुबह-सुबह यह दु:खद सूचना दी कि सोहन सिंहजी नहीं रहे। छोटे-छोटे पर्वतों से घिरा हुआ जैसे कोई उत्तुंग पर्वत शिखर होता है, वैसा व्यक्तित्व हमसे छिन गया।

*(शिक्षाविद् तथा गुजरात के राज्यपाल)*

# स्नेह के सागर

**● बजरंगलाल गुप्ता**

माननीय सोहन सिंहजी का संपूर्ण जीवन संघ विचारों और तत्त्व के प्रति अत्यंत निष्ठावान रहा। उन्हें कार्य-पद्धति के नरपत्य के रूप में भी जाना व पहचाना जाता रहा है। उन्होंने अपने कार्यकाल में अनेक कार्यकर्ताओं को अपने हाथों गढ़ा और उनको काम पर लगाया। वे एक ऐसे प्रचारक थे, जो हर छोटे-बड़े कार्यकर्ता के सुख-दु:ख की चिंता करते थे और समय आने पर उसकी उपयुक्त व्यवस्था भी करते थे। लेकिन वे स्वयं के जीवन के प्रति अत्यंत कठोर थे, यहाँ तक कि जीवन के अंतिम क्षण तक भी उन्होंने अपना कार्य खुद ही किया। चाहे संघ शिक्षा वर्ग हो, कोई शिविर हो या अन्य छोटे-बड़े कार्यक्रम, उन सबकी व्यवस्थाओं की बहुत बारीकी से वे चिंता करते थे और कार्यकर्ताओं से कार्य भी करवाते थे। इस क्षेत्र में संघ के ऐसे कार्यकर्ताओं की बहुत बड़ी संख्या है, जो अपने जीवन में आनेवाली कठिनाइयों और उलझनों की चर्चा खुले रूप से सोहन सिंहजी के साथ करते थे और वे उन कार्यकर्ताओं का योग्य मार्गदर्शन कर उन कठिनाइयों के समाधान का मार्ग सुझाते थे। वे कार्यकर्ताओं को किस प्रकार कार्य में लगाते थे, इसका एक उदाहरण मेरा स्वयं का ही है।

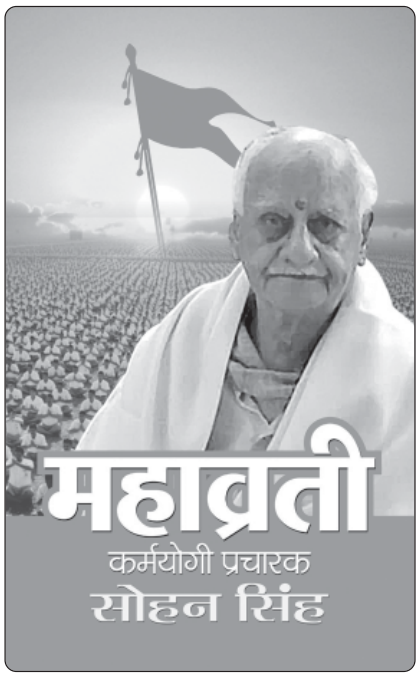


मैं सोनीपत के हिंदू कॉलेज में प्राध्यापक था और सायंकाल में मेरी कक्षाएँ थीं। मेरी उम्र लगभग २५ वर्ष की थी। उस समय के हमारे संभाग प्रचारक माननीय नारायण दासजी ने यह सोचकर कि मैं सायंकाल शाखा में नहीं जा सकता, मुझे विश्व हिंदू परिषद् हरियाणा प्रांत का काम दिया था। साल-डेढ़ साल बाद सोहन सिंहजी संभाग प्रचारक बनकर हरियाणा आए। परिचय हुआ। मेरी आयु उस समय लगभग २७ वर्ष रही होगी। वे कहने लगे कि विश्व हिंदू परिषद् में क्या कर रहे हो? अरे, कॉलेज में पढ़ाते हो तो सायंकाल का काम करो न! मैंने उनको कहा कि शाम को कॉलेज जाना पड़ता है, सायंकाल शाखा जाने का समय नहीं मिलता। सोहन सिंहजी ने इतना सुना। वे बोले नहीं, कॉलेज प्रबंधन से बात की और कुछ दिनों के बाद मुझे प्रिंसिपल ने कहा कि सुबह पढ़ाने आया कीजिए। कुछ दिनों के बाद सोहन सिंहजी फिर प्रवास पर आए। कहा कि कॉलेज का समय बदल गया है। अब तुमको जिला कार्यवाह के नाते से काम करना है। सोहन सिंहजी का विराट् व्यक्तित्व ऐसा था कि वे किसी को कुछ कहें तो उसका प्रत्युत्तर देने की हिम्मत नहीं होती थी। मैंने स्वीकार कर लिया, ठीक है। परंतु बाद में मुझे ध्यान में आया कि इस दायित्व के साथ मैं न्याय नहीं कर सकूँगा। मैंने उनको पत्र लिखा, 'मेरे वृद्ध माता-पिता दोनों राजस्थान में रहते हैं। हर छुट्टी में मुझे राजस्थान जाना पड़ता है। चाहे ग्रीष्म का अवकाश हो या सितंबर का अवकाश, दोनों समय संघ-कार्य और शिविरों के लिए संघ शिक्षा वर्गों के लिए अत्यंत उपयुक्त रहते हैं और मैं घर चला जाऊँगा तो जिला कार्यवाह के नाते कैसे दायित्व का निर्वाह करूँगा? मैं आपके सामने बोल नहीं सका, परंतु मेरी यह एक कठिनाई है। ऐसी मन:स्थिति में जिला कार्यवाह का दायित्व-निर्वाह मेरे लिए संभव नहीं होगा। मैं क्या जवाब दूँगा स्वयंसेवकों को!'

जैसे ही उन्हें मेरा पत्र मिला, अगले दिन प्रात:काल वे मेरे घर पर उपस्थित थे। सोहन सिंहजी को देखकर मैं आश्चर्य में रह गया। उन्होंने कहा कि चाय-वाय पिलाओ। चाय पी। उन्होंने कहा कि तुमने यह पत्र में क्या लिख दिया? मैंने कहा कि जो सच था, वह लिख दिया। वे बोले, यही कठिनाई है न कि और कोई नहीं है! मैंने कहा कि कठिनाई तो यही है। सोहन सिंहजी ने कहा कि यह मेरा काम है। तुमको चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है। कार्यकर्ताओं को जवाब मैं दूँगा; परंतु तुम्हें जिला कार्यवाह के नाते काम करना है। बाद में मेरी नियुक्ति दिल्ली के कॉलेज में हो गई। दिल्ली के कॉलेज में हरियाणा छोड़कर आना, जाऊँ कि न जाऊँ। मैं सोहन सिंहजी के पास गया। सोहन सिंहजी ने ताड़ लिया। थोड़ी देर गंभीर हुए, फिर उन्होंने कहा कि तुम दिल्ली के कॉलेज में जा सकते हो। दो शर्तें हैं। सोनीपत छोड़कर दिल्ली नहीं जाओगे। दिल्ली में तो बहुत लोग हैं। सोनीपत में ही रहकर काम करना है। दूसरा, उन्होंने कहा कि तुम्हारे मन में इच्छा हो सकती है कि श्रद्धानंद कॉलेज निकट है, मोटर साइकिल से जाऊँ; लेकिन स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए मोटर साइकिल का उपयोग मत करना। मैंने उनकी दोनों आज्ञाएँ शिरोधार्य कीं। वे कनिष्ठ व्यक्ति की भी इतनी छोटी बात का ध्यान रखते थे।

*(प्रख्यात अर्थशास्त्री एवं समाजधर्मी)*

*(श्री गोपाल शर्मा द्वारा संपादित एवं प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'महाव्रती : कर्मयोगी प्रचारक सोहन सिंह' से साभार)*

कहानी

# विमला

● विष्णु भट्ट

जब-जब मैंने कोई नया कार्य हाथ में लिया, तब-तब मुझे तिरुवल्लुवर के शब्दों ने प्रेरणा दी। जिन्हें मैंने अपनी डायरी के किसी पन्ने पर एक अमूल्य निधि के रूप में संकलन के रूप में लिखा हुआ है। मैं उन शब्दों की इबारत हूबहू अपने पाठकों के लिए लिख देना अनुचित नहीं समझता। किसी निश्चय पर पहुँचना ही विचार का उद्देश्य है और जब किसी बात का निश्चय हो गया तो उसको कार्य रूप में परिणत करने में देर करना भूल है।

आज कहानी लिखने के लिए जब कथानक के बारे में सोचा तो मेरे मानस-पटल पर एक पुरानी घटना की एक-एक कड़ी जुड़ती हुई उभरने लग जाती है।

तब मैं भारत भ्रमण हेतु एल.टी.सी. पर अपने परिवार सहित घूमने हेतु निकला हुआ था। कई दर्शनीय स्थलों को देखते हुए हम लोग बंबई महानगरों को देखने का लोभ-संवरण नहीं कर सके।

बंबई के समुद्र तट पर घूमने का तो अपना अलग ही महत्त्व है। मैं इस आनंद को कैसे छोड़ सकता था। आखिर हम गेटवे ऑफ इंडिया, चौपाटी होते हुए जुहू तट पर पहुँचे। अपने परिवार के सदस्यों को तट पर छोड़कर तट के किनारे-किनारे चलते हुए मैं आगे की ओर निकल गया। वहाँ भीड़-भाड़ कम थी। मेरे कंधे पर कैमरा लटका हुआ था। जैसे ही कोई अच्छा दृश्य नजर आता, फौरन क्लिक करके अपने कैमरे में कैद कर लेता।

चलते-चलते मुझे लोगों का हो-हल्ला सुनाई देता है। माजरा जानने की उत्सुकता लिये मेरे कदम उसी ओर बढ़ जाते हैं। मेरा पत्रकार मन और आँखें जाग उठती हैं। जैसे ही वहाँ पहुँचता हूँ, भीड़ को चीरते हुए मैं भी उस दृश्य को देखने के लिए आगे बढ़ता हूँ, जिसे घेरे में लिये हुए लोग देख रहे थे। उस दृश्य को मैं अपने कैमरे में कैद कर लेता हूँ।

एक अधेड़ उम्र की महिला समुद्र तट पर पड़ी हुई है। समुद्र की लहरें आ-आकर उसे थपेड़े मारकर चली जाती हैं। मैं उन लोगों की मदद लेकर उसे किनारे से दूर ले जाता हूँ। धीरे-धीरे लोगों की भीड़ कम होती जाती है और वातावरण नीरव अवस्था में बदल जाता है।

होश में आने के बाद वह अपनी कहानी मुझे सुनाती है—मेरी कहानी आरंभ होती है, जब मैं १२ वर्ष की थी। मेरी शादी एक ३५ वर्ष के व्यक्ति से तय की गई थी। मुझे याद है वह दिन, जब मेरी माँ ने मेरी शादी का कड़ा विरोध किया था। पिताजी की जिद के आगे उसकी एक न चली। अलबत्ता पड़ोसियों ने दबी जुबान से तरह-तरह की बातें कहीं।

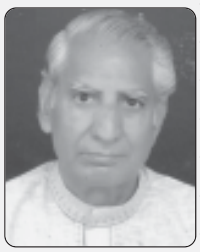

सुपरिचित लेखक। अब तक हिंदी में तीन कृतियाँ तथा राजस्थानी तथा हिंदी में बाल-साहित्य की सात पुस्तकों के अलावा पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। 'कर्त्तव्य रो पुकार' राजस्थानी भाषा में बाल कहानियों की पुस्तक पर 'पं. जवाहरलाल नेहरू बाल साहित्य पुरस्कार' राजस्थानी भाषा, साहित्य एवं सांस्कृति बीकानेर से पुरस्कृत।

समय के साथ वे बातें भी अपने आप समाप्त हो गईं।

ससुराल में शादी की पहली रात। सुहागरात किसे कहते हैं, इसका 'क-ख-ग' भी मुझे मालूम नहीं था। एक आठवीं पास लड़की, वह भी गाँव में रहनेवाली भला सुहागरात के विषय में क्या जाने? रात के बारह बजे के आस-पास मेरे पति लड़खड़ाते कदमों से मेरे कमरे में दाखिल हुए। उनके मुँह से बदबू आ रही थी। मैं डर के मारे एक ओर खड़ी हो गई। पति महोदय पलंग पर औंधे गिरे तो ऐसे कि बहुत दिन चढ़े ही उठे।

दूसरे दिन से मेरे पति मुझे खुश रखने के लिए विभिन्न वस्तुओं के द्वारा आकर्षित करने का प्रयत्न करने लगे। ससुराल में मेरे अलावा केवल तीन और प्राणी थे—सास, ननद और पति महोदय। मेरे पिताजी भारी दहेज न देने के कारण ही तो अधेड़ उम्र के व्यक्ति से मेरी शादी करने पर विवश हुए थे। माँ के विरोध के बावजूद पिताजी ने मेरी शादी जबरदस्ती की।

इस संबंध में तर्क देते हुए उन्होंने कहा था, 'बेटी पराया धन है।' वह स्त्री सुस्ताने लग जाती है। मैं एक सिगरेट जलाकर पैकेट और माचिस जेब में रखते हुए उस स्त्री से आगे की घटना सुनाने की प्रतीक्षा करता हूँ। मैं सोचता हूँ कि बाल विवाह को रोकने के लिए सरकार द्वारा बनाए गए शारदा एक्ट का पालन क्यों नहीं किया जाता है। एक मासूम, जो विवाह की परिभाषा तक नहीं जानती, उसे किस तरह बाल विवाह के माध्यम से लोग बलि चढ़ाते हैं। खिलती हुई कली को खिलने से पहले ही मसल दिया जाता है। आखिर ऐसा क्यों? मैं देखता हूँ, वह स्त्री फिर कुछ कहने के लिए अपने होंठ खोलती है। मैं अपना ध्यान उसकी ओर केंद्रित कर देता हूँ—'बाबूजी, पति द्वारा मुझे खुश रखने के वे सारे प्रयास क्षणिक थे। मेरी सास और ननद का व्यवहार मेरे प्रति दिन-ब-दिन कटु होता गया। पति भी माँ के इशारों पर नाचने लगा। मुझे माँ-बाप की याद सताने लगी। लेकिन खबर भिजवाने के बाद भी वे नहीं आए

और न ही कोई पत्र भेजा। बाद में समाचार आया कि पिताजी ईश्वर को प्यारे हो गए। मैंने पीहर जाने की कोशिश की, लेकिन नाकामयाब रही। कुछ ही महीनों में माँ भी चल बसी। इस तरह पीहर के दरवाजे हमेशा-हमेशा के लिए बंद हो गए। ससुराल के अलावा मेरे लिए कोई जगह नहीं थी। धीरे-धीरे मैंने ससुराल में अपने आपको वहाँ के अनुसार ढालना शुरू कर दिया। सास-ननद के काम में हाथ बँटाने व हर तरह से खुश रखना ही मैंने अपना ध्येय बना लिया। लेकिन जिन कामों की वे मुझसे अपेक्षा रखती थीं, वे सब मुझे आते ही नहीं थे। पाँच वर्ष इसी तरह बीत गए। मेरे पैर भारी हो गए। मेरे पति ने यह खबर सुनते ही मुझ पर लांछन लगाते हुए कहा, 'मुझे यह विश्वास नहीं कि होनेवाला बच्चा मेरा है। मुझे माँ और बहन से पहले ही मालूम हो चुका था कि तुम दुश्चरित्र हो। ऐसी कुलटा के लिए मेरे घर में कोई जगह नहीं।' यह कहते हुए उन्होंने मुझे घर से धक्का देकर निकाल दिया। मेरी सास-ननद देखती रहीं, क्योंकि यह सब जहर उन्हीं का दिया हुआ था। मैंने अपने निरपराध होने की लाख सफाई देने की कोशिश की, रो-रोकर कहा, लेकिन पत्थर दिल न पिघला।'

इतना कहते-कहते वह स्त्री हाँफने लगी। उसके होंठ सूख गए थे। मैं उसे पानी पिलाता हूँ और उसकी ओर आर्द्र दृष्टि से देखता हूँ। वह फिर कहना शुरू करती है, 'गाँव छोड़कर भटकती-भटकती अपनी अनजान मंजिल की ओर मैं इधर-उधर भटकती फिरी। न समय पर खाना-पीना, वह रात बड़ी भयानक थी। चारों ओर बादल छाए हुए थे। घने अंधकार में बिजली का चमकना, मेढकों की टर्र-टर्र की आवाजें, जुगनुओं की चम-चम और बादलों की गर्जना से पूरा वातावरण भयानक लग रहा था। थोड़ी ही देर में वर्षा होने लगी। बड़ी-बड़ी बूँदें ऐसे गिर रही थीं, मानो आसमान से पत्थर बरस रहे हों। रास्ता भी साफ नजर नहीं आ रहा था। कमजोरी के कारण अचानक एक पत्थर से ठोकर लगते ही मैं गिर पड़ी। आँख खुलने पर मैंने अपने आप को अस्पताल में पाया। पास में एक नन्हा सा शिशु गहरी नींद में सो रहा था। उसे क्या मालूम था कि उसका भविष्य कैसा होगा?'

मुझे उसकी करुण कहानी बड़ी रोमांचकारी लगी। उस स्त्री के प्रति मन में सहानुभूति भी उठी। एकदम स्वामी विवेकानंद के शब्द याद आ गए। 'यदि तुम्हारे अंदर दूसरों के प्रति सहानुभूति नहीं तो तुम चाहे संसार के सबसे बड़े बुद्धिवादी क्यों न हो, तुम कुछ भी नहीं बन सकोगे।' ऐसी स्त्री से, जो इस संसार में थपेड़े खाने के लिए ही पैदा हुई हो, क्यों न किसी को सहानुभूति हो। मैं उससे कुछ पूछना चाहता हूँ कि वह स्त्री अपनी अधूरी कहानी को आगे बढ़ाती हुई कहना शुरू करती है, 'कुछ ही दिनों के बाद मुझे अस्पताल से छुट्टी मिल गई। मेरे सामने एक प्रश्न-चिह्न उपस्थित हो गया—मैं कहाँ जाऊँ? क्या करूँ? बच्चे को कहाँ रखूँ? इत्यादि-इत्यादि। न रहने को घर, न खाने को और न ही पहनने को। ऊपर नीला आकाश और नीचे धरती। आखिर एक निश्चय कर उस दिल के टुकड़े को उसी शहर के अनाथालय में छोड़कर अपनी अनजानी राहों पर चल दी। पास में पैसा तो था नहीं कि रेल का टिकट खरीद पाती। मैं बिना टिकट ही गाड़ी में बैठ गई। अचानक मेरी निगाहें मेरे सामने वाली बर्थ पर बैठे व्यक्ति पर पड़ी। उसने भी मुझे गौर से देखा। हम दोनों ने एक-दूसरे को पहचान लिया। मेरी ऐसी हालत में भी उस व्यक्ति ने मुझे पहचान लिया था। वह व्यक्ति मेरे बचपन का साथी किशन था। वह एक धनी साहूकार का बेटा था। मिडिल पास करने के बाद वह शहर में आगे पढ़ने के लिए चला गया था।

किशन के आग्रह पर मैं उसके घर चली आई। वैसे भी मुझे ठहरने के लिए जगह तो चाहिए थी। भोपाल मेरे लिए नई जगह थी। किशन वहाँ पर प्राइवेट कंपनी में कोई बड़ा ऑफिसर था। उसकी नई-नई नौकरी लगी थी। उसे कंपनी की तरफ से रहने के लिए तीन कमरोंवाला एक फ्लैट मिल गया था। वह अकेला ही उस फ्लैट में रहता था। किसी तरह की कोई कमी नहीं थी। कमी थी तो सिर्फ 'गृहलक्ष्मी' की। यहीं रहकर मैंने खाली समय में किशन से पढ़ना शुरू किया। मैंने धीरे-धीरे बड़े-बड़े लेखकों की पुस्तकें पढ़ डालीं। हायर सेकेंडरी की परीक्षा देकर नौकरी करने की इच्छा थी, ताकि अपने रहने का अलग प्रबंध कर, अपने दिल के टुकड़े को अपने पास रख सकूँ। किशन की ओर से भी इस काम में कोई रुकावट नहीं थी। लेकिन विधाता को यह मंजूर नहीं था।

वो सावन के दिन थे। रात करीब ग्यारह बजे के आस-पास का समय होगा। पढ़ते-पढ़ते अचानक मेरी आँख लग गई। किशन हमेशा की तरह रात को देर से आता था। भूल से मैं अपने कमरे का दरवाजा बंद नहीं कर सकी। अचानक मुझे महसूस हुआ कि कोई व्यक्ति मुझे अपने बाहुपाश में बाँधे हुए है। मैंने आँख खोलकर देखा तो वह और कोई नहीं, किशन था, मेरे बचपन का दोस्त। वह पिये हुए था। शराब ने उसे अंधा कर दिया था। वासना के वशीभूत होकर उसने मुझे अपने आगोश में ले लिया था। मैंने उसको परिस्थिति का भान कराने का प्रयत्न किया कि वह क्या करने जा रहा है, लेकिन उसने मेरी एक न सुनी और मेरे सामने ही देखते-देखते मेरी अमूल्य निधि लुट गई। उसने अपने एहसानों का मूल्य मुझसे मेरी इज्जत लूटकर वसूल किया। मैंने रो-रोकर अपनी निधि के लुट जाने का मातम मनाया। जब किशन का भूत उतरा तो वह गिड़गिड़ाता हुआ बोला, 'मैं बहुत शर्मिंदा हूँ, विमला, मैंने तुम्हारे साथ विश्वासघात किया है। क्या तुम मुझे क्षमा नहीं करोगी? मैं वचन देता हूँ कि तुमसे जल्द ही शादी करके इस पाप का प्रायश्चित्त करूँगा।'

जीवन में हर्ष-विषाद की घड़ियाँ आती ही रहती हैं। उन्हीं में गूँथी

रहती है आशा-निराशा। कभी सुख की अनुभूति होती है तो होंठों पर हास की चाँदनी खिल उठती है, तो कभी व्यथा में नेत्रों से दु:ख के मोती झर जाते हैं। कभी मन में दृढता का प्रकाश आता है, कभी विचलन का अँधेरा, यही जीवन के धूप-छाँव के फूलों का रहस्य है। ये पंक्तियाँ जिस किसी लेखक ने लिखी हों, विमला के जीवन की कहानी के उतार-चढ़ाव को इंगित करती हैं। उसने फिर कहना शुरू किया, 'किशन के आश्वासन से मुझे कुछ संतोष हुआ। सबकुछ लूटने के बाद अपनी पत्नी बनाकर रखने का फैसला किशन ने प्रायश्चित्त के रूप में कर लिया था। इसके अलावा उसके पास कोई रास्ता नहीं था। फिर भी मुझे पक्का विश्वास नहीं था। जब तक वह शादी करके अपनी विधिवत् पत्नी न बना लेता; दूध का जला छाछ को भी फूँककर पीता है। मेरी परिस्थितियाँ ही ऐसी थीं कि मुझे उनका गुलाम बनकर रहना पड़ रहा था। स्वतंत्र बुद्धि के लोग भी एक हद तक यदि परिस्थिति के गुलाम नहीं होते तो कम-से-कम परिस्थिति द्वारा गढ़े जाते हैं। विनोबाजी के द्वारा कहे गए ये शब्द विमला के लिए सच साबित हो रहे थे। एक बार शेर के मुँह खून लग जाता है तो वह बार-बार उसको पाना चाहता है। उसी प्रकार किशन मेरे शरीर से खेलता रहा और अपनी भूख मिटाता रहा। जब-जब मैं उससे शादी की बात करती तो वह इधर-उधर करके मुझे फुसला-फुसलाकर किसी-न-किसी तरह टाल जाता। इसी बीच मैं फिर से माँ बन गई। जिसके लिए मैं तैयार नहीं थी। किशन को जब मालूम हुआ तो उसने एवॉर्शन करवाने को कहा। लेकिन मैंने साफ मना कर दिया। वह बच्चा नाजायज नहीं था। किशन मुझसे शादी करके कानूनी रूप से उस बच्चे का पिता बन जाएगा, ऐसा मुझे विश्वास था। लेकिन मुझे इस विश्वास की हत्या होती नजर आई, क्योंकि वह अपनी वासना पूर्ति मुझसे नहीं कर सकता था। वह मुझसे कतराने लगा। एक दिन किशन अनुपमा नाम की २०-२१ साल की गौरवर्ण लड़की को घर लाया और मुझसे परिचित कराया। उसने उस लड़की से सिविल मैरिज कर ली थी। वह लड़की उसी के ऑफिस में स्टेनोग्राफर थी। मुझे जो आश्वासन किशन ने दिया था, वह मिट्टी के घरौंदे सा टूट-टूटकर चूर हो गया।

मेरे ऊपर वज्र गिरा। विश्वासघात की इस भयानक चोट को मैं सह न सकी और मूर्च्छित होकर वहीं गिर पड़ी। होश में लाने के बाद किशन ने सफाई देते हुए कहा कि 'मैंने सोच-समझकर ही अनुपमा से शादी की है। इसके दो कारण हैं—एक तुम शादीशुदा हो और तुमको कानूनी तौर पर तुम्हारे पति ने तलाक नहीं दिया और दूसरा, पहले पति से तुम्हें एक लड़का भी है। भविष्य में किसी तरह का झंझट न हो, इसलिए तुमसे विवाह नहीं किया है। हाँ, एक बात के लिए मैं तुझे आश्वस्त कर दूँ कि अगर तुम यहाँ रहना चाहो तो तुम्हें उसी सम्मान से रखूँगा, जिस सम्मान से तुम अभी तक रहती आई हो। बच्चे की तुम्हें कोई चिंता नहीं करनी चाहिए। इसे मैं अपने कलेजे का टुकड़ा समझकर रखूँगा।' पर एक म्यान में दो तलवारें कैसे रह सकती हैं? इस कटु सत्य को कैसे झुठलाया जा सकता है।

'बच्चे को वहीं छोड़ मैं पंजाब मेल से बंबई के लिए रवाना हो गई। किशन के एक मित्र को मैं जानती थी। उसका पता मैंने अपने पास रख लिया था। वह बंबई में घड़ियों की दुकान करता था। बंबई जैसे शहर में अजनबी लोग एक कदम भी सही नहीं चल सकते। पग-पर पर गुंडों और जेबकतरों का आतंक रहता है। नए चेहरे उनकी निगाहों से छिपे नहीं रह सकते। चूँकि बंबई जाने का निश्चय जल्दी में किया था। अत: मैं तार भी नहीं दे सकी थी। मैंने एक टैक्सी लेकर ड्राइवर को पते के अनुसार चलने को कहा। लेकिन ड्राइवर मुझे ऐसी जगह ले गया, जो गुंडों का अड्डा था, जहाँ रात को शराब के दौर चलते थे। जुआ खेला जाता था और वासना पूर्ति के लिए औरतें सप्लाई की जाती थीं। मैं बड़ी मुसीबत में फँस गई। मैंने अपने शरीर को किसी को भी हाथ नहीं लगाने दिया तो मुझे भयंकर शारीरिक यातनाएँ दी गईं। खूब मारा-पीटा गया। कई दिनों तक भूखा रखा गया और इस तरह मुझे जर्जर कर दिया। मुझे वे छोड़ भी नहीं सकते थे, क्योंकि पकड़े जाने का डर था। एक दिन वे लोग मेरी कोठरी का दरवाजा बंद करना भूल गए, मैं मौका पाकर वहाँ से भाग निकली। किसी तरह यहाँ तक पहुँची और अपने इस जर्जर शरीर को इस अथाह जलराशि के हवाले कर दिया।'

इन्हीं शब्दों के साथ विमला की गरदन एक ओर को लुढ़क गई। शायद मृत्यु के देवता ने उसकी करुण पुकार सुन ली थी। सूरज भी अस्ताचल की ओर जा चुका था। एक भयंकर नीरवता उस वातावरण में छा गई थी। उसकी जीवन नैया, जो इस संसार रूपी समुद्र के बड़े भँवरों के थेपेड़े खा-खाकर जर्जर हो चुकी थी, सदा-सदा के लिए चूर-चूर हो गई। शेष था तो केवल उसका कंकाल, जो समाज की बुराइयों की एक जीती-जागती तसवीर था। मुझे कविवर रवींद्रनाथ ठाकुर की ये पंक्तियाँ बरबस याद आ जाती हैं, 'मनुष्य जहाँ कहीं भी मनुष्य को सताएगा, वहीं उसकी समूची मनुष्यता घायल होगी और वह घाव उसे मौत की ओर घसीट ले जाएगा।' जब तक समाज में बाल विवाह प्रथा का अंत नहीं होगा, दहेज की दानवी प्रवृत्ति संपूर्ण रूप से समाप्त नहीं होगी, तब तक विमलाएँ नारकीय दु:ख सहन करती हुई अपनी जीवन-लीला समाप्त कर दारुण दु:खों से हमेशा-हमेशा के लिए छुटकारा पा जाएँगी। सरकार केवल मात्र कानून बना सकती है, लेकिन उसके पालने की जिम्मेदारी समाज के हर वर्ग की है। सामाजिक बुराईयों का विरोध हर समाज को करना चाहिए। अंत:प्रेरणा से ही इन बुराइयों को दूर किया जा सकता है।

मेरे मुँह से फैज का एक शेर फूट पड़ता है—

*'मौत अगर आसान नहीं है, जीना भी आसान नहीं है,*
*मौत को मुश्किल जाननेवाले, जीना मौत से मुश्किल है।'*

मुझे बहुत देर हो गई थी। आस-पास के लोगों को इकट्ठा करके, विमला के अंतिम संस्कार की व्यवस्था कर मैं दु:खी मन से अपने गंतव्य की ओर मुड़ जाता हूँ।

म.नं. १ म ९, गायत्री नगर,
हिरण मगरी, सेक्टर-५, उदयपुर-३१३००२ (राज.)
दूरभाष : ०९४६१४०३१६९

# फागुन आ गया

● संजय पंकज

### फागुन हुआ शरारती

फागुन हुआ शरारती, ढेरों फेंके रंग।
अंबर भी है नाचता, आज धरा के संग॥

मति की भोरी बाबरी, चलती अटपट चाल,
फागुन आता देखकर, गोरी हुई निहाल॥

कोयल रही पुकारती, जिसको बारंबार।
रंग-गंध की पालकी, पहुँचा फागुन द्वार॥

देख फाग के रंग को, टेसू हुआ मलाल।
गोरी तेरे गाल पर, चढ़े न लाल गुलाल॥

फागुन की गति बढ़ गई, रति के होते दंग।
अनंग हुआ हैरान है, फीका टेसू रंग॥

फागुन ने शीतल किया, कफ वात औ' पित्त।
गति-मति जो थी बावली, चारों खाने चित्त॥

फागुन से क्या भागना, यह उद्‌बोधन गीत।
जाग रही है चेतना, लौटो मेरे मीत॥

फागुन आता देखकर, बदला मन का रंग।
वैरागिन थी भावना, भरती ताल-तरंग॥

दिशा-दिशा में उड़ रहे, रंग-सुगंध-गुलाल।
गाल-गाल पर छाप दे, फागुन भरता ताल॥

पात-पात बौरा गए, भींग गया हर गात।
ऊधम मचाता पूछिए, मत फागुन की बात॥

### फागुन आ गया

रंगों से भागा है काग
फागुन आ गया!
प्राणों में जागा है राग
फागुन आ गया!

मादकता का रस बरबस
फूलों पर गदराया है,
पीली रंगत हरियायी
ऐसा मौसम आया है।
डालों में महकी है आग
फागुन आ गया!
साँसों में लहकी है फाग
फागुन आ गया!

खुशबू वह एक संदली
साँसों पर लहराई है,
चंदन-चंदन मन डूबा
सुधि अतीत की आई है।

गंधों का लागा है दाग
फागुन आ गया!
छंदों का जागा है राग
फागुन आ गया!

वैसे तो हर दिन
बोझिल-बोझिल सा मन रहता है,
लेकिन फागुन धुन सुनकर
उत्सव-नद में बहता है।

धड़कन का जागा है भाग
फागुन आ गया!
अंतर में जागा है राग
फागुन आ गया!

सुपरिचित साहित्यकार। 'यवनिका उठने तक', 'माँ है शब्दातीत', 'यहाँ तो सब बनजारे', 'मंजर-मंजर आग लगी है', 'गांधारी की पट्टी नहीं है शब्द', 'सोच सकते हो' *(गीत-कविता संग्रह)*; पत्र-पत्रिकाओं एवं संकलनों में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से प्रसारित। 'अर्चना साहित्य पुरस्कार', 'अवंतिका सरस्वती सम्मान', 'प्रतिभा सम्मान', 'कलाश्री सम्मान' सहित दर्जन भर सम्मान।

### बहुरंगी लिपियाँ

दिशा-दिशा आँजे
सुर-गंधिल छवियाँ!
बाँच रहीं धरती
बहुरंगी लिपियाँ!

बूँद-बूँद भरता
अंबर का सागर,
भरती है रीती
धरती की गागर।

पवन परों पर चढ़
आती हैं निधियाँ!

कण-कण में तन-मन
धड़कन में सविता,
नई चमक आभा
फैली है कविता,
उमड़-घुमड़ आती
बौराई सुधियाँ!

सुधि बिसरा नस-नस
तैर रहा पराग,
पता नहीं मन में
बर्फ जमी कि आग?

मगन मन बिहरने
आई हैं परियाँ!

'शुभनंदी', नीतीश्वर मार्ग,
आमगोला, मुजफ्फरपुर-८४२००२

# नंदकुँवर खेलत राधा संग होरी···

● ज्योति प्रकाश खरे

होली के नायक हैं नटखट नंद-किशोर। लघु-चित्र हो या कविता, संगीत हो या नाटक, उत्सव के रंगनायक तो वे ही रहे हैं। परमानंद दास ब्रजभाषा के सोलहवीं शताब्दी के प्रतिभासंपन्न कवि थे। उनकी पदरचना प्रचुरता और श्रेष्ठता दोनों दृष्टियों से सूरदास को छोड़कर अष्टछाप के कवियों में सर्वप्रथम आती है। एक सरस पद में जमुना-पुलिन पर संपन्न होरी उत्सव का चित्रदर्शी वर्णन उन्होंने किया है—

*नंद कुँवर खेलत राधा संग*
*जमुना-पुलिन सरस रंग होरी।*
*नव घनश्याम मनोहर राजत*
*श्यामा सुभग तन दामिनि गोरी॥*
*केसरी के रंग कलश भरे बहु*
*संग सखा हलधर की जोरी।*
*हाथन लिए कनक पिचकारी*
*छरके ब्रज की नवल किशोरी॥*

और यह रंग-उत्सव राधा-कृष्ण के प्रणय के रंग में ऐसा मादक हो उठता है कि लोकलाज, कुलमर्यादा के सारे लौकिक बंधन टूट जाते हैं—

*अति अनुराग बढ्यौ तिहि औसर*
*कुल-लज्जा मर्यादा तोरी।*
*मदन गोपाल लाल संग बिहरत*
*देह-दशा भूली, भई बौरी*

इस मस्ती भरे आलम का वर्णन चंदसखी ने अपने एक सुंदर पद में किया है। वे कहते हैं—

*चूँदरिया रंग में बोरी गयौ।*
*वृंदावन की कुंज गलिन में*
*नथ-दुलरीहा तोरि गयौ॥*
*गहवन वन और खोर साकरी*
*दधि की मटुकी फौरि गयौ॥*

यमुना तट पर सघन कुंजवन में लहराता बंसी का स्वर होली का संगीत बन गया। चित्र का रंग बन गया। कवि का शब्द बन गया।

जाने-माने पत्रकार। पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ निरंतर प्रकाशित। संप्रति 'जनसेवा मेल' झाँसी में फीचर एडीटर।

पर मजे की बात तो यह है कि कृष्ण विषयक प्राचीन ग्रंथों में कृष्ण और होली का संबंध दूर-दूर से भी दरशाया नहीं गया है। महाभारत की तो बात ही क्या, परंतु भागवत पुराण में, जहाँ कृष्ण की नटखट बाललीलाओं के प्रचुर वर्णन मिलते हैं, कहीं उनके होली के रंग में रँगने की बात नहीं आती।

वैसे गीता में ऋतुओं में मैं वसंत हूँ, ऐसा उन्होंने कहा है। वसंत में चंपक गौर गोप बालाओं के साथ नृत्य करते हुए श्रीकृष्ण का काव्यमय वर्णन अपने 'गीत-गोविंद' काव्य में जयदेव ने भी किया है, परंतु यह वसंत चैत्र-वैशाख का है। निश्चित ही यह फाल्गुनोत्सव नहीं है।

भारतीय परंपरा में होली संबंधी दो मिथक कथाएँ लोक प्रचलित हैं—एक होलिका राक्षसों की और दूसरी ढुंढा राक्षसी की। परंतु कृष्ण संबंधी कोई कथा ऐसी प्रचलित नहीं है।

होलिका उग्र प्रकृति दैत्यराज हिरण्यकशिपु की बहन थी। दैत्यराज का पुत्र प्रह्लाद विष्णु का भक्त था। दैत्यराज के आदेश पर जब प्रह्लाद ने विष्णुभक्ति का त्याग नहीं किया तब दैत्यराज ने उसे मारने का आदेश अपनी बहन होलिका को दिया। दैत्यकन्या होलिका अग्निभय से मुक्त थी। इसलिए उसने अग्नि प्रज्वलित करके प्रह्लाद को लेकर उसमें प्रवेश किया। पर चमत्कार ऐसा हुआ कि दैत्यकन्या अग्नि के प्रकोप की चपेट में आ गई और प्रह्लाद जीवित बच गया।

होली की दूसरी कथा भविष्योत्तर पुराण में आती है और वह ढुंढा नामक राक्षसी से संबंधित है। उसका उपद्रव शांत करने के लिए होली जलाई जाती है, ऐसा इस पुराण का कहना है। होली प्रज्वलित करने के पहले अर्घ्य देने का जो मंत्र है, वह इस ओर संकेत करता है—

*होलिके च नमस्तुभ्यं, ढुंढा तेजो विमर्दिनी।*
*सर्वोपद्रव शान्त्यर्थं गृहाणार्घ्यं नमोस्तुते॥*

इस पुराण में होली कैसी मनानी चाहिए, उसका विधान भी दिया है। पुराण कहता है—'शीतकाल की समाप्ति पर फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा के अवसर पर लोग रंग-बिरंगे वस्त्र पहनकर, आनंद मनाते हुए अबीर-गुलाल चर्चित करके, तांबूल भक्षण करके, नृत्य-संगीत में मग्न हों, हास्य-विनोद का आस्वाद लें। युवतियाँ नृत्य करें, जलयंत्र लेकर एक-

दूसरे को रंग से सराबोर करें। फिर हो-हल्ला मचाएँ, जिससे राक्षसी के उपद्रव का शमन हो।'

गाली देना और पंक या कीचड़ का प्रयोग भी विहित है। 'गाथासप्तशती' में पंक-प्रयोग पर एक सुंदर गाथा आती है। गाथाकार नायिका को कहता है, 'हे सुंदरी, फाल्गुनोत्सव में जिसने तुम्हारे कमनीय बदन पर कीचड़ का यह अलंकार चढ़ाया है, उसके स्पर्श से तुम्हें आए पसीने से वह बह भी चुका है।'

होलिका और ढुंढा की मिथक कथाओं का अनुकरण करते हुए एक और कथा भी प्रस्तुत हुई, जो विशेष प्रचलित नहीं है और सामान्यत: ब्रजक्षेत्र तक ही सीमित है। इस लोककथा के अनुसार प्रचंडकाय पूतना राक्षसी का वध करने के बाद उसके अवयव खंडित करके उनको जलाया गया। यही होली जलाने की प्रथा का आरंभ है, परंतु यह कथा काफी अर्वाचीन है, बाद में जोड़ी गई है।

कृष्ण के होली खेलने का वर्णन सर्वप्रथम हमें 'गर्गसंहिता' में मिलता है। होली प्रसंग का रंग प्रस्तुत करते हुए संहिताकार लिखते हैं—

'एक समय राधिकाजी मानिनी हुईं, तब होली के उत्सव में श्रीकृष्ण को आए देखकर वह सब ब्रज की युवतियाँ राधा को कहने लगीं कि हे रंभोरू! हे चंद्र वदने! हे ब्रज सुंदरी! हे राधे! हे ललने! हमारा सुंदर वचन तुम सुनो कि होली के उत्सव का विहार करने के लिए यह ब्रज के भूषण हरि आपके नगर में आए हैं। शोभायमान यौवन के मद से जिनके नेत्र घूम रहे हैं, नीली अलकावली से शोभित हैं कंधे और गोल कपोल जिनके और जिन्होंने पीला जामा पहना है। दूर से ही उनके चरण के नूपुर बजते आ रहे हैं। सो तुम फाल्गुन के बहाने से निकलो। अब तो आपको अपना मंदिर तरह-तरह के रंग, अत्तर, चंदन, अबीर, केसर, गुलाल और कुंकुम से सुगंधित करना चाहिए। जिनके हाथ लाल हैं, वस्त्र पीले तथा जिनकी करधनी और नूपुर बज रहे हैं, ऐसी गोपकन्याओं ने राधा के नेतृत्व में श्रीकृष्ण को घेर लिया। होली के गीत गाती, गालियाँ देती, हँसी-मजाक करती उन कन्याओं ने धरती और आकाश रंगों से भर दिया। चारों ओर से चंपकगौर ललनाओं से घिरे नंदनंदन ऐसे लग रहे थे मानो श्रावण की संध्या में बिजलियाँ श्याम घटा से लिपट गई हों। श्रीकृष्ण को घेरकर उनके मुख को लेपती, अबीर गुलाल की वर्षा करती उन ललनाओं ने उन्हें रंगभरी पिचकारियों से खूब भिगो दिया।'

लगता है, उन्नीसवीं शताब्दी में या उसके थोड़े पूर्व श्रीकृष्ण को रंगोत्सव का नायक बनाया गया और राधा को नायिका। भारतीय जनमानस पर यह रंग ऐसा चढ़ा कि होली खेलनेवाला प्रत्येक युवक स्वयं को गोपाल और प्रत्येक युवती अपने आपको राधा समझती है। संगीत और काव्य में, चित्रादि दृश्य कलाओं में, नृत्य और नाट्य में और रजतपट पर भी होली राधा-कृष्ण के प्रणय और नटखटपन, मान और दुलार की रंगगाथा बन गई। इतनी कि अब होली का उल्लेख आया तो याद आता है जमुना का किनारा, चंपक गौर राधा और नटखट कृष्ण।

आज भी श्रीकृष्ण का प्रतिनिधि बना ब्रज का युवक होली खेलने अपने प्रेयसी के द्वार पहुँच जाता है तो कहता है—

*रसिया आयौ तेरे द्वार खबर दीजो॥*
*यह रसिया पौरी में आयो।*
*जा की बाँह पकर भीतर लीजो॥*

और राधा को होली खेलने की चुनौती देते हुए वह गाता है—

दरसन दै, *निकसी अदा में ते॥*
*कोटि रमा-सावित्री भवानी,*
*तेरे निकसी है अंग-छटा में ते।*
*तू ऐसी वृषभानुनंदिनी*
*जैसी निकस्यी है चाँद घटा में ते॥*

विद्वानों का कहना है कि होली अति प्राचीन उत्सव प्रथा है। वह ऋतु-परिवर्तन से संबंधित है। कहते हैं, संस्कृत में अन्न की बाल को 'होला' कहते हैं। जिस उत्सव में नई फसल की बालों को अग्नि पर भूना जाता है, वह होली है। अग्नि जलाकर उसके चारों ओर नर्तन करना आदिम प्रथा है। गुफा चित्रों में, जो प्रागैतिहासिक काल से संबंधित हैं, ऐसे दृश्य चित्रित किए गए हैं। होली का प्रारंभ कहा जाता है, इसी प्रथा से है।

कुछ और विद्वान् कहते हैं कि आर्यों का जैसा यज्ञ था, वैसे ही जनसामान्य की होली थी। अग्निपूजा का ही वह एक रूप है।

वात्सायन के कामसूत्र से लेकर कई संस्कृत और प्राकृत ग्रंथों में होली का उल्लेख आता है। कुछ और मिथक कथा भी इस उत्सव से जुड़ गई है। कहते हैं, तपस्या भंग करने हेतु आए वसंतसखा कामदेव को शिवजी ने इसी दिन भस्म किया था।

कुछ भी हो, होली का उत्सव आया कि लोग श्रीकृष्ण-राधा के प्रणय-गीतों में रोमांचित हो जाते हैं। होली प्रज्वलित करने से रंगों से खेलने तक यही उसका रूप जनमानस को आकर्षित करता है। अभी भी रंगों की टोली प्रेयसी के द्वार पर आ धमकती है तो वही गीत मुखर होता है, जो कहते हैं कि कृष्ण ने राधा के द्वार खड़े होकर उनसे कहा था—

*'रसिया आयौ तेरे द्वार खबर दीजो।'*

जी-९, सूर्यपुरम नंदनपुरा,
झाँसी-२८४००३ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९४१५०५५६५५

स्मरण

# डॉ. रमाशंकर शुक्ल 'रसाल' हिंदी साहित्य का एक अनूठा व्यक्तित्व

● दयाशंकर शुक्ल

हिंदी साहित्य के इतिहास में आचार्य डॉ. रामशंकर शुक्ल 'रसाल' का स्थान अनेक रूपों में अप्रतिम है। वे अनेक विद्या शाखाओं के ज्ञाता और शास्त्रों के अधिकारी विद्वान् थे। भारतीय विश्वविद्यालयों में वे हिंदी के ऐसे प्रोफेसर थे, जिनके कंठ पर सरस्वती विराजमान थी। उन्हें 'कंठस्थ' विद्या पर विश्वास था। वे उसे ही विद्या मानते थे, जो मस्तिष्क में हो, उसे ही काव्य कहते थे, जो कंठ में हो। इस संदर्भ में कवि 'ठाकुर' को वे प्राय: उद्धृत करते थे—

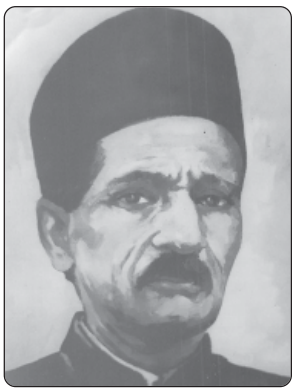

*स्व. डॉ. रमाशंकर शुक्ल 'रसाल'*

*'पूछे कहि आवै, औ कहे पै गहि आवै वेगि*
*सो कवि कहावै, छबि पावै दरबार में।'*

उनकी स्मरणशक्ति अद्भुत थी और तर्कबुद्धि अप्रतिहत, चाहे काव्य का क्षेत्र हो, चाहे ज्योतिष का, चाहे वैद्यक का, चाहे शोध का; रसालजी कभी पुस्तकाश्रयी ज्ञान के कायल नहीं रहे। उनके अनेक शिष्यों ने अपने उल्लेखों में 'रसालजी' की अध्यापन-कला की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। किसी भी विषय पर वे अपनी विलक्षण स्मरणशक्ति के बल पर घंटों व्याख्यान दे सकते थे, जिसमें अन्य भाषाओं के प्रासंगिक उद्धरण भी होते थे।

आधुनिक हिंदी काव्यांदोलनों के विपरीत वे रीति काव्य-प्रवृत्तियों के पोषक और ब्रजभाषा-काव्य के कट्टर समर्थक थे। आधुनिक काल में वे ब्रजभाषा के एकमात्र विश्रुत आचार्य और अलंकार शास्त्र के महापंडित थे। उनसे वरिष्ठ अनेक आलंकारिकों ने उनके अलंकार-ज्ञान की अतिशय प्रशंसा की थी। आचार्य 'रसाल' जी अलंकार को काव्य की आत्मा मानते थे। 'रस' की महत्ता को स्वीकारते थे, किंतु रस को काव्य की आत्मा नहीं मानते थे, उसे 'नाटक' की आत्मा मानते थे। डॉ. रसाल काव्य में चमत्कार को महत्त्वपूर्ण मानते थे। जहाँ चमत्कार नहीं, वहाँ कविता नहीं, ऐसी उनकी मान्यता थी। इसीलिए वे उस कवि को विशेष महत्त्व देते थे, जो समस्या पूर्ति की कला में कुशल हो, क्योंकि समस्यापूर्ति काव्य की ऐसी रीति थी, जिसमें चमत्कार चारुता का उत्कर्ष रहता था। उन्होंने अनेक युवा कवियों की काव्य-परीक्षा में समस्यापूर्ति को दृष्टि में रखा था, क्योंकि वे जानते थे—

'कवि की परिच्छा तो समस्या ही से की भी जात,
कैसी है उड़ान, पहुचानि किती ऊँची है।'

सुप्रसिद्ध हिंदी कवि डॉ. जगदीश गुप्त उनकी इस प्रकार की परीक्षा में उत्तीर्ण ही नहीं हुए, अपितु पुरस्कृत भी हुए थे। एक संदर्भ द्रष्टव्य है, 'डॉ. जगदीश गुप्त जब इलाहाबाद विश्वविद्यालय के बी.ए. प्रथम वर्ष में प्रवेश लेने गए, उस समय तक वे ब्रजभाषा कवि के रूप में चर्चा में आ चुके थे और समस्या पूर्ति धड़ल्ले से करने लगे थे। असल में वे जिस वातावरण में रहते थे, वहाँ समस्या पूर्ति खूब होती थी। डॉ. गुप्त लिखते हैं, 'शाहाबाद, सीतापुर और कानपुर सर्वत्र समस्यापूर्ति-परक रचना-प्रणाली छाई हुई थी। इलाहाबाद पहुँचने पर पाया कि वे भी इससे सर्वथा मुक्त नहीं हैं। बी.ए. प्रथम वर्ष में ही संकट सामने आ खड़ा हुआ। प्रतिभा-परीक्षण के लिए 'रसालजी' ने हमारे आगे एक जंगी समस्या धर दी, 'सेस मयंक लरैं झरैं सम्पा' मैंने इस पर एक छंद रचा, जो सर्वोपरि पाया गया और पुरस्कार का हकदार घोषित हुआ, वह पूर्ति इस प्रकार है—

*'नाचति मीरा लिये मुरली कर, जाँचति मोहन की अनुकम्पा।*
*राग बिलोक बिराग हू लाजति, गात लखे सकैचित चम्पा।*
*आवन सौं अरुझैं-बिरुझैं लटैं, लेति जबैं झुकि झूमि कै झम्पा।*
*टूटि लरैं परैं हीर न की, जनु सेस मयंक लरैं, झरैं सम्पा॥'*

उपर्युक्त पूर्ति सुनकर रसालजी अत्यंत प्रसन्न हुए। एक तो छंद रचना ब्रजभाषा में हुई थी, दूसरे 'समस्या' का भाव छंद के अभिप्रेत अर्थ के साथ समन्वित हो गया था। उस समय से डॉ. जगदीश गुप्त 'रसाल' जी के परम आत्मीय बन गए थे। सन् १९२७ में इलाहाबाद में 'रसिक मंडल' नाम की संस्था की स्थापना हुई, जिसके संस्थापक सदस्य डॉ. 'रसाल' जी थे। वह उसके मंत्री भी थे। डॉ. रामप्रसाद त्रिपाठी उसके अध्यक्ष थे। 'रसिक मंडल' के सदस्य कवि गण समस्या पूर्ति कविता का आनंद लेते थे। 'रसाल' जी भी समस्या पूर्ति करते थे। वे 'परिमल' की गोष्ठियों में भी यदा-कदा जाते थे और अपनी कविताएँ सुनाते थे। उन्हें इस बात का दु:ख रहता था कि उनके जो शिष्य ब्रजभाषा में अच्छी कविता कर लेते थे, वे अब उसे छोड़कर नई कविता करने लगे। वे दु:ख से कहते, 'जगदीश गुप्त, गोपीकृष्ण गोपेश अच्छा-खासा कवित्त-सवैया रच लेते थे, ससुर बरबाद हुई गए, नई कविता लिखन लाग। अरे कविता कविता है, वा मैं नया-पुरान कैस?'

'रसाल' जी की रुचि रीतिकालीन सभी काव्य प्रवृत्तियों में रहती थी। रीतिकाव्य की अलंकारप्रियता, चमत्कार-चारुता एवं कलात्मकता तो उनके मन में बसी हुई थी। उनका संपूर्ण काव्य चाहे ब्रजभाषा में हो चाहे खड़ी बोली में; इन तीनों विशेषताओं से मंडित है। समस्यापूर्ति तो उनकी प्रिय विधा थी। उन्होंने 'समस्या' को शास्त्रीयता प्रदान करने के लिए 'माधुरी' पत्रिका में दो लेख भी लिखे थे, जिनमें 'समस्या' के लक्षण, प्रकार और परिभाषा आदि की मीमांसा की गई थी। एक बार उनके समक्ष एक समस्या रखी गई, समस्या कठिन थी—पूर्ति आसान नहीं थी—'बेगि चलिबो कौ चन्द चाबुक चलावै है।'

एक दिन 'रसाल' जी तमाम प्रोफेसरों के साथ बैठे हुए इलाहाबाद यूनिवर्सिटी स्टेडियम में स्पोर्ट्स का कार्यक्रम देख रहे थे। उनमें लड़कियाँ भी भाग ले रही थीं। लड़कियों की दौड़ शुरू हुई। उसे देखकर 'समस्या' की पूर्ति का मार्ग प्रशस्त हो गया। वहीं बैठे-बैठे रसालजी ने एक कागज के टुकड़े पर इस समस्या की पूर्ति की—

*'एक दिन दौरिबे की होड़ मैं कुमारिन कै,*
*मंजु सुकुमारिन के हौंस हिय छावै है।*
*दौरन लगीं सुखी मयंकमुखी केकिक ज्यौं,*
*मानौ धराधाम परीवृंद मंद धावै है॥*
*रेसम के तारन सौं बारन की बेनी बनी,*
*उन्नत नितंबनि पै ऐसी लहरावै है।*
*मंजु गजमामिनी मराल भामिनी पै मानौ,*
*बेगि चलिबे कौ चन्द चाबुक चलावै हैं॥*

'रसाल' जी को खड़ी बोली कविता नहीं भाती थी। संभवत: इसीलिए वे खड़ी बोली के प्रसिद्धतम कवियों की भी तीखी आलोचना किया करते थे, किंतु विडंबना यह है कि उनकी खड़ी बोली की काव्य रचनाएँ उनकी ब्रजभाषा काव्य रचनाओं से संख्या में अधिक हैं। उनकी प्रसिद्ध काव्य रचनाओं में 'काव्यपुरुष' है, जिसकी रचना सन् १९५५ में खड़ी बोली में हुई थी। 'रसाल' जी की एक ही छंद में रची गई, यह 'कालजयी' काव्य कृति है, जिसमें उनका काव्य-कौशल अपने उत्कर्ष पर है, किंतु आलोचकों की दृष्टि से यह ओझल ही रही। ब्रजभाषा में रचित दूसरी प्रसिद्ध काव्यकृति 'उद्धव व्रजांगवा' अर्थात् उद्धव शतक, जिसकी रचना सन् १९७० में हुई थी। यह भ्रमरगीत परंपरा की एक विशिष्ट काव्य-रचना है, जिसमें 'रसाल' जी के भाव और विचार का सम्यक् परिस्फुरण हुआ है। 'रसाल' जी संस्कृत साहित्य, काव्यशास्त्र और ज्योतिष के भी विद्वान् थे। शास्त्रों के गंभीर अध्येता होने के कारण उनके विचारों में एक प्रकार की दार्शनिकता थी। दार्शनिक आधार होने के कारण उनके प्रत्येक कथन में तर्क रहता था। वे शब्दों को तोड़कर प्रत्येक अंश की अर्थवत्ता पृथक् करके चमत्कार भर देते थे। उनकी इस प्रतिमा का प्रमाण 'उद्धव-शतक' की गोपियों के कथनों में मिल जाता है। एक छंद द्रष्टव्य है, जिसमें गोपियों ने अपने तर्कों के आधार पर उद्धव की खूब खिल्ली उड़ाई थी—

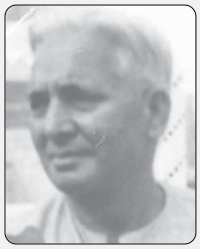

सुप्रसिद्ध समालोचक। अब तक 'उत्तरभारतेंदु युग के कवि देवीदत्त त्रिपाठी', 'दत्तद्विजेंद्र और उनका काव्य', 'डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल के नाटक और रंगमंच', 'रीति साहित्य-समीक्षा और शोध', 'साहित्यविमर्श और शोध के विविध आयाम' (आलोचना ग्रंथ), अनेक ग्रंथों का संपादन, उपन्यास 'मैं तो चाल्या अपने गाँव' कुछ विश्वविद्यालयों में शोध छात्रों द्वारा एम.फिल. तथा पी-एच.डी. उपाधियों के परिशोधन में सम्मिलित।

*'एक लव लाए त्यों जगाए बस ज्योति एक,*
*एकै आन तेजो रूप और लहते नहीं।*
*राखै जो स्नेह-नेह करत उजेरो ताकौ,*
*रीतौ नेह पात्र लै कदापि रहते नहीं।*
*जगत महातम को टारिसु महातम सौं,*
*दोष हू महातमा तमा कौ गहते नहीं।*
*दीपति है दीपति हमारी हो 'रसाल' हम,*
*प्रेम के प्रदीप बात तीखी सहते नहीं॥*

जैसा कि अन्यत्र कहा गया है—'रसाल' जी अलंकार शास्त्र के गंभीर अध्येता थे। 'अलंकार पीयूष' और 'अंतकार कौमुदी' ग्रंथ उनकी अलंकार-विषयक प्रतिभा के प्रमाण हैं। 'भाषा शब्दकोश', 'हिंदी साहित्य का इतिहास' आदि ३९ ग्रंथों की रचना उन्होंने की थी।

तत्कालीन हिंदी साहित्य में अपनी समान रुचि और ब्रजभाषा प्रेम के कारण 'रसाल' जी के परम मित्रों में सुप्रसिद्ध ब्रजभाषा कवि और उस समय के सागर विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. रामप्रसाद त्रिपाठी थे, जो आधुनिक वेशभूषा में सदैव रहते थे तथा पूरी तरह आधुनिक थे, जबकि 'रसाल' जी न केवल मध्यकालीन प्रवृत्तियों से ओत-प्रोत थे, अपितु वे वेशभूषा और रहन-सहन में भी अति सामान्य लगते थे, लेकिन दोनों में गहरी मित्रता थी। डॉ. त्रिपाठीजी को जब भी समय मिलता, डॉ. रसालजी के घर चले जाते, उनका 'कुलपतित्व' इसमें आड़े नहीं आता। उनके दूसरे मित्र सुप्रसिद्ध कवि बाबू जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' थे, जो अयोध्या राज्य के उच्चतम अधिकारी थे। वे भी अपने को राज-परिवार के सान्निध्य के अनुकूल बनाए रखते थे। वे 'रसाल' जी से आयु में लगभग ३०-३२ वर्ष बड़े थे, लेकिन इनका मित्रभाव भी अप्रतिम था। उन्होंने तो डॉ. रसालजी से अपने 'उद्धव शतक' की भूमिका भी लिखवाई थी। डॉ. रामशंकर शुक्ल 'रसाल' समाज के विविध क्षेत्रों के विशिष्ट व्यक्तियों से घिरे रहते थे। यह था उनके व्यक्तित्व और कृतित्व का आकर्षण!

'रसाल' जी जब तक रहे, अपनी विद्वत्ता, काव्य-प्रतिमा, वाक् पटुता, स्मरण शक्ति और प्रत्युत्पन्नमतित्व से अपने छात्रों, सहयोगियों और विद्वत्समाज को प्रभावित किया और उनके बीच अपनी पृथक् पहचान बनाए रखी तथा अपनी अद्वितीयता स्थापित कर दी। यहाँ हम डॉ. 'रसाल'

जी के आत्म-परिचय की संक्षिप्त विवरणिका, साथ ही उनके द्वारा इन पंक्तियों के लेखक को लिखे कुछ पत्र तथा उनके एक-दो रोचक संस्मरण, जिनसे रसालजी के व्यक्तित्व की कुछ अन्य विशेषताएँ भी ज्ञात हो सकेंगी, प्रस्तुत कर रहे हैं।

डॉ. रामशंकर शुक्ल 'रसाल' का जन्म चैत्र शुक्ल द्वितीया बुधवार संवत् १९५५ को बाँदा जिले की मऊ तहसील के ग्राम 'छींवा' में हुआ था। उनके, पितामह मंडित सुखनंदन शुक्ल थे और पितामह थे—पंडित महादेव शुक्ल, जिनके पुत्र पंडित कुंज बिहारी शुक्ल 'रसालजी' के पूज्य पिताजी थे। रसालजी तीन भाई थे। सबसे बड़े शिवगोपाल शुक्ल और अनुज पंडित रामचंद्र शुक्ल 'सरस' थे। पिता पंडित कुंजबिहारी शुक्ल स्थानीय विद्यालय में अध्यापक थे। वह संस्कृत भाषा और आयुर्वेद के ज्ञाता थे।'रसाल' जी की प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई थी। उनके जीवन में उच्चकोटि की विद्वत्ता के रूप में प्रतिफलित हुआ। वे ज्योतिष विद्या के पारंगत और आयुर्वेदिक ज्ञान के पुंज थे।

सन् १९२७ ई. में उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिंदी विषय में एम.ए. किया और उसी वर्ष कान्यकुब्ज कॉलेज लखनऊ में हिंदी और तर्कशास्त्र विषय के अध्यापक के रूप में उनकी नियुक्ति हो गई। सन् १९३६ ई. में उन्होंने डॉ. धीरेंद्र वर्मा के निर्देशन में काव्य शास्त्र पर डी.लिट् की उपाधि प्राप्त की। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिंदी-साहित्य में यह प्रथम डी.लिट्. थी। सन् १९३७ में 'रसाल' जी इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में प्राध्यापक नियुक्त हो गए। आगे चलकर जब रीडर पद पर चयन किए जाने का अवसर आया तो इनकी उपेक्षा हो गई, जिससे वह निश्चित रूप में आहत हुए होंगे। अंततोगत्वा अक्तूबर-नवंबर १९५१ ई. में वे गोरखपुर विश्वविद्यालय के हिंदी-विभाग के आचार्य एवं अध्यक्ष बन गए, जहाँ ३-४ वर्ष तक रहकर वह जोधपुर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के आचार्य एवं अध्यक्ष हो गए, जहाँ से अगस्त १९६५ में अध्यापकीय जीवन की क्रियाशीलता से अवकाश ग्रहण कर लिया। सन् १९७० में उनकी सुप्रसिद्ध ब्रजभाषा काव्य-रचना 'उद्धव शतक' प्रकाशित हुई, जिसकी भूमिका प्रोफेसर आनंद प्रकाश दीक्षित ने लिखी थी। इस रचना से उनकी कीर्ति में और वृद्धि हुई। अवकाश-ग्रहण के पश्चात् रसालजी इलाहाबाद आ गए और अपने द्वारा बनवाए मम्फोर्डगंज के मकान में रहे, जहाँ १९ मई, १९८० को देहावसान हो गया। हिंदी साहित्य का एक अनूठा विद्वान् भौतिक देह छोड़कर सदा के लिए चला गया।

'रसाल' जी बड़े ही छात्र वत्सल अध्यापक थे। उनके प्रिय शिष्यों में डॉ. जानकीनाथ सिंह 'मनोज' थे, जिन्होंने उनके निर्देशन में छंदशास्त्र पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय से डी. फिल. किया था। कालांतर में लखनऊ विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में प्राध्यापक पद पर उनकी नियुक्ति हो गई थी। अचानक उनका देहावसान हो गया और उनका शोध-प्रबंध अप्रकाशित रह गया।

'रसालजी' चाहते थे कि शोध प्रबंध प्रकाशित हो जाए, इस संबंध में उन्होंने 'मनोजजी' के अग्रज चौधरी त्रिभुवन नाथ सिंह 'सरोज' को पत्र भी लिखा, लेकिन वह शोध-प्रबंध उस समय तक प्रकाशित न हो सका। हालाँकि कालांतर में वह छप गया था।

अपने शोधकार्य के संबंध में मैं डॉ. 'रसालजी' से मिलना चाहता था, इस हेतु सन् १९५९ में अक्तूबर-नवंबर में किसी समय मैंने उन्हें पत्र लिखा था, मेरे पत्र के उत्तर में उनहोंने मुझे जो पत्र लिखा था, वह अविकल यहाँ प्रस्तुत है—

श्री गोरखपुर विश्वविद्यालयात्
२/१२/५९

प्रियवर शुक्लजी

पत्र मिला, बहुत सराहनीय बात है कि आपने 'समस्या पूर्ति काव्य' को अपने शोधाध्ययन का विषय लिया है। ठीक है, मेरे दो लेख 'माधुरी' में इस विषय पर छपे थे। आपने उन्हें देखा, अच्छा किया। इस विषय पर मेरे पास पर्याप्त सामग्री थी। मैंने बहुत श्रम के साथ उसे एकत्र किया था, अब इधर बहुत समय से मैंने देखा नहीं, अब आपके कारण स्मरण हुआ, अब मैं प्रयाग जाने पर घर में देखूँगा, उस सामग्री का क्या हाल है—यही है कि आप देखकर यहाँ आने का कष्ट करें या प्रयाग पहुँचें। दिसंबर २३ के बाद मैं अवकाश में दिनांक २/१/६० तक वहीं रहूँगा, तब आपसे इस विषय पर विशेष बात हो सकेगी, आप हो सके तो अपने साथ अपने विषय की विषयानुक्रमणिका भी लेते आएँ, तब अच्छा होगा।

मैं आपकी बड़ी प्रसन्नता से यथासंभव सहायता करूँगा। कार्य सुंदर है। हाँ, श्रमसाध्य है—खोज की वस्तुत: यही आवश्यकता है। आप यदि बिसवाँ जाएँ तो 'सरोज' जी को शुभाशीष कहें, प्रिय जानकी के निबंध प्रकाशन में क्या हो रहा है? लिखिए। शेष ठीक है।

तवैव—रा.श.शु.कृ 'रसाल'

दयाशंकर शुक्ल
१५, बुलंद बाग, सिटी स्टेशन
लखनऊ

इस पत्र के उत्तर में मैंने उन्हें पत्र लिखा, जिसका उत्तर भी उन्होंने तुरंत दे दिया।

श्री गोरखपुर वि. विद्यालयात्
भौमे ८/१२/५९

प्रियवर शुक्लजी,

सस्नेह शुभाशीष! कृपा कार्ड मिला, मुझे खेद है कि इधर मेरा समय बँट चुका है। मैं दिनांक १६ को एक कॉलेज को देखने जा रहा हूँ—उसे बी.ए. कक्षाओं के लिए स्वीकृति देने का प्रश्न है। इसी के लिए उस कॉलेज को मुझे देखना पड़ेगा, १७ को भी वहाँ रहना पड़ेगा। उसके पश्चात् फिर १८ को यहाँ से चल दूँगा और प्रयाग में एक कार्य कर २१ को प्रतापगढ़ के एक कॉलेज को देखूँगा, उसे भी बी.ए. के लिए स्वीकृति देते का प्रश्न विश्वविद्यालय में है। २१, २३ और स्यात्‌ को मैं वहाँ रह प्रयाग जाऊँगा, फिर २ जनवरी को यहाँ आ सकूँगा। अतएव आप अपनी सुविधा देखें, यदि आप १६ से पूर्व आवें तो १२ के बाद इधर मैं फिर व्यस्त हूँ, मुझे अन्यत्र भी कदाचित् जाना पड़ेगा। मैं यहाँ विश्वविद्यालय

के पास दीवानी कचहरी के निकट कैंटूनमेंट पुलिस स्टेशन के समीप रहता हूँ। स्टेशन से रिक्शे पर १५ मिनट का मार्ग है। यदि आप प्रयाग में आएँ तो प्रयाग स्टेशन से मम्फोर्ड गंज में आकर मेरे मकान पर आएँ, रास्ता सीधा है, रिक्शे से चार आने में आप सीधे आ सकेंगे। आप अपने साथ अपना पूर्व प्रबंध भी लेते आएँ तो अच्छा है, अवश्य कार्य करें, अच्छा कार्य है, विषयानुक्रमणिका भी आवश्यक है, मैं यथासाध्य आपकी सहायता करूँगा, इसके लिए आप चिंता न करें।

हाँ, प्रियवर सरोज को पत्र लिखिए और प्रिय जानकी के निबंध के छपाने में शीघ्रता करने के लिए कहें, यह कार्य भी आवश्यक है। इसमें विलंब कर रहे हैं। मेरा विचार लखनऊ आने का था, किंतु कार्य कुछ आ रहे हैं, ऐसे कि कदाचित् अवकाश न मिल सकेगा। शेष सब ठीक है, प्रभु आपको सफलता दे।

तवैव

रा.श. शुक्ल 'रसाल'

दयाशंकर शुक्ल

प्राध्यापक, क्वींस कॉलेज

लखनऊ

उपर्युक्त दोनों पत्रों को पाने के बाद मैंने गोरखपुर जाकर डॉ. 'रसाल' जी से मिलने का निश्चय किया। दिसंबर १९५९ में मैं गोरखपुर गया। स्टेशन से उतरकर मैं उनके निर्देशानुसार रिक्शा से उनके निवास स्थान की ओर चल पड़ा। उनके घर के आस-पास पहुँचकर किसी व्यक्ति से डॉ. 'रसाल' जी का घर पूछा तो उसने सड़क की दाहिने ओर एक मकान में सामने लॉन में डॉ. आनंद प्रकाश दीक्षित से बात करते हुए सज्जन की ओर संकेत किया कि वे बैठे हैं। मैंने कभी डॉ. 'रसाल' जी का न फोटो देखा था और न कभी उनसे मिला ही था और फिर एक विश्वविद्यालय के प्रोफेसर तथा अध्यक्ष की मन में जो छवि बनी थी, उससे बिल्कुल भिन्न एक अत्यंत सामान्य सी छवि देखकर थोड़ा विस्मय हुआ। डॉ. दीक्षितजी ने डॉ. 'रसाल' जी से हमें परिचित कराया। जिस सहजता से 'रसाल' जी हमसे मिले, वह हमारे सोच के परे था। मैंने उनके चरण छुए, उन्होंने प्रसन्न मन से हमें आशीर्वाद दिया।

उनकी सादगी देखकर मैं अत्यधिक प्रभावित था। स्मरण हो आई उन ऋषियों-मुनियों और मनस्वियों की जीवन कथा, जिन्होंने ज्ञानार्जन और महान् ग्रंथ-लेखन में अपने को इतना लीन रखा कि अपनी देह को मनोरम बनाने में कोई महत्त्व नहीं दिया। 'रसाल' जी हमें एक साधारण किसान से देखने में लगे, विश्वविद्यालय के प्रोफेसर जैसे बिल्कुल नहीं। उनके व्यवहार में तनिक भी औपचारिकता नहीं लगी। क्षणभर में हमारा संकोच चला गया। उन्होंने अपने ज्योतिषज्ञान की कुछ फुलझड़ियाँ छोड़कर हमें हँसाने और आश्वस्त करने की पूरी कोशिश की। शोधकार्य की चर्चा हुई और वहीं प्रयाग में जाकर डॉ. साहब से पुन: मिलने का कार्यक्रम बन गया।

**परिवार के सभी सदस्यों के व्यवहार से मुझे ऐसा नहीं लगा कि मैं किसी अपरिचित घर में रह रहा हूँ। एक परिवार के सदस्य के रूप में रहते हुए पता ही नहीं चला कि २-३ दिन कैसे व्यतीत हो गए। डॉ. साहब के साथ खूब साहित्यिक चर्चा हुई। उन्होंने अपने कुछ संस्मरण सुनाए। अपने नाम को औरों द्वारा गलत लिखे जाने की चर्चा की, खड़ी बोली के प्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण गुप्त की खूब आलोचना की। एक बार बाहर गए थे, तब उन्होंने कविवर पंतजी को हमें दूर से दिखलाया, कहा, वो देखो पंत को, वह लेडीज कोट पहने हुए हैं', मैंने मन-ही-मन पंतजी को प्रणाम किया।**

श्रद्धेय डॉ. 'रसाल' जी के उक्त दोनों पत्र, उनके हृदय की उदारता, छात्रवत्सलता, पत्रोत्तर देने की तत्परता, शोधार्थी को उत्साहित करने के लिए उसके शोध विषय की प्रशंसा करना आदि आदर्श अध्यापक के द्योतक हैं। अंतत: जनवरी १९६० में मैं प्रयाग गया और उनके द्वारा निर्देशित मार्ग से मैं उनके निवास स्थान मम्फोर्ड गंज पहुँच गया। डॉ. साहब ने स्नेहपूर्वक अपने घर में मुझे रखा। परिवार के सभी सदस्यों के व्यवहार से मुझे ऐसा नहीं लगा कि मैं किसी अपरिचित घर में रह रहा हूँ। एक परिवार के सदस्य के रूप में रहते हुए पता ही नहीं चला कि २-३ दिन कैसे व्यतीत हो गए। डॉ. साहब के साथ खूब साहित्यिक चर्चा हुई। उन्होंने अपने कुछ संस्मरण सुनाए। अपने नाम को औरों द्वारा गलत लिखे जाने की चर्चा की, खड़ी बोली के प्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण गुप्त की खूब आलोचना की। एक बार बाहर गए थे, तब उन्होंने कविवर पंतजी को हमें दूर से दिखलाया, कहा, वो देखो पंत को, वह लेडीज कोट पहने हुए हैं', मैंने मन-ही-मन पंतजी को प्रणाम किया।

मैं आदरणीय 'रसाल' जी के साथ साहित्यिक चर्चा में ऐसा डूबा कि उनसे 'समस्यापूर्ति' संबंधी सामग्री की बात करूँ, यह विषय मैं स्वयं नहीं उठा पाया, सोचा था डॉ. साहब स्वयं अपनी 'पूर्तियाँ' तथा अन्य लेखादि देंगे। इस संबंध में मैंने उनसे कोई प्रश्न नहीं किया। उनके सान्निध्य से जिस साहित्यिक सुख की प्राप्ति हुई तथा 'बतरस' का जो आनंद उनके साथ मिला, वह हमारे शोधकार्य के महत्त्व से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण था। सत्संग का ऐसा अवसर दुर्लभ था। मैं अपने को बड़ा भाग्यशाली मानता हूँ कि मुझे ऐसे महान् विद्वानों के साथ रहने का सुअवसर मिला।

उपर्युक्त पत्रों और संस्मरणों के द्वारा श्रद्धेय 'रसाल' जी के व्यक्तित्व के अनेक अनुद्घाटित पक्ष हमारे समक्ष आ गए हैं। समग्रत: हम कह सकते हैं कि अपने समकालीन विश्वविद्यालय के आचार्यों एवं अध्यक्षों से वे सर्वथा भिन्न थे, अनूठे थे। उनमें उच्चकोटि की विद्वत्ता के साथ-साथ विनम्रता और उदारता थी, वे छात्र-वत्सल थे, बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे। उनकी स्मृति को कोटिश: नमन!

१-बी, ८०६, ट्रिनिटी टावर्स, खराड़ी
पुणे-४११०१४ (महाराष्ट्र)
दूरभाष : ०९८२५६०४७१०

# ब्रज बीथिन मच रही होरी

● विभा सिंह

वसंत आते-आते संपूर्ण ब्रज प्रदेश और राधा-कृष्ण प्रेमी भक्त अजीब मस्ती और प्रेम में मतवाले होने लगते हैं। फाल्गुन मास की सूचना देनेवाला यह वसंत भी इस समय उत्सव बन जाता है। होली राधा-कृष्ण की प्रेम माला का ही एक अंश है। प्रत्येक ब्रजवासी अपने तन-मन-धन प्राण को फाल्गुन में बरसने वाले रंग में सराबोर कर लेना चाहता है। उस पर बरसाना, जो कि श्री राधारानी का निवास स्थान है, यहाँ के युवक-युवतियाँ तो होली के पवित्र रंग में रँगने और रँगवाने के लिए उतावले हो उठते हैं, क्योंकि इसी दिन श्रीजी अपनी प्रिय सखियों के साथ, श्रीकृष्ण अपने ग्वाल-ग्वालों के साथ, आमने-सामने होली खेलने को डटे थे। आज भी यह उत्सव उसी परंपरा में मनाया जाता है। इनकी अटूट आस्था है कि आज के दिन होली खेलने किसी-न-किसी रूप में श्रीराधाजी जरूर आती हैं।

### विजय और पराजय का अनूठा महोत्सव होलिका-दहन

विजय और पराजय का यह अनूठा महोत्सव होलिका-दहन से पूर्व फाल्गुन में शुक्लपक्ष की नवमी के दिन से प्रारंभ होता है। बरसाने की यह अद्‌भुत रंग-रस प्रेम भरी रँगीली होली। वैसे वसंत पंचमी के बाद से ही लोग अबीर-गुलाल के मद में मस्त हो जाते हैं। परंतु बरसाने की इस लीला का प्रारंभ पांडेलीला से होता है। परंपरानुसार बरसाने से एक पंडित नंदगाँव, जो भगवान् श्रीकृष्ण का निवास-स्थान है, के गोपों (गोस्वामीगण) को बरसाने में श्रीजी के साथ होली खेलने का निमंत्रण देने जाता है। पूर्व परंपरा के अनुसार, कहा जाता है कि कल राधाजी अपनी सखियों के साथ होली खेलेंगी, तुम लाला (श्रीकृष्ण) के साथ सब लोग होली खेलने आओ। इसी प्रकार अष्टमी के दिन नंदगाँव का भी एक पांडे (पंडित) राधाजी को निमंत्रण देने आते हैं कि हमारे लाला के साथ श्रीजी होली खेलने नंदगाँव आएँ। नंदगाँव जाने से पूर्व यह अद्‌भुत मधुर लीला श्रीराधाजी के मंदिर के प्रांगण में होती है।

### विश्वविख्यात है बरसाने की लट्ठमार होली

बरसाने में श्रीराधा का बहुत सुंदर और दिव्य मंदिर है, जो ब्रह्म नाम के पर्वत के ऊपर चोटी पर बना है और नंदगाँव में श्रीकृष्ण का मंदिर भी शिव नाम के पर्वत पर बना हुआ है। इन दोनों गाँव के बीच बहुत थोड़ी दूरी है। आज भी इन दोनों गाँव के रिश्तेदारी भी इसी प्रकार चलती है कि हम लड़कीवाले हैं और नंदगाँव वाले लड़केवाले। पांडेलीला को लड्डू लीला भी कहते हैं। यह एक विशाल रूप में होती है। लाखों लोग सुबह से अपनी-अपनी जगह घेरकर बैठ जाते हैं। जो भी पांडे बनता है, सुंदर

सुपरिचित लेखिका। छोटी-बड़ी सभी पत्र-पत्रिकाओं में पिछले १५ वर्षों से आलेखों का निरंतर प्रकाशन। संप्रति स्वतंत्र लेखन।

कपड़ों में खूब सजा-सँवरा रहता है। सिर पर लड्डुओं का घड़ा रहता है। बड़े-बड़े मोतीचूर के लड्डू होते हैं। इस लीला का आयोजन लगभग ४ बजे होता है। पहले समाज गायन होता है। पांडे घंटों श्रीराधारानी के श्रीविग्रह के सामने उछल-उछलकर नृत्य करता है। फिर चारों तरफ बैठे भक्त लोगों को लड्डुओं को बाँटता है। कुछ समय के लिए लड्डुओं की बरसात सी होने लगती है। मानो लड्डू फेंके जाते हैं। जो एक तरफ इकट्ठे रखे रहते हैं। बरसाने की चपल बालाएँ उस पांडे के साथ खूब ठिठोली करती हैं, उसके गालों पर गुलाल मलती हैं। मीठी-मीठी गालियाँ सुनाती हैं, उनके अनुसार उनकी बेटी श्रीराधारानी की ससुराल से आया जवाई का भाई है। होली के इसी मौके पर एक पदगान होता है—

*नंदगाँव को पांडे आयो,*
*ब्रज गोपिन ने पकड़ नचायो,*
*लड्डू खूब खवायो,*
*ब्रज गोपिन के संग ले गुलालनिधि,*
*केसर कीच डुबायो,*
*लहँगा-फरिया लाइ सखिन संग*
*सखा को सखी बनायो।*

इन लोगों के भाव के अनुसार उस पांडे की रक्षा राधारानी ही कर पाती हैं। मंदिर में बोरियों में कई क्विंटल गुलाल प्रसादी बना दिया जाता है। चारों तरफ का वातावरण गुलाल से सतरंगा हो जाता है। उसी बीच श्रीविग्रह (राधारानी) के सामने पांडे को लाया जाता है। राधारानी की तरफ से सम्मान दिया जाता है और उनका निमंत्रण स्वीकार कर लिया जाता है। अंत में फूलों का हार पहनाकर सम्मानपूर्वक विदा कर दिया जाता है।

### संगीत के साथ शुरू होती रंग-गुलाल की बौछार

दूसरे दिन सुबह से ही राधारानी के जयकारे शुरू हो जाते हैं। मतवाले भक्त जो रंग-गुलाल से लिपटे रहते हैं, अलग-अलग शहरों को

अपनी-अपनी टोली बनाकर सर्वप्रथम गह्वर वन, जो राधारानी के मंदिर के चारों तरफ है, सबकी परिक्रमा करते हैं, गाते हैं, नाचते हैं। ढप और ताल की धमार सभी के हृदयों में धमाचौकड़ी मचाती है। इस समय यहाँ स्त्री-पुरुषों की भेदक रेखाएँ समाप्त हो जाती हैं। कोई भी किसी के रंग लगा सकता है। जहाँ तक कि इस भावपूर्ण होली में वृद्ध भी युवा बन जाते हैं। वह भी युवकों के समान ठिठोली करने और उछल-कूद से बाज नहीं आते। इसीलिए इस अनोखी रसमयी 'होली' को 'होरा' नाम से संबोधित किया गया है। चूँकि यह संपूर्ण संसार में अपने आप में अलग है, अत: जग 'होरी', ब्रज 'होरा' नाम से विख्यात है। बरसाना नगरी में हजारों टोलियाँ रंग गुलाल उछालती, कीर्तन करती हुई शाम की लट्ठमार होली देखने का इंतजार करती हैं।

### स्त्रियाँ करती हैं हुरियारों पर लाठियों से प्रहार

यहाँ की होली लीला इसलिए सबसे अनोखी मानी जाती है, क्योंकि रंग के साथ लाठी और ढाल के साथ खेली जाती है। यह ढाल गैंड़े की खाल की होती है, जिसमें पकड़ने को एक हाथ डंडा लगा रहता है। इस ढाल की ये लोग पूजा करते हैं। प्रत्येक होली खेलनेवाली व्रजवनिता के हाथ में एक बड़ी लाठी होती है। घूमघुमारा सुंदर लहँगा-चुनरी व आभूषण पहनकर रँगीली गली (जो होली खेलने की ही विशेष गली है) में तैयार खड़ी रहती हैं। सर्वप्रथम श्रीजी के मंदिर में होली होती है। बाद में नंदगाँव के गोप मंदिर में से उतरकर नीचे आते हैं। वहीं आपस में ये धुआँधार मधुर गालियाँ होती हैं। एक टोली बरसाना महिलाओं की, दूसरी टोली नंदगाँव के गोस्वामी गोपों की रहती है। महिलाएँ और पुरुष दोनों घूँघट लगाकर नृत्य करते हैं, इसके बाद शाम को ५ बजे के लगभग एक-एक गोस्वामी अपने सिर पर पागा बाँधे रहते हैं। यह पाग राधाकृष्ण के नाम लेकर बाँधते हैं। कहते हैं, ठाकुर ठकुरानी इन्हें दिव्य शक्ति देते हैं, वरना सिर पर ढाल (जो गैंड़े की खाल की होती है) रखकर मैदान में उतरते हैं। महिलाएँ धड़ाधड़ लाठी के जोरदार प्रहार करती हैं। भगवान् शक्ति न दे तो साधारण व्यक्ति इन प्रहारों को नहीं झेल सकता। इस दिन एक बीमार-कमजोर गोप राधारानी और कन्हैया का नाम लेकर पगड़ी बाँधकर, सिर पर ढाल रखकर होली की लाठी खाने को तैयार हो जाता है। यह यहाँ की अनुपम होली का मनोरम दृश्य होता है, जिसे देखने लाखों व्यक्ति बाहर से आते हैं। ढाल और लाठी की इस होली खेलने का अधिकार केवल इस नगरी की बहुओं को ही है। अविवाहित कन्याओं को यह अधिकार नहीं है। लाठी खेलने के बाद बहुत सारे लोग इन लोगों की चरण रज लेते हैं।

### लाठी मार होली की पौराणिक गाथा

इस लाठी मार होली के विषय में एक पौराणिक गाथा है। व्रजवासियों ने ब्रजलीला के अंतर्गत राधाकृष्ण का विवाह कराया है। इसी विवाह के अंतर्गत यह होली उत्सव मनाया गया है। भाव इस प्रकार है कि नंदगाँव से भगवान् श्रीकृष्ण कन्हैया दूल्हा बने हैं, शान से अपने सखाओं के साथ चले आ रहे हैं। साथ ही राधा की सखियों से चुहल की योजना बनाते आ रहे हैं, क्योंकि श्रीकृष्ण चौंसठ कला के अवतार माने जाते हैं, तो श्रीराधेजू शत चौंसठ कला की हैं, अत: वे सबकुछ जान गईं कि कान्हा क्या चाह रहे हैं। राधा ने सोचा कि कहीं हमारी सखियाँ हार न जाएँ तो चंद्रवली और ललिता (जो राधा की प्रिय सखी हैं) भेष बदलना जानती थीं। श्रीदामा व मधुमंगल (श्रीकृष्ण के सखा) का भेष बदलकर बारात में भेज देती हैं। वहाँ से दोनों सखियाँ कृष्ण-बलराम का अपहरण कर लाती हैं। लाकर श्रीराधाजी के दरबार में खड़ा कर दिया। कृष्ण भौंचक्के रह गए। वहीं पर सखियों ने कृष्ण-बलराम को मार लगाई। बाद में कन्हैया ने राधे से हार मान ली। फिर राधाकृष्ण का मधुर मिलन हुआ है। इसी परंपरा में यह होली आज भी मनाई जाती है। कमल-छड़ी का रूप लंबी लाठी ने ले लिया है। ऐसी होली जगत् में कहीं भी नहीं होती। अभी भी यहाँ शादियों में दूल्हा-दुलहन की छड़ी खेलने की प्रथा है। हल्दी और रंग लगाने की भी प्रथा है। यह उत्सव संपूर्ण रूप से भगवान् कृष्ण और राधा के लिए ही मनाया जाता है। इस उत्सव में नंदगाँव से जो गोस्वामीगण होली खेलने आते हैं, पहले बरसाने में ही पीली पोखर एक निश्चित स्थान है, जहाँ रुककर के शृंगार करते हैं। पगड़ी बाँधते हैं। भाँग घोंटी जाती है। फिर भंग खाकर अपनी-अपनी ढाल सँभालते हैं। बरसाने वाले गोस्वामी लोग उनका स्वागत करते हैं। मंदिर में आदरपूर्वक लाते हैं, फिर कुछ ग्वाले ढाल लिये भागते चले आते हैं। दर्शक मूक बैठे देखते रहते हैं।

### दर्जनों लाठी के वार सहकर भी पीछे नहीं हटते हुरियारे

समाज गायन के पश्चात् मंदिर में ही पहले टेसू के फूल और रंग गुलाल से सराबोर होली होती है। उसके बाद नंदगाँव के गोस्वामी बरसाने की वधूटियों से होली खेलने को नीचे गली में उतर आते हैं। बहुओं के नए सुंदर कपड़ों पर कोई एक रंग छींटा तक भी नहीं डालता है। कितना सुंदर दृश्य होता है। सजी हुई गोपियाँ उछल-उछलकर लाठी प्रहार से होली खेलती हैं। चारों तरफ भक्त दर्शक छाए रहते हैं। राधारानी के जयकारे गूँजते रहते हैं। 'आज बिरज में होली रे रसिया!' ऐसा लगता है कि प्रेम और भक्ति रस एक रूप होकर आज साक्षात् स्वरूप में बरसाने की इस रंगीली गली में छाए हुए हैं। यह दृश्य देखकर प्रत्येक व्यक्ति रोमांचित हो उठता है। अनुभव होता है कि राधारानी अपने भक्तों को शक्ति दे रही हैं।

### संगीत रंग और नृत्य से शुरू होता रसिया गायन

इसके दूसरे दिन बरसाने के गोस्वामीगण नंदगाँव होली खेलने जाते हैं। यहाँ की होली में यह एक सबसे विशेष बात होती है कि इन्हीं में से एक व्यक्ति लंबी-सी झंडी लिये रहता है, जो राधारानी का ही प्रतीक होता है। मंदिर से ही झंडी दी जाती है। इस झंडी को लेकर एक आदमी सबसे आगे-आगे भागता चलता है। दूर से ही देखकर लोग पता लगा लेते हैं कि होली की टोली आ रही है। आगे-आगे झंडी के रूप में राधारानी आ रही हैं। इस झंडी को कोई छू नहीं सकता, गिरा नहीं सकता है। अगर किसी ने गिरा दी तो उस पक्ष की हार मानी जाती है। अभी तक जीत ही होती आई है। उस झंडी को कन्हैया के मंदिर में ले जाया जाता है। भाव यह है कि राधा-कृष्ण को मिलाते हैं। फिर होली शुरू होती है। शाम को लौटकर वह झंडी लेकर एक आदमी भागता है, जयकारे लगाता आता है। जैसे जंग जीत आए हों, रँगीली गली में वह झंडी गाड़ देते हैं। वहाँ खुशियाँ मनाई जाती है कि हमारी किशोरी श्रीराधाजी विजयी हो गई हैं, हम विजय पताका लेकर आए हैं। महिलाएँ खूब नृत्य करती हैं। फिर वे गोपी मंदिर में पहुँच जाती हैं। कैसी अनुपम है यह होली, आसमान सतरंगा, गुलाल-अबीर की बदली सी छा जाती है। रंग की बौछारों से सभी को प्रेमपूर्वक भिगोते हैं। सभी उस रंग को राधा-कृष्ण की होली का प्रसाद समझकर जरूर डलवाते हैं। होली का ऐसा समाँ बँधता है, ऐसा लगता है, जैसे ऊपर मंदिर में बैठी श्रीश्यामा श्यामसुंदर के साथ बैठी यह अनुपम आनंद की अनुभूति करा रही हैं, साथ ही अपने भक्तों पर कृपा की बरसात भी कर रही हैं। इसी को देखने के लिए ही तो हजारों रुपए खर्च करके ब्रज की होली मनाने आते हैं लोग।

'विभावरी', जी-९, सूर्यपुरम्, नंदनपुरा
झाँसी-२८४००३ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९४१५०५५६५५

दोहा

# हाथ लिये पिचकारियाँ...

● **अणिमा सिंह**

कोयल कूकी बाग में, फिर बौराए आम।
महक रहे हैं बाग वन, महक रहे हैं ग्राम॥

अलसी ने कलसी धरी, सिर पर भरकर रंग।
पग में घुँघरू बाँधकर, नाची अरहर संग॥

सर्दी वापस घर गई, खिली-खिली है धूप।
हाथ लिये है आईना, प्रकृति निहारे रूप॥

हवा बसंती बह चली, घायल हुआ अनंग।
घूम-घूम इठला रही, तितली फूलों संग॥

खेतों में सरसों खिली, उड़ा बसंती रंग।
पीली चादर ओढ़ ली, धरती ने अंग-अंग॥

नई कोपलें खिल गईं, विकसे नित नवगात।
हुलस-हुलसकर मिल रहे, जैसे शिशु नवजात॥

गुलदाऊदी, मोगरा, गेंदा और गुलाब।
फिर से लेकर आ गए खुशबू का सैलाब॥

चटक चाँदनी हो गई, पागल हुआ चकोर।
विरह व्यथा के साथ ही, होती निशदिन भोर॥

काजल से चिट्ठी लिखी, प्रिय ने प्रिय के नाम।
कब आओगे प्राणप्रिय, लिख भेजो पैगाम॥

होली लेकर साथ में, आ पहुँचे ऋतुराज।
नर-नारी रंग खेलते, छोड़ के सारे काज॥

झाँझ-मंजीरे बज रहे, संग बजी मृदंग।
होरिहारे गाने लगे, होली-टोली संग॥

हाथ लिये पिचकारियाँ, झोली भर-भर रंग।
एक दूजे को रँग रहे, भीग रहे हैं सब अंग॥

कक्का ने भी रँग दिए, फिर कक्की के गाल।
लाज-शरम से हो गई, कक्की लाम गुलाल॥

हवा नशीली हो गई, जैसे पी हो भंग।
याद रहेगी साल भर, होली की हुड़दंग॥

२६ एच.आई.जी.
मम्फोर्डगंज, इलाहाबाद
दूरभाष : ०९५०६२६६८७०

# प्रेम की जीत

● देवकीनंदन शुक्ल

''बा! दादी बोली हैं कि कल मेरा जन्मदिन है। इस बार मैं आपसे एक ट्रेन और एक लूडो लूँगा।''

''हाँ दुलारे, मैं जरूर दूँगा।'' दयानंद बाबू ने सोना को अपने गले लगाते हुए कहा।

सोना दयानंद बाबू की नौकरानी कलावती का पोता था। जब वह एक साल का भी नहीं हुआ था, तभी से कलावती उसे साथ लेकर काम पर आती थी। बहू कमला एक स्कूल में झाड़ू-पोंछा लगाने तथा पानी पिलाने का काम करती थी। प्रधानाध्यापक ने इतने छोटे बच्चे को लेकर आने से मना किया था। बेटा किशन दैनिक मजदूरी कर परिवार के पोषण में सहयोग देता था।

एक दिन जब सोना को नींद आने लगी थी तो कलावती ने दयानंद बाबू से अनुमति लेकर उसे उनके बिस्तर पर लिटा दिया था। सोना ने चादर गीली कर दी थी। पहले दयानंद बाबू को जैसा भी लगा हो, लेकिन धीरे-धीरे सोना की तुतली बोली, उसका ठमक-ठमककर चलना, टी.वी. के एनिमल प्लेनेट चैनल पर जंगली जानवरों को देखकर डरना, उन्हें भाने लगा और वह दिन-प्रतिदिन उसकी ओर खिंचते चले गए।

दयानंद बाबू कॉलेज के एक सेवानिवृत्त प्राध्यापक थे। सादा जीवन और उच्च विचार उनके व्यक्तित्व की परिभाषा थी। नियति ने उन्हें संतान सुख से वंचित रखा था। धर्मपरायणा पत्नी कुछ दिन पूर्व गंगा-स्नान करते समय उसमें अचानक आई तेज धार में बह गई थी। अब वे बिल्कुल अकेले थे। उनके अंदर एक ऐसी शून्यता भर गई थी, जिसकी पीड़ा से वे छट-पट करते रहते थे।

सोना ने बहुत हद तक दयानंद बाबू की इस शून्यता को भरकर उनके जीवन में खुशियाँ ला दी थीं। 'बाबा' के संबोधन से वे असीम आनंद का अनुभव करते। उसके प्रत्येक जन्मदिन पर वे उसे नए-नए कपड़े और विभिन्न प्रकार के खिलौने उपहारस्वरूप देते। कलावती जब तक काम करती रहती, वे सोना के साथ खेलते रहते। सोना कभी उछलकर उनकी गोद में बैठ जाता तो कभी उनके कंधे पर सवार होकर घुमाने को कहता। एकांत होते ही दयानंद बाबू दार्शनिक बन जाते और अपने-पराए के भेद को निरर्थक मानकर इस निष्कर्ष पर पहुँचते कि संसार में यदि कोई सार्थक वस्तु है तो वह प्रेम है, जो सही अर्थों में अपनत्व का प्रतीक है।

सोना जब पाँच वर्ष का हुआ तो दयानंद बाबू ने कलावती से उसका किसी अच्छे स्कूल में नाम लिखवाने को कहा। कलावती ने जब प्राइवेट

सुपरिचित लेखक। 'पंथ और परिणति', 'आँसू बने संगीत' (उपन्यास); 'नई रोशनी', 'तृभुवन लाल की यमलोक यात्रा' (कथा-संग्रह) चर्चित। पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। राष्ट्र गौरव, भारत भाषा भूषण, विद्या वारिधि तथा अन्य कई सम्मान। तीन बार विदेशभ्रमण। त्रैमासिक 'तृणगंधा' का प्रकाशित।

स्कूल में दो सौ रुपए प्रतिमाह ट्यूशन फीस अपनी औकात से बाहर बताई तो दयानंद बाबू ने दयार्द्र होकर इस खर्च को वहन करने का जिम्मा ले लिया। सोना की पढ़ाई का श्रीगणेश हो गया। तीसरे पहर जब कलावती दूसरी पाली का काम करने आती तो सोना को साथ ले लेती। दयानंद बाबू उसके साथ मन बहलाते और खेल-खेल में उसे पढ़ाते भी रहते।

दयानंद बाबू के भाड़े का मकान उसी मोहल्ले में था, जहाँ कलावती अपने परिवार के साथ थोड़ी ही दूर पर रहती थी। ठीक ऐसे ही समय मकान मालिक से किसी बिंदु पर झंझट हो जाने के कारण एक दूसरा मकान ढूँढ़ना पड़ा, जो वहाँ से दो किलोमीटर दूर, एक दूसरे मोहल्ले में था। छोड़ने के समय एक बड़ा ही कारुणिक दृश्य उपस्थित हो गया। अपने सपनों का महल धराशायी होते देख कलावती और उसका बेटा दोनों हताश थे। सोना रो रहा था। दयानंद बाबू इस दृश्य को देखकर स्वयं विचलित हो उठे। उन्होंने तुरंत सोना को गोद में उठाकर कहा, ''नहीं, सोना की पढ़ाई बंद नहीं होगी और न यह हमसे अलग ही होगा। किशन प्रत्येक रविवार और छुट्टी के दिन इसे मेरे पास ले आया करेगा। शाम को आकर घर वापस ले जाएगा।''

''लेकिन इतनी दूर दो बार पैदल जाना-आना मेरे लिए कैसे संभव है सर? आप तो देख ही रहे हैं कि मैं रोज कमाने-खानेवाला मजदूर हूँ। एक दिन भी घर बैठ जाने से उसका असर हमारे चूल्हे पर पड़ता है।''

''घबराओ नहीं, किशन! तुम्हारी कठिनाइयाँ मैं समझता हूँ। तुम एक पुरानी साइकिल खरीद लो, मैं पैसे दूँगा। अपनी सामर्थ्य के अनुसार तुम मुझे किश्तों में चुका देना।''

दयानंद बाबू के इन शब्दों को सुनकर किशन की आँखों में कृतज्ञता के आँसू छलक पड़े। पुरानी साइकिल पाँच सौ में मिली। तीन महीने में तीन सौ चुकाने के बाद उसने हाथ जोड़ लिये। दयानंद बाबू ने शेष माफ कर दिए।

प्रेम सर्वग्राही है। वह अमीर-गरीब, ऊँच-नीच, जाति-धर्म की सीमाओं में बँधा नहीं होता। प्रेम स्वत: एक धर्म है, जिसके पालन से

अंतरात्मा शुद्ध हो जाती है और मनुष्य समभाव का मर्म समझने लगता है। नई योजनानुसार सोना दयानंद बाबू के पास उनके नए मकान में जाने-आने लगा। भावात्मक निकटता ने भौगालिक दूरी को मिटा दिया था। रविवार आने से छह दिन पहले दयानंद बाबू बेचैनी से काटते। सोना के आने का समय सात बजे निर्धारित था। पाँच मिनट भी अधिक हो जाने से दयानंद बाबू असहज होकर खिड़की से बाहर झाँकने लगते। आते ही सोना उनसे लिपट जाता और वे उसे प्यार से चूम लेते। दिनभर वे उसके साथ खेलते और उसे पढ़ाते। कभी-कभी उसे पार्क और चिड़ियाखाना घुमाने ले जाते। शाम में लौटते समय सोना उन्हें 'बाय-बाय' कहता। दयानंद बाबू गद्‌गद होकर उसका प्रतिदान करते।

समय बीतने लगा। दयानंद बाबू जीवन के खोए सत्त्व को पुन: प्राप्त कर आनंदित थे। सोना उनके स्नेहसिक्त सान्निध्य में बढ़ रहा था। देखते-देखते वह सात वर्ष का हो गया। एक दिन उसने बड़े ही सहज भाव से कहा, ''बाबा, मेरा जन्मदिन नजदीक आ रहा है। रोहित, दीपू, बंटी और नंदू सबके पास साइकिल है। इस बार मुझे एक छोटी साइकिल खरीद दीजिए।''

सोना के इन शब्दों को सुनकर दयानंद बाबू को लगा, जैसे वह अपना ही पोता हो और अपने जन्मदिन पर उपहार माँग रहा हो। उनका मनोवेग उनकी आँखों से आँसू के रूप में फूट पड़ा और सोना को गोद में उठाकर उसे चूमते हुए बोले, ''हाँ, जरूर खरीद दूँगा। आखिर तुम्हें छोड़कर इस दुनिया में मेरा है ही कौन!''

शाम को घर लौटते ही सोना ने पड़ोस के सभी बच्चों को गर्व के साथ इस बार के जन्मदिन पर अपनी साइकिल खरीदे जाने की बात सुनाई। उमंग इतनी थी कि दूसरे दिन वह स्कूल नहीं गया और किशन से जिद की, ''मुझे बाबा के पास ले चलो!''

सात बजते-बजते सोना दयानंद बाबू के पास पहुँच गया और उनसे लिपटकर बोला, ''चलिए बाबा, साइकिल खरीदने चलिए।''

''अरे, इतने सबेरे सोना! अभी तो चिड़िया की चुनमुन भी सुनाई नहीं दे रही है। साइकिल की दुकान ग्यारह बजे से पहले नहीं खुलेगी। नौकरानी को आने दो। पहले नाश्ता लेंगे। उसके बाद समय होने पर चलेंगे।''

पंद्रह-पंद्रह मिनट पर सोना टोकता, ''नौकरानी क्यों नहीं आ रही है, बाबा? उसे आप हटा क्यों नहीं देते?''

''तुम समझते नहीं हो, सोना! नौकरानी के सबेरे आ जाने से क्या दुकान भी सबेरे खुल जाएगी? और वह भी उसी समय आएगी, जिस समय हर रोज आती है। घड़ी देखते रहो, नौ बजते ही वह पहुँच जाएगी।''

फिर भी अधीर सोना बार-बार खिड़की से बाहर झाँकता और पूछता, ''अब कितना समय रहा बाबा?'' नौकरानी के आने और नाश्ता तैयार होने तक सोना को बहला-फुसलाकर रखने में दयानंद बाबू को काफी मशक्कत करनी पड़ी।

नाश्ता लेने के बाद दयानंद बाबू सोना को लेकर पहले बैंक गए और वहाँ से तीन हजार रुपए निकाले, साइकिल और कुछ अन्य घरेलू सामान खरीदने के लिए। तब तक ग्यारह बज चुके थे। पटना का सबसे प्रसिद्ध 'राजधानी साइकिल स्टोर' वहाँ से बिल्कुल नजदीक था।

दुकान में बच्चों की रंग-बिरंगी साइकिलों को देखकर सोना थिरक उठा। लेकिन जब दयानंद बाबू ने उसे कोई एक पसंद करने कहा तो उसका दिमाग चकरा गया। तब उन्होंने दुकानदार से अलग-अलग कंपनी की साइकिल की कीमत पूछी।

''आजकल सबसे अधिक बिक्री इस हीरो की होती है, सर! इसकी कीमत दो हजार है। इससे कम में जाना हो तो ये एवन या एटलस ले सकते हैं। दोनों की कीमत एक ही है—अठारह सौ। अब अपनी बजट के अनुसार जिसे भी पसंद करें।'' यह कहकर दुकानदार उत्सुकतापूर्वक दयानंद बाबू की तरफ देखने लगा।

''और वो जो वहाँ है? दयानंद बाबू ने उँगली से इशारा करते हुए सबसे आकर्षक बी.एस.ए. की कीमत पूछी।''

''उसकी कीमत सबसे ऊँची है, पच्चीय सौ रुपए। शायद आपको कुछ भारी लगे।''

''तो उसी की रसीद बना दीजिए!''

दुकानदार ने हर्ष मिश्रित आश्चर्य से एक बार दयानंद बाबू की ओर देखा और रसीद बना दी।

घर लौटते ही सोना ने मोहल्ले के सारे बच्चों को बुलाकर साइकिल दिखाई और कहा, ''देखा, बाबा ने कितनी अच्छी साइकलि मेरे लिए खरीदी है! बहुत दाम लगा है। है किसी की ऐसी साइकिल? हिम्मत है तो रेस लगाकर देख लो। सबको हरा दूँगा।''

दूसरे दिन सोना ने धूमधाम से साथी बच्चों के साथ नाच-गाकर अपना जन्मदिन मनाया और केक काटने के बाद साइकिल पर बैठकर फोटो खिंचवाई। उसका घर उपहारों से भर गया था। दयानंद बाबू भी समय पर पहुँच गए थे। उन्होंने सोना को दीर्घायु होने तथा पढ़-लिखकर बड़ा आदमी बनने का आशीर्वाद दिया।

सोना के बचपन में चार चाँद गल गए थे। पढ़ने में भी उसका उत्साह देखने लायक था। उस वर्ष की अर्द्धवार्षिक परीक्षा में तीसरा स्थान लाकर उसने सबको चौंका दिया था। दयानंद बाबू अपने एकाकीपन को भूल चुके थे, लेकिन होना कुछ और था। एक दिन मोहल्ले के बच्चों ने मिलकर एक साइकिल रेस का आयोजन किया। अन्य साथियों से आगे

निकलने की कोशिश में सोना की साइकिल उलट गई और सड़क पर पड़ी एक जंग लगी लोहे की काँटी उसके तलवे में धँस गई। वह रोता-चिल्लाता हुआ घर आया। माँ ने मामूली समझकर घाव को डिटॉल से धोकर छोड़ दिया। सुबह सोना दर्द से कराहते हुए उठा। उसका तलवा कुछ फूल भी गया था। अज्ञानता के कारण माँ फिर भी गंभीर नहीं हुई। उसने डिटॉल से घाव को धोकर उसे सेंक दिया और उस पर कपड़े की पट्टी बाँध दी। सोना स्कूल नहीं जा सका। शाम होते-होते उसका पाँव फूलकर बैलून हो गया और घाव रह-रहकर टीस मार रहा था।

किशन काम करके घर लौटा तो बेटे की हालत देखते ही घबरा गया। वह तुरंत उसे एक निकटवर्ती डॉक्टर के पास ले गया। लक्षण देखते ही डॉक्टर ने टिटनस की आशंका व्यक्त की और उसे तुरंत निकटस्थ संजीवनी नर्सिंग होम ले जाने की सलाह दी। भयभीत किशन दौड़ता हुआ घर आया और पत्नी से बक्से में रखा सारा पैसा निकालकर नर्सिंग होम चलने को कहा। तब तक कलावती भी काम कर घर लौट आई थी। रोते-धोते तीनों सोना को लेकर नर्सिंग होम पहुँचे। वहाँ मौजूद डॉक्टर शास्त्री ने सरसरी नजर डालते हुए उसे टिटनस के लक्षण बतलाया और कहा, ''मरीज को लाने में देरी कर दी है। भगवान् का ही भरोसा है। इलाज में पंद्रह-बीस हजार खर्च होंगे, फिर भी बचने की गारंटी नहीं दे सकता।'' तीनों का रोना-धोना शुरू हो गया। सोना की माँ के पास सिर्फ बारह सौ रुपए थे। लेकिन कलावती ने प्रत्युत्पन्नमतित्व से काम लिया और दयानंद बाबू को फोन कर उनसे जल्द आने का अनुरोध किया।

दयानंद बाबू सिटी पार्क से टहलकर लौटे ही थे कि उनका मोबाइल बज उठा। कलावती के कंपित स्वर में दुर्घटना की खबर सुनते ही वे घबराकर दौड़ पड़े। नर्सिंग होम पहुँचकर उनहोंने डॉक्टर से अविलंब इलाज शुरू करने का अनुरोध किया। बगल में स्टेट बैंक से उन्होंने ए.टी.एम. कार्ड द्वारा बीस हजार रुपए निकाले और दस हजार की एक गड्डी कंपाउंडर की टेबल पर रख दी।

डॉक्टर ने सोना को गहन देख-रेख कोष्ठ (आई.सी.यू.) में रखा और उसे उम्र के अनुसार पहले साढ़े सात सौ पावर की ए.टी.एस. सुई लगाई, लेकिन सुधार की बजाय सोना कोमा में चला गया। डॉक्टर ने तुरंत साढ़े सात सौ पावर की दूसरी सुई दी। पुनः कोई असर नहीं, बल्कि उसका मुँह टेढ़ा हो गया। डॉक्टर ने बाहर निकलकर कुछ चिंतित स्वर में कहा, ''बच्चे की हालत बिगड़ती जा रही है। अनुमति दें तो अंतिम उपाय के रूप में पंद्रह सौ पावर की एक और सुई लगा देता हूँ।'' लेकिन बच्चों के केस में यह खतरनाक साबित हो सकता है। दयानंद बाबू ने कहा, ''आप बेहिचक सुई लगाइए, डॉक्टर साहब!''

डॉक्टर ने किशन से हस्ताक्षर कराकर पंद्रह सौ पावर की सुई लगा दी। बहन कलावती, किशन और उसकी पत्नी ईश्वर का ध्यान लगाए हुए थे। दयानंद बाबू बेचैनी से चहलकदमी कर रहे थे। बारह बजे रात तक सोना को होश नहीं आया था। लेकिन उसकी हालत स्थिर थी। कलावती के विशेष आग्रह पर दयानंद बाबू सोने के लिए अपना डेरे लौटने को तैयार हुए, लेकिन जाने से पहले उन्होंने दस हजार की दूसरी गड्डी उसके हाथों में थमा दी। डॉक्टर परिचारिका के साथ सोना की शय्या के पास बैठा रहा।

डेरा लौटकर दयानंद बाबू सिर्फ एक गिलास दूध पीकर बिस्तर पर लेट गए, किंतु उनकी नींद तो उड़ चुकी थी। सोना के जीवन की चिंता से वे लगातार करवटें बदल रहे थे। बीच-बीच में उठकर टहलने भी लगते। उधर आँसुओं से भीगी कलावती अपने बेटे-बहू के साथ रात आँखों में काट रही थी।

सुबह पाँच बजकर पैंतीस मिनट पर सोना के शरीर में थिरकन हुई और उसने 'बाबा' शब्द के साथ आँखें खोलीं। डॉक्टर रोमांचित हो उठा और बाहर निकलकर बोला, ''बच्चे को होश आ गया है। वह 'बाबा' को खोज रहा है।'' तीनों खुशी से पागल हो उठे और डॉक्टर का लाख-लाख शुक्रिया अदा करते हुए अंदर जाने की अनुमति माँगी। ''नहीं, तुम लोग अनपढ़ हो, बाल मनोविज्ञान नहीं समझते। पहले उसकी प्रथम इच्छा की पूर्ति होने दो। इसलिए एक क्षण भी गँवाए बिना उसके 'बाबा' को बुला लाओ। उसके बाद तुम लोगों को अंदर जाने दिया जाएगा।''

डॉक्टर की आज्ञा पाकर किशन हनुमान की तरह वायुवेग से दयानंद बाबू को बुलाने दौड़ा। उत्साह में दो किलोमीटर की दूरी उसने सिर्फ दस मिनट में तय कर ली।

पहुँचते ही किशन ने दरवाजे पर जोर से दस्तक मारी। दयानंद बाबू झटके से उठ बैठे। ''कौन है?'' उन्होंने पूछा।

''सर···सर···मैं किशन हूँ। जल्दी खोलिए!'' उसने हाँफते हुए कहा।

दयानंद बाबू को अपशकुन की आशंका हुई। दरवाजा खोलते ही पूछा, ''क्या हुआ, किशन?''

''सर! सोना को होश आ गया है। वह आपको बुला रहा है। जल्दी चलिए।'' उत्तेजना में किशन की साँसें अभी भी तेज चल रही थीं।

इस शुभ समाचार से दयानंद बाबू हर्षोत्तेजित हो उठे। उन्होंने कपड़े भी नहीं बदले। 'जय भगवान' कहकर बाहर निकले। एक रिक्शा पर किशन को लेकर बैठ गए और उसे तेजी से चलाने को कहा। पहुँचने पर उसे दूना भाड़ा दिया।

नर्सिंग होम में दयानंद बाबू अनुमति की परवाह किए बिना तेजी से आई.सी.यू. में घुस गए। बाबा को देखते ही सोना के होंठ लाल हो गए। वह उठने की कोशिश करने लगा पर डॉक्टर ने मना कर दिया। सोना ने दयानंद बाबू की ओर दोनों हाथ फैला दिए। उन्होंने तुरंत गोद में उठाकर उसे कई बार चूमा। तब तक कलावती, किशन और कमला भी अंदर आ गए थे और हर्षविभोर होकर बारी-बारी से गोद में लेकर उसे प्यार करने लगे थे। जश्न में डॉक्टर और परिचारिका भी शामिल हो गए थे। सोना की नई जिंदगी सचमुच में दयानंद बाबू के प्रेम की जीत थी।

३८/११ डॉ. सी.पी. ठाकुर पथ
हनुमान नगर, न्यू पुनाईचक
पटना-८०००२३
दूरभाष : ९६६१८८७८२९

पत्र

# बाबू गुलाब राय व निरालाजी के पत्र

● विनोद शंकर गुप्त

छतरपुर राज्य के महाराजा सर विश्वनाथ सिंह जूदेव चैतन्य महाप्रभु के गौड़िया संप्रदाय में दीक्षित थे। वे स्वयं बँगला नहीं जातने थे, किंतु संप्रदाय के नाते बंगाली वैष्णव साहित्य से बहुत प्रेम करते थे। वे महाकवि चंडीदास वर्णित स्वयंभूति की नायिका के वर्णन में विशेष रुचि रखते थे और इस नाते वे महाकवि चंडीदास की पदावली का हिंदी पद्यानुवाद कराना चाहते थे। बाबू गुलाबरायजी उनके प्राइवेट सेक्रेटरी थे। महाराजा साहब ने बाबूजी को ऐसे विद्वान् को खोजने का भार सौंपा, जो महाकवि चंडीदास की पदावली का हिंदी पद्यानुवाद कर सके। बाबूजी ने महाराजा साहब को बता दिया कि श्री निरालाजी खड़ी बोली में कविता करते हैं, पर उनकी कविता बड़ी सरस संगीतमय होती है। विद्याव्यसनी और धार्मिक सिद्धांतों के रसिक और मर्मज्ञ महाराजा ने कविवर निरालाजी को बुलाने की आज्ञा दे दी। बाबूजी ने निरालाजी से इस विषय में जो पत्राचार किया, वह इस प्रकार है। बाबूजी ने निराजाजी को ७ अक्तूबर, १९२७ को पत्र लिखा था—

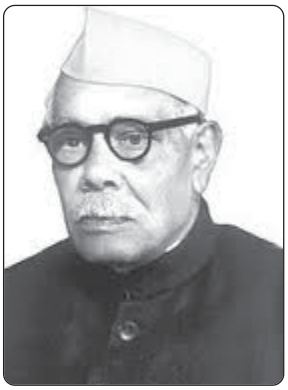

श्रीमन्

लाला शिवपूजन सहाय से ज्ञात हुआ है कि आप बँगला और ब्रजभाषा के अच्छे ज्ञाता हैं और ब्रजभाषा में कविता करते हैं।

श्री महाराजा साहिब को एक ऐसे विद्वान् की आवश्यकता है। वे श्री चंडीदासजी के ग्रंथों का पद्यानुवाद कराना चाहते हैं। कृपया तार द्वारा सूचित कीजिए कि आप यहाँ आ सकते हैं या नहीं और आ सकते हैं तो कब? और कृपया यह भी लिखिए कि यहाँ आने के लिए आपके क्या टर्म्स होंगे। उत्तर बहुत शीघ्र देने की कृपा कीजिए।

भवदीय
गुलाबराय
प्राइवेट सेक्रेटरी

दूसरा पत्र २१ अक्तूबर, १९२७ को लिखा निरालाजी को—

श्रीमन्

यह पंडित श्री हरे कृष्णा मुखोपाध्याय श्री महाराज साहिब की

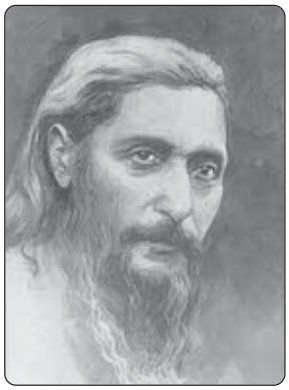

ओर से आपसे मिलेंगे। आपके पास ये पुस्तकें हैं, जिनका अनुवाद ब्रज भाषा में होना है। कृपया पुस्तकें देख लीजिएगा और उनसे बातचीत करके अनुवाद का थोड़ा नमूना, चाहे इन्हीं की मार्फत, चाहे स्वतंत्र रूप से श्री महाराज साहब बहादुर के अवलोकनार्थ भेज दीजिएगा। फिर जैसी श्री महाराज साहिब की आज्ञा होगी, उससे सूचना दी जावेगी।

भवदीय
गुलाबराय
प्राइवेट सेक्रेटरी

श्री निरालाजी ने बाबूजी की प्रार्थना स्वीकार की और छतरपुर आए। वे बाबूजी के घर पर ठहरे थे। दुपहर में वे बाबूजी के साथ महाराजा साहिब के महल गए। वे एक-दो पदों का अनुवाद करके ले गए थे। रसज्ञ महाराज ने अनुवाद सुनकर उनकी सराहना की। वहाँ निरालाजी को टाइफाइड का ज्वर हो गया। बाबूजी और उनके सहयोगी पं. रामनारायण शर्मा को उनके इलाज की व्यवस्था करनी पड़ी थी। डॉक्टर भट्टाचार्य के उपचार से जब वे ठीक हो गए तो अपने गाँव लौट गए।

निरालाजी ने जो अनुवाद किया था, उसका एक अंश—

**मूल कविता-श्याम नाम**

सइ-केवा सुनाइलो श्याम नाम।
कानेर भितर दिया, मरमे पशिलगो
आकुल करिल मोर प्राण॥

ना जानि कतेक मधु, श्याम नामें आछेगो,
बदन छाँड़िते नाहि पारे।
जपिते-जपिते नाम अवश करिल गो,
केमने वा पासरिव तारे॥
नाम परतापे जार, ऐछन करिलगो,
अंगेर परशे किवा हय।

जेखाने वसति तार, नयने देखिया गो,
युवती धरम कईछे रय।

पासरिते करि मने, पासरा ना जाएगो,
कि करिये कि ह्वे उपाय।
कहे द्विज चंडीदासे कुलवती कुलनाशे,
आपनार यौवन याचाय॥
*(राग कामोद) निराला*

**अनुवाद–स्याम नाम**

स्याम नाम किन आनि सुनायो,
पल छिन कर ल परत मोहि आली!
स्रवनन मगु घँसिगो, बसिगौ उर,
विकल कियो मो मन बनमाली॥
स्रवत सुधा, लवलीन मीन सम,
नाम नीर नहिं त्यागन चाहौं।
जपत बिबस भो, मो मन तन धनि
पावन हित चित सौं अवगाहौं॥
नाम प्रतापहिं यह गति भइ जब,
अंग परस रस धों किमि होई।
बसत जहाँ वह लखि नयनन सों,
निज कुल धरम जुवति किमि गोई॥
भूलन चाहौं भूलि सकौं नहिं,
अब कहु कौन उपाय रह्यौ री!
चंडिदास वारी कुलवती तन,
जोबन बनवारी लह्यो री॥
*(ललित किशोरी छंद)*

उसके बाद बाबूजी ने फिर एक पत्र ८ मार्च १९२८ को निरालाजी के कुशल समाचार पूछने के लिए लिखा था, पत्र इस प्रकार है—
प्रियवर,

बहुत दिन से आपके कुशल समाचार नहीं मिले। आशा है कि आप कुशल से होंगे। आप आजकल घर पर ही हैं या और कहीं। और क्या कर रहे हैं? आजकल हम लोग खजुराहो में हैं। पं. रामनारायणजी अभी तक नेत्र रोग से पीड़ित रहे। अब जरा अच्छे होते जाते हैं। कुशल समाचार शीघ्र भेज दीजिएगा।

भवदीय
गुलाबराय

श्री निरालाजी ने गढाकोला मगरायर उन्नाव से १२ अप्रैल, १९२८ को बाबू गुलाबरायजी को जो पत्र लिखा था, वह इस प्रकार है—

गढ़ाकोला, मगरायर, उन्नाव
१२.४.२८

श्रीमान सेकरेटरी साहब, सादर।

जाने-माने साहित्यकार। 'बाबू गुलाबराय व्यक्तित्व और कृतित्व एक झलक', 'जीवन पाथेय', 'बाबू गुलाब राय की हास्य-व्यंग्य रचनाएँ','बाबू गुलाबराय के विविध निबंध', 'मेरे मानसिक उपादान : बाबू गुलाबराय', 'मेरी कहानी मेरी जुबानी', 'बाबू गुलाबराय विचार सार' (*संपादित ग्रंथ*) एवं विविध पत्र-पत्रिकाओं में सामाजिक व पुरातत्त्व विषय पर लेख प्रकाशित।

इधर महीने भर चित्रकूट रहा। कल लौटा हूँ। यहाँ आपके दो कृपा-पत्र मिले। लज्जित हूँ, उत्तर समय पर नहीं दे सका। मेरे इस मशहूर मर्ज की दवा शायद इस जीवन में न होगी। क्षमा!

आपसे पत्र-व्यवहार न रहने पर भी आपके प्रसन्न लेखों से मुझे पत्र-प्राप्ति ही का आनंद मिलता रहा है। छोटे पंडितजी (पंडित रामनारायण शर्मा) का सान्निपातिक-विकार क्या खासा मनोरंजन हुआ।

अभी तक मैं खूब प्रसन्न रहा। स्वास्थ्य भी बहुत कुछ सुधर चला था, इधर तीन-चार रोज से कुछ अस्वस्थ हूँ। प्रबंधों के अलावा अब उपन्यास, नाटक लिखने का विचार कर रहा हूँ। श्रीगणेश दो-एक रोज में करूँगा। इधर 'रेखा' कविता पुस्तक की रचना में पड़ा था। निस्संग जीवनवाले के लिए आनुषंगिक नियम और कानून क्या, अब सबकुछ मनभाता हुआ करता है।

श्रीमान लालाजी का (शायद स्वर्गीय लाला कन्नोमलजी धौलपुर निवासी का) अंग्रेजी 'एट द फीट ऑफ गॉड' का संस्कृत अनुवाद कुछ दिनों में आपके पास भेजता हूँ। अभी तक विशेष अवसर नहीं मिला, प्राणों की संपूर्ण स्वीकृति भी नहीं हुई थी। आप उनके पास भेज दीजिएगा।

सम्मान्य मिश्रजी (शायद पंडित शुकदेव बिहारी मिश्र से अभिप्राय है, वह वहाँ उन दिनों दीवान थे) और भट्टाचार्य महाशय (वह उन दिनों स्टेट-सर्जन थे, उन्होंने निरालाजी की चिकित्सा की थी) को सविनय नमस्कार।

आपकी कविता बहुत साफ आई। (मैंने छतरपुर में कुछ कविताएँ भी लिखी थीं, वे श्री रामनारायणजी के ही पास होंगी। उनका कोई साहित्यिक महत्त्व नहीं हैं। यह निरालाजी की गुणग्राहकता और प्रोत्साहन-प्रवृत्ति है, जो उन्होंने उसकी प्रशंसा की है।)

मैं जब रस-ग्रहण करता हूँ, उस समय गुंजार नहीं करता। इति सुप्रभात! (अंग्रेजी गुड मॉर्निंग का शब्दानुवाद) रामनारायणजी को पृथक् लिखता हूँ।

सविनय
निराला

ए-३ ओल्ड स्टाफ कॉलोनी, जिंदल स्टेनलैस लि.
ओ.पी. जिंदल मार्ग, हिसार-१२५००५
दूरभाष : ०९४१६९९५४२२

कहानी

# नैना

● रेनू सैनी

नैना अपने कमरे की ओर जाते हुए धड़ाम से गिर पड़ी। उसकी बड़ी बहन चीख सुनकर दौड़ी और उसे उठाया। नैना के पैर में चोट लग गई थी। अंजना ने पैर को साफ किया और दवा लगाकर उसे लिटा दिया।

नैनों में रंगीन ख्वाब सजाए वह भविष्य की आस सँजोए ट्रेन में मुंबई फुटबॉल टूर्नामेंट में भाग लेने जा रही थी। नींद में मुसकराती वह खूबसूरत स्वप्नों में डूबी थी कि तभी ट्रेन में धमाका हुआ और उसके कई भागों के परखच्चे उड़ गए। रात के समय लगभग सभी मुसाफिर सो रहे थे। कुछ ही पलों में वहाँ का दृश्य अत्यंत भयावह व बीभत्स हो चुका था। लोग बुरी तरह कराह रहे थे। कहीं पर रक्तरंजित शरीर तड़प रहे थे तो कहीं पर महिलाओं व बच्चों का क्रंदन लोगों के होश उड़ा रहा था। नैना का ग्रुप भी इसकी चपेट में आया था। उसकी एक सहपाठी निरंजिनी तो इस विस्फोट में अपनी जान से ही हाथ धो बैठी थी। अन्य छात्राओं व टीचरों को भी चोटें आई थीं। नैना को विस्फोट के साथ ही अपनी आँखों में तीव्र जलन महसूस हुई थी और वह पीड़ा से तड़पकर बेहोश हो गई थी।

जल्द ही सबको नजदीक के अस्पताल पहुँचाया गया। घायलों को चिकित्सा प्रदान करने के बाद छुट्टी दे दी गई तो कुछ लोग अपने परिवार वालों को रोता-बिलखता छोड़कर मृत्यु के आगोश में समा गए। नैना जिंदगी की जंग तो जीत चुकी थी, लेकिन अपने खूबसूरत और बड़े-बड़े नैनों को खो चुकी थी। जैसे ही उसे होश आया, उसने अपने नैनों में खूबसूरत रंगों के स्थान पर बीभत्स कालिमा के दर्शन किए तो वह चीख उठी। जब उसे अपने नैनों के खोने का पता चला तो वह पागल सी हो गई और बोली, 'मैं बिना नैनों के नहीं रह सकती, मेरे इन्हीं नैनों ने इंद्रधनुषी ख्वाब सजाए थे, जिन्हें मैं लगन व मेहनत से सच करना चाहती थी। अब जब मैं वह पूरा नहीं कर सकती तो इस दुनिया में बिना आँखों के रहकर मैं क्या करूँगी? मुझे नहीं जीना इस काली दुनिया में।'

नैना के इन शब्दों ने वहाँ उपस्थित डॉक्टरों के साथ ही सभी लोगों को द्रवित कर दिया। अपने आपको सँभालते हुए नैना के पिता डॉक्टर रंजन बोले, 'बेटा, तुम अपने इंद्रधनुषी स्वप्नों को अब भी पूरा कर सकती हो? कौन कहता है कि तुम लाचार हो गई हो। बेटा, इस दुनिया में अनेक व्यक्ति ऐसे हैं, जो शारीरिक रूप से कमजोर हैं, लेकिन फिर भी वे हिम्मत नहीं हारते। मुझे तुम्हें ऐसे उदाहरण देने की जरूरत नहीं है, क्योंकि इस बारे में मेरी होनहार बेटी मुझसे ज्यादा जानती है। तुम्हें जीवन से हार नहीं माननी है। अपने लक्ष्य को पाना है, अपनी मंजिल को पाना है। तुम कमजोर नहीं, विकलांग नहीं अपितु इस दुनिया की सबसे सुंदर, सबसे काबिल बेटी हो।'

सुपरिचित साहित्यकार। 'दिशा देती कथाएँ' एवं 'बचपन का सफर'। दिल्ली सरकार की हिंदी अकादमी द्वारा चार बार नवोदित लेखन एवं अनेक बार आशुलेखन में पुरस्कृत, 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार', राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं, समाचार-पत्रों एवं आकाशवाणी से समय-समय पर रचनाओं का प्रकाशन व प्रसारण।

पिता की आत्मविश्वास व हौसले से भरी बातें सुनकर नैना अपने पिता के गले लगकर बिलख-बिलखकर रो पड़ी।

डॉक्टर रंजन बेटी को सांत्वना व प्रेम भरा स्पर्श देकर उठे तो नैना का इलाज करनेवाले आँखों के सबसे बड़े सर्जन डॉक्टर विशाल ने एक बहुत बुरी खबर देकर उन्हें तोड़ दिया। वह बोले, 'डॉ. रंजन, अमूमन होता यह है कि यदि आँखें किसी दुर्घटना में जाती हैं तो उन्हें नेत्रदान के द्वारा दोबारा से लगाकर नेत्रहीन व्यक्ति की दुनिया को फिर से रंगीन बनाया जा सकता है, लेकिन इस मामले में नैना बदनसीब है, क्योंकि उसकी आँखों के कोर्निया के साथ ही अंदर तक इतनी क्षति पहुँची है कि आँखों को रोशनी प्रदान करनेवाली उसकी सारी झिल्लियाँ क्षतिग्रस्त हो चुकी हैं। अब इस जन्म में नैना दोबारा प्रकृति व विश्व की खूबसूरती से महरूम रहेगी।'

डॉ. रंजन डॉ. विशाल की बातें सुनकर एकटक शून्य में देखते रहे और उन्हें ऐसा महसूस हुआ, मानो उनके शरीर की सारी संवेदनाएँ शून्य हो गई हों। उन्हें इस हालत में देखकर घर के बाकी सदस्यों ने उन्हें झकझोरा और वास्तविकता के धरातल पर ले आए।

अपने हृदय में गहरे जख्म व नश्तर लेकर नैना के साथ डॉ. रंजन अपनी बड़ी बेटी अंजना के साथ वापस घर लौटे। डॉ. रंजन की पत्नी का एक साल पहले स्वर्गवास हो चुका था। इस समय नैना दसवीं कक्षा में और अंजना बारहवीं कक्षा में पढ़ रही थी। अंजना ने विज्ञान विषय लिया हुआ था और उसकी चाहत भी डॉक्टर बनने की थी।

कुछ दिनों तक घर का माहौल बेहद गमगीन और उदासी भरा रहा। लेकिन जीवन तो नदी की धारा की भाँति है, जो कभी नहीं रुकता, कुछ समय के लिए उसमें अवरोध अवश्य उत्पन्न हो जाता है, किंतु उसे तो चलना ही होता है। इसी सुख-दुःख का नाम तो जीवन है।

अंजना और नैना दोनों में एक-दूसरे की जान बसती थी। अंजना अपनी प्रिय बहन नैना की इस हालत पर मन-ही-मन रोती, लेकिन फिर खुद को सँभालती। खुद को तो उसे सँभालना ही था, क्योंकि नैना को भी तो उसके लक्ष्य में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करना था।

अब नैना भी इस बात को भली-भाँति स्वीकार कर चुकी थी कि एक भयावह दुर्घटना ने उसके जीवन में ऐसा तूफान लाकर खड़ा कर दिया है, जिसका सामना उसे निडरता और कठोर परिश्रम से करना है।

डॉ. रंजन की दोनों बेटियाँ बेहद कुशाग्र थीं। अपनी बेटियों पर सिर्फ उन्हें ही नहीं अपितु उनके संबंधी व पूरे स्कूल को नाज था। डॉ. रंजन नैना का एडमिशन अंधविद्यालय में कराना चाह रहे थे, लेकिन नैना को यह मंजूर नहीं था। नैना चाहती थी कि उसे कोई भी नेत्रहीन न समझे। वह सामान्य रूप से ही पढ़ाई करना चाह रही थी। स्कूल बोर्ड की इस विषय में मीटिंग हुई। नैना अभी तक अपनी सभी कक्षाओं में टॉपर रही थी। इसके साथ ही खेल-कूद जैसी गतिविधियों में भी उसका कोई सानी नहीं था। फुटबॉल में तो उसकी जान बसती थी। स्कूल के माध्यम से वह जिला स्तर पर व राज्य स्तर पर अनेक ट्रॉफियाँ अपने नाम कर चुकी थी। बदकिस्मती से उसके नैन भी क्षतिग्रस्त उसी समय हुए थे, जब वह राज्य स्तर पर एक मैच खेलने जा रही थी।

नैना ने स्वयं को समझा लिया था कि अब उसे कड़ा परिश्रम ही नहीं करना बल्कि स्वयं को साबित भी करना है। इसके लिए वह निरंतर अभ्यास करती थी कि सामान्य तरीके से चले। वह फुटबाल भी उसी तरह से खेलना चाहती थी जैसे कि वह पहले खेलती थी। इसके लिए मैच होने से पहले वह प्रांगण को अच्छी तरह से परख लेती थी कि कहाँ तक मैदान साफ है और कहाँ पर बैरियर लगे हुए हैं। दो-तीन राउंड में वह अभ्यस्त हो जाती थी। रात-रात भर वह घर को पूरी तरह हाथ लगा-लगाकर देखती और फिर बिना किसी सहारे के चलने का प्रयास करती। यदि कहीं ठोकर लग जाती तो फिर सँभलती। उसके इस प्रयास में डॉ. रंजन व अंजना हमेशा साथ रहते थे।

अभी तक सबकुछ ठीक चल रहा था, लेकिन मुश्किल तब उत्पन्न हुई, जब बोर्ड की परीक्षा में लिखित परीक्षा देने का अवसर आया। नैना अपने लिए कोई छूट लेने को तैयार नहीं थी। इसके लिए उसने प्रिंसीपल से कहा कि वह परीक्षा में सामान्य तरीके से लिख सकती है। इसके लिए स्कूल में उसका टेस्ट हुआ। टेस्ट में नैन न होते हुए भी वह जिस तरह से लिख रही थी, उसे देखकर प्रिंसीपल के साथ ही सभी दंग रह गए। नैना की परीक्षा में कहीं भी लिखावट में ऊँच-नीच न थी और यह सब सिर्फ कड़े परिश्रम का परिणाम था, उसके पिता और बहन के उस परिश्रम का योगदान था, जो वे दिन-रात उसके साथ कर रहे थे।

**नैना बिना नैनों के फुटबॉल रोज खेलती थी और अब वह इस तरह से खेलने की अभ्यस्त हो चुकी थी। उसकी चीते जैसी फुरती व मस्तिष्क का मेल कब गोल कर जाता, यह प्रतिद्वंद्वी टीम को जब पता चलता तब तक बहुत देर हो चुकी होती। धीरे-धीरे नैना के नैन विहीन चेहरे ने ही उसे एक सेलिब्रिटी बनाकर समाज के सामने उभार दिया था और वह लोगों के सामने एक मिसाल व प्रेरणा बनकर उभर रही थी। नेता व अभिनेता तक नैना की कहानी पहुँच चुकी थी।**

परीक्षाएँ समाप्त हो गईं और नैना व अंजना दोनों ने ही अच्छे अंकों से परीक्षा उत्तीर्ण की। अंजना ने तो पूरे जिले में दूसरा स्थान हासिल किया था। सभी को दोनों बहनों के उत्तीर्ण होने की खुशी थी, लेकिन अचरज व शुभकामनाएँ नैना के साथ ज्यादा। आखिर नैना ने अपने लिए कोई विशेष छूट न लेते हुए सामान्य परीक्षार्थी की भाँति परीक्षा दी थी। यह बात बहुत बड़ी व आश्चर्यजनक थी और एक नेत्रहीन व्यक्ति इस बात को अच्छी तरह समझ सकता है कि नेत्र न होने पर एक सामान्य व्यक्ति की तरह कार्य करना कितना कठिन है?

नैना की इस सफलता ने उसके स्कूल का नाम तो रोशन किया ही था, साथ ही यह मिसाल भी कायम की थी कि यदि तमन्ना चाँद को छूने की हो तो मुश्किल कुछ नहीं, केवल हौसला और हिम्मत होनी चाहिए, चाँद को पाने की दरकरार होनी चाहिए।

ग्यारहवीं कक्षा में जहाँ नैना ने कला विषय लिया, वहीं अंजना का प्रवेश मेडिकल कॉलेज में हो गया। नैना पढ़ाई के साथ-साथ फुटबॉल को भी अपने जीवन का महत्त्वपूर्ण अंग मानती थी। राज्य स्तर पर प्रतिभा साबित करने के साथ-साथ अब उसने स्वयं को राष्ट्रीय स्तर पर उभारने का संकल्प कर लिया था और इसके लिए उसने दिन और रात में फर्क करना छोड़ दिया था। यदि उसके पिताजी व अंजना उसे बोलते कि रात हो गई है, विश्राम करो तो उसका जवाब होता, 'पिताजी, इनसान वही कामयाब होता है, जो अपने लिए असफलता और शारीरिक व मानसिक कमजोरी को बीमारी नहीं अपितु उसे अपने जीवन का सबसे मजबूत हथियार बना लेता है। मेरे नैनों ने दिन और रात में फर्क महसूस करना बंद कर दिया है। अब मेरे लिए पहले मेरा लक्ष्य है और बाद में दिन और रैन। पहले लक्ष्य तक पहुँचूँ, फिर दिन और रात भी महसूस करना सीख लूँगी।'

नैना के उत्साह भरे शब्द जहाँ अंजना में भी जोश और उत्साह का नवसंचार करते, वहीं डॉ. रंजन का सिर गर्व से कुछ और ऊँचा कर देते।

नैना बिना नैनों के फुटबॉल रोज खेलती थी और अब वह इस तरह से खेलने की अभ्यस्त हो चुकी थी। उसकी चीते जैसी फुरती व मस्तिष्क का मेल कब गोल कर जाता, यह प्रतिद्वंद्वी टीम को जब पता चलता तब तक बहुत देर हो चुकी होती। धीरे-धीरे नैना के नैन विहीन चेहरे ने ही उसे एक सेलिब्रिटी बनाकर समाज के सामने उभार दिया था और वह लोगों के सामने एक मिसाल व प्रेरणा बनकर उभर रही थी। नेता व अभिनेता तक नैना की कहानी पहुँच चुकी थी।

आखिर वह दिन भी आया, जब बिना किसी सिफारिश, बिना किसी दया के वह राष्ट्रीय टीम में अपनी जगह बनाने में कामयाब हो गई। यह दिन उसकी जिंदगी का सबसे बड़ा दिन था। उस दिन उसके छोटे से परिवार ने इस खुशी को बड़ी गरमजोशी के साथ सेलीब्रेट किया।

राष्ट्रीय टीम में आने पर नैना का अभ्यास और कठोर हो गया था। उसे मालूम था कि अभी तक भारत में महिला फुटबॉल टीम क्रिकेट व हॉकी जितनी प्रसिद्ध नहीं है। अब उसका अगला संकल्प था—अपनी जी-तोड़ मेहनत से फुटबॉल को गोल दिलाकर विश्व स्तर पर प्रसिद्ध प्राप्त करना, ताकि दुनिया भी नैना की कामयाबी का लोहा मान सके।

विश्व स्तर पर विश्व कप फुटबॉल में भारत अभी तक अपनी जगह नहीं बना पाया था, लेकिन दिनोदिन हो रही प्रगति ने अनेक ऐसे देशों को विश्व रंगमंच पर ला दिया था, जिनकी महिला खिलाड़ी फुटबॉल खेलने में पारंगत थीं। अंतरराष्ट्रीय खेल बोर्ड ने महिला विश्व कप फुटबॉल का आगाज किया था। इसमें विश्व की अनेक सर्वश्रेष्ठ टीमें थीं, जिनमें भारतीय टीम भी थी और भारतीय टीम की अगुवाई कर रही थी नेत्रविहीन नहीं अपितु एक तीसरा नेत्र अपने माथे पर लगाए हुए नैना। अमेरिका, ब्राजील, स्पेन, इंग्लैंड, जर्मनी जैसे अनेक देश विश्वकप महिला फुटबॉल टीम में शामिल थे।

नैना को विश्वकप फुटबॉल टीम में आने के लिए लंबा संघर्ष करना पड़ा था और इसी बीच पाँच वर्ष बीत गए थे। नैना बी.ए. फाइनल कर रही थी और अंजना एक कुशल डॉक्टर बन चुकी थी।

सभी मैचों में नैना की हौसला अफजाई करने के लिए अनेक भारतीयों सहित उसके पिता डॉ. रंजन व अंजना वहाँ उपस्थित थे।

विश्व कप में ग्रुप 'ए' व ग्रुप 'बी' थे। भारत का नाम ग्रुप 'ए' में था। विश्वकप लगभग डेढ़ महीने तक चलनेवाला था। इस दौरान सभी टीमों को अपने-अपने मैच खेलने थे और क्वार्टर फाइनल के बाद सेमीफाइनल का दौर पार कर फाइनल में अपने लिए जगह बनानी थी। भारतीय महिला टीम के कोच विश्वप्रसिद्ध ब्राजील टीम के जियो जिदोय थे। उन्होंने महिला टीम को फुटबॉल की सभी बारीकियों से अवगत करा दिया था। उन्हें भी यह ज्ञात था कि भारतीय टीम की सबसे मजबूत खिलाड़ी सिर्फ और सिर्फ नैना है।

महिला विश्वकप फुटबॉल जर्मनी में हो रहा था। यहाँ आने के बाद नैना ने टीम को कप दिलाना है, सिर्फ यही बात अपने दिमाग में डाली हुई थी, जिसे पूरा करने के लिए वह टीम के साथ कड़ी मेहनत में जुटी थी। एक अरब १६ करोड़ भारतीयों की दुआएँ भारतीय टीम के साथ थीं।

सभी टीमें अपने लीग मैच खेलकर क्वार्टर फाइनल में प्रवेश कर गईं। क्वार्टर फाइनल में प्रवेश करनेवाली आठ टीमें थीं, जिनमें भारतीय टीम भी शामिल थी।

क्वार्टर फाइनल में भारतीय टीम को पहले जर्मनी से भिड़ना था। अभी तक जर्मनी की टीम सभी टीमों पर भारी पड़ रही थी। कप के लिए सभी उसे तगड़ा दावेदार मान रहे थे। भारत का नंबर यहाँ पर चौथा व पाँचवाँ था। क्वार्टर फाइनल वाले दिन भारत व जर्मनी की टीम आमने-सामने थीं। नैना ने पूरे मैदान का जायजा ले लिया था। खेल प्रारंभ होने पर जर्मनी की टीम भारी पड़ती रही। अचानक सीटी बजने पर नैना का ध्यान भंग हुआ और वह धड़ाम से ठोकर खाकर गिर पड़ी। कुछ देर तक तो उसे समझ ही नहीं आया, किंतु वह तुरंत खड़ी हुई और लड़खड़ाते हुए खेलने को दौड़ी। तब तक बहुत देर हो चुकी थी और जर्मनी की टीम एक गोल से मैच को अपने नाम कर चुकी थी। महत्त्वपूर्ण मैच को गँवाकर भारतीय टीम के हौसले टूटने लगे, लेकिन नैना का हौसला ठोकर खाकर और मजबूत हो गया था। वह अपनी सभी खिलाड़ियों से यही बोल रही थी कि अभी हार कहाँ? हमारे पास अनेक अवसर मौजूद हैं। दूसरी टीम से यदि हम अच्छे गोल से मैच जीत जाते हैं और बाकी टीमों का रिकॉर्ड अच्छा नहीं होता है तो हमारे सेमीफाइनल में पहुँचने के पूरे-पूरे चांस हैं। लेकिन इसके लिए आपको हार या नाकामयाबी पर नहीं, अपितु केवल और केवल लक्ष्य व जीत की ओर ध्यान देना है। नैना के आत्मविश्वास भरे शब्दों ने न सिर्फ भारतीय टीम में नई जान फूँकी, अपितु कोच जियो जिदोय भी उनसे प्रभावित हो उठे और उन्होंने मैच को अच्छे गोल से जीतने के लिए अनेक रणनीतियाँ तैयार कीं।

आखिर वही हुआ, जो नैना ने अपने मन में ठाना था। स्पेन की टीम के साथ उन्होंने मैच को चार गोल से जीत लिया और अपने लिए सेमीफाइनल में जगह बना ली। टीम के सेमीफाइनल में पहुँचते ही भारत में चारों ओर आतिशबाजियाँ फूटने लगीं और भारतीय महिला फुटबॉल टीम मीडिया में छा गई।

सेमीफाइनल ब्राजील के साथ था। उस दिन सभी भारतीय खिलाड़ी बेहद नर्वस थे। उन्होंने अभ्यास किया था और जीतने की ख्वाहिश दिल में थी। खेल की शुरुआत होते ही दोनों टीमें दो-दो हाथ करने को तैयार थीं। कड़ा संघर्ष दोनों टीमों के बीच चल रहा था। कभी लगता कि ब्राजील की टीम जीतेगी, तो कभी भारत का पलड़ा भारी लगता। आखिर विजय भारत के हाथ लगी और चहुँ ओर विजय के जश्न मनाए जाने लगे। फाइनल में एक बार फिर भारत के सामने मजबूत टीम जर्मनी थी।

सेमीफाइनल तक टीम को लाए जाने का श्रेय सभी नैना को दे रहे थे। फाइनल होने से पहले रात भर कोई भी खिलाड़ी ढंग से नहीं सो पाए। सभी की आँखों में भारत को फुटबॉल का पहला कप दिलाने की तमन्ना थी और आँखों में रंगीन सपने थे। उधर नैना की आँखों ने अपने लिए अपने मन में अनेक नए रंग बना लिए थे, जिसमें वह भारत के खेलों में तरक्की के साथ ही नेत्रहीनों के लिए भी तरक्की के नए द्वार खोलने का संकल्प सँजोए बैठी थी। नैना ने पूरी रात न जाने कितनी बार स्वयं से यह संकल्प लिया कि उसे यह मैच जीतना ही है।

फाइनल वाले दिन सभी खिलाड़ी नर्वस थे। मैच का लाइव प्रसारण पूरे विश्व में दिखाया जानेवाला था। सभी ने अपने-अपने ईश्वर को याद किया और विजय का आशीर्वाद लिया। भारतीय टीम एक बार जर्मनी से मात खा चुकी थी और अब उसे इस मात का बदला फाइनल की विजय प्राप्त करके चुकाना था। सभी खिलाड़ी तैयार थे। टीम की कैप्टन नैना ने कोच के साथ मिलकर अद्‌भुत रणनीति बनाई थी और सभी खिलाड़ियों को रणनीति से अवगत करा दिया था।

मैच प्रारंभ हुआ। सभी ने अपना-अपना स्थान सँभाल लिया। सभी खिलाड़ियों के मन में इस समय सिर्फ और सिर्फ जीत की भूख थी। नैना

आज ऐसी चुस्ती-फुरती दिखा रही थी कि उसके साथ खेल रही प्रतिद्वंद्वी टीम के साथ ही मैदान में व इस मैच को लाइव देख रहे करोड़ों फुटबॉल प्रेमी चकित थे और साँस रोके इस मैच को देखने में मशगूल थे। प्रारंभ में दोनों टीमों ने एक-एक गोल अपने नाम कर लिया। विजयी मोड़ पर दोनों ही टीमों को गोल की दरकार थी और यह गोल किसके नसीब में होना था, इसका फैसला खिलाड़ियों के द्वारा होना था। नैना उस दिन अचूक निशाना साध रही थी। नैना की फुरती व जोश ने उसकी टीम के खिलाड़ियों में नवजोश का संचार कर दिया था।

आखिर मैच का अंतिम पड़ाव आ गया और मैदान पर उपस्थित सभी लोग यह जानने को उत्सुक हो उठे कि गोल किसके पाले में जाएगा। तभी नैना के साथ मिलकर उसकी साथी खिलाड़ी ने जर्मनी की ओर से हो रहे गोल को गोल बनने से बचाने के साथ ही उसे इस कुशलता से फेंका कि फुटबॉल सीधा गोल में जाकर गिरा और पूरे मैदान में करतल ध्वनियों के साथ ही सभी दर्शकों ने खड़े होकर भारत की प्रतिभावान खिलाड़ी नैना के अचूक निशाने को देखकर दाँतों तले अंगुली दबा ली। साथी खिलाड़ियों ने विजय के साथ ही नैना को कंधों पर उठा लिया और यह दृश्य देखकर अंजना दर्शक दीर्घा से दौड़कर अपनी बहन के समीप पहुँची और उसके गले से लग गई। पिता डॉ. रंजन की आँखों से तो इस समय खुशी के आँसू झर रहे थे। पूरे भारत में विजय के साथ नैना की विजय का जश्न मनाया जाने लगा। राष्ट्रपति से लेकर प्रधानमंत्री, नेताओं से लेकर अभिनेताओं, लेखकों और युवाओं तक एक-दूसरे के साथ शुभकामनाओं के दौर चल पड़े। चहुँ ओर प्रसन्नता का आलम था। आतिशबाजी व नगाड़ों ने पूरे भारत को एकता में रँगकर ऐसी दीवाली मनाई कि पूरा विश्व भारत की सफलता पर झूम उठा। नैना रातोरात एक ऐसा सितारा बनकर जमीन पर उतरी, जिसके न सिर्फ दर्शन दुर्लभ होते हैं अपितु जिसकी प्रतिच्छाया भी व्यक्ति को पवित्र कर देती है। रातोरात अनेकों विज्ञापनों ने उसे अपना ब्रांड एंबेसडर बना दिया। धन व यश की नैना पर बरसात होने लगी।

विजय का तमगा लेकर भारतीय टीम भारत लौटी तो खिलाड़ियों का गर्मजोशी से स्वागत हुआ। नैना को अनेक कंपनियों ने बड़े पद का भार सँभालने के लिए सादर निवेदन किया। नैना के साक्षात्कार होने लगे। साक्षात्कार में नैना ने अनेक बातें कहीं, लेकिन जिस बात ने हर विकलांग व शारीरिक और मानसिक रूप से कमजोर व्यक्ति को भी अनेक स्वप्न दिखाए, वह था नैना का यह वाक्य—'मैं सामान्य हूँ, मैंने कभी भी स्वयं को नेत्रहीन नहीं समझा। अपितु मेरे नैनों की ज्योति जाने पर मुझे यह आभास होने लगा था कि अब मैं अपने जीवन में और बेहतर कर सकती हूँ। जीवन में सूर्य बनने के लिए तपिश को तो सहन करना ही पड़ता है। बल्कि मैं तो यही कहूँगी कि यदि कोई व्यक्ति विकलांग हो या किसी बीमारी से पीड़ित हो तो उसे वह अपनी कमजोरी बनाने के बजाय ताकत बनाए। ऐसा करना असंभव नही, हाँ मुश्किल जरूर है, लेकिन जब आपकी तमन्ना दुनिया में सबसे अलग दिखने की हो तो आप सारी बाधाओं को पार करने की हिम्मत रखते हैं। यहाँ तक पहुँचने में मेरे पिता और मेरी बहन का बहुत बड़ा योगदान है। मैं चाहती हूँ कि जैसे मेरे पिता और मेरी बहन ने मुझे कभी भी अपंग नहीं समझा, उसी तरह मैं भी एक ऐसी संस्था खोलूँ, जिसमें विकलांग लोग हों और उन्हें किसी से कमतर न समझते हुए सामान्य तरीके से ऊपर उठाने का प्रयास किया जाए।'

नैना के इस वाक्य ने संपूर्ण विश्व के अपंग व्यक्तियों को यह बता दिया था कि हिम्मत और हौसले से अपंगता वरदान साबित होकर आपको जीवन के उस मुकाम तक पहुँचा सकती है, जिसकी बराबरी शायद चाँद भी न कर पाए।

नैना अब अपने जीवन में बेहद प्रसन्न थी। उसकी व्यस्तता ने उसे यह सोचने का मौका ही नहीं दिया था कि वह नैनों से विहीन है। अपितु वह अकेले में कई बार यह अवश्य गुनगुना उठती थी कि नैना को नैनों की आंतरिक ज्योति ने कामयाबी के शिखर पर पहुँचाया है और यह ज्योति सभी को नसीब नहीं होती।

३, डी.डी.ए फ्लैट्स, खिड़की गाँव,
मालवीय नगर, नई दिल्ली-११००१७
दूरभाष : ९९७११२५८५८

## इस अंक की चित्रकार (नलिनी मिश्र)

सुपरिचित लेखिका एवं चित्रकार। लखनऊ विश्वविद्यालय से 'डिप्लोमा इन आर्ट' मास्टर ट्रेनिंग परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण। 'उमंग', 'कल्प-वृक्ष', 'गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर', 'चिंतक', 'छवि', 'छोटा परिवार-सुखी परिवार', 'पश्चात्ताप', 'प्रयास', 'बापू की दिनचर्या', 'बापू की सेवा में—बा', 'भारत के अमर कलाकार', 'भारत-निर्माता', 'लक्ष्य की ओर', 'श्रीगणेशाय नमः', 'सुभाष की क्रांति', 'सृजक' आदि कला-कृतियाँ, अनेक आवरण-चित्र और अनगिनत रेखांकन प्रकाशित।

एम-१/६३, सेक्टर-बी,
अलीगंज, लखनऊ-२२६०२४ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९८४७६२६५८

# उस होली से इस होली तक

● शमीम शैख

होली का त्योहार रंग-बिरंगी बौछार न जाने कितने रंग रहे सवार, गुजरी होली से आज तक बेशुमार रंगों से हमारा पाला पड़ा है। जब किसी पर किसी का रंग सवार हो जाता है तो वह उसी रंग की रंगीनियों में खो जाता है। पिछले दिनों हमारे प्रधानजी को नोटबंदी का रंग हो गया सवार। पूरा देश उनकी इस रंग-रँगीली अदा में गीत गा उठा मल्हार। गृहणियों ने रंगबाजी दिखाकर अपने घरवाले को पटाकर जो धन छिपा लिया था, उसे काले धन की ब्रादरी में खपा लिया था, वह भी उछलकर सामने आ गया था। उन्होंने सब्र के आँसू पोंछते हुए तसल्ली कर ली, आशा धर ली कि मौका फिर मिलेगा। हमारा चुनाव समर भी किसी होली के सीजन से कम नहीं। इसमें भी नाना प्रकार के रंगों का मिश्रण है। चुनाव का रंग चढ़ता है तब चुन-चुनकर रंगों के फव्वारे उड़ाता है। इसमें पिता, पुत्र, चाचा, भतीजा, भैया सभी अपनी-अपनी पिचकारियाँ सँभाल लेते हैं और रंगों की बौछार कर बैठते हैं, परंतु पिचकारी में भरा रंग एक ही निकलता है और वे एक ही रंग में रँगे दिखाई देते हैं। यह माजरा देख वे फिर कह उठते हैं, बुरा न मानो होली है, गले लग जाते हैं और गा उठते हैं—

*''लग जा गले कि फिर ये हँसीं रात हो न हो,*
*होशियार रहेंगे हम कि अब ऐसी भितरघात न हो।''*

अब होली की ऋतु होती ही कुछ ऐसी है कि मनुष्य हुड़दंगी बन बैठता है और होली की टोली में दौड़ पड़ता है लेकर रूप हुड़दंगी। सुना तो यों गया है कि यह राजा और रंक के मिलन का त्योहार है। इसके रंग-गुलाल से द्वेष, गिले-शिकवे हो जाते हैं समाप्त तथा प्रेम और मोहब्बत की दौड़ पड़ती है सौगात।

दौड़-पदौड़ की बात चली है तो हमारा नवयुवक भी तीव्र गति से दौड़ने में पीछे थोड़े ही रहेगा। आ गई होली, दौड़ पड़ी नौजवानों की टोली। रंग बहाया, गुलाल उड़ाया, छोकरों की सड़कों पर डोलती टोली को देख भाँग के रंग में एक युवक यों चिल्लाया, गीत भरा गुलाल यों उड़ाया—

''चौदहवीं का चाँद हो या आफताब हो,
खुदा की कसम तुम लाजवाब हो।''

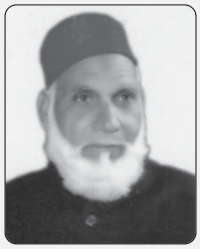

सुपरिचित व्यंग्य लेखक। 'सपनों के झरोखों से', 'खड़ा कबीरा बाजार', 'हलचल', 'मैं झाँसी हूँ १८५७ से अब तक', 'I Am Jhansi In English', 'मेरा सफर', 'दही वाली', 'रंग मंच पर' (रचना-संग्रह) एवं विभिन्न समाचार-पत्रों में हास्य-व्यंग्य रचनाओं का लेखन।

छोकरियों ने इस हुरियारी टोली को निहारा। एक ने उनमें से आगे बढ़ एक हुरियारे के कान पर जोर से एक फटाका उड़ाया, जिससे उसके गाल पर टमाटरी रंग बिखर आया, तभी सब सहेलियों ने खिल-खिलाकर ताली बजाते नारा लगाया, 'बुरा न मानो, होली है, भैया होली है'; तभी नवयुवकों में से एक चिल्लाया, 'भाग लो भौयहरो, कहीं १०० नंबर को कॉल न घल जाए। नवयुवकों की टोली से निकल पड़ी यह बोली—

*''ये न थी हमारी किस्मत कि विसाले यार होता।''*

अब होली का मौसम है तो जाहिर है कि इजलास, प्रोग्राम और जलसे तो होंगे ही। सांस्कृतिक कार्यक्रम तो होते ही रहते हैं, परंतु इस ठंड और गरम हवा के मिश्रित मौसम में नृत्य, ढोल, नगाड़े पर थाप हो या गीत गायन की बात या हो कवि सम्मेलन की बरसात, इन सब का रंग ही अलग खिलता है, परंतु विडंबना और मुश्किल तब आती है जब इन कार्यक्रमों की भरमार पर अध्यक्षों और चीफ गेस्टों का शॉर्टेज होने लगता है। मेरा अभिप्राय यह नहीं है कि इन महान् हस्तियों का परिवार नियोजन हो गया है बल्कि यह है कि नामचीन बुद्धिमस्त, आचार्य, प्राचार्य को पहले से ही होशयार आयोजक उन्हें किडनेप कर लेते हैं। चंदामामा कार्यक्रमों के लिए तो नगर और नगर निगम में बहुतेरे टहलते फिरते मिल ही जाते हैं।

हुड़दंग लीला के कार्यक्रम का आयोजन बड़ी ही धूमधाम से आयोजित होने जा रहा था, जिसमें नाना प्रकार के गुलदस्तों के फूल के महकने की आशा थी। परंतु गाड़ी किसी नामवर मुख्य अतिथि पर आकर अटक रही थी, जिससे आयोजक की प्रस्टेज की घंटी बज रही थी। आयोजक महोदय

शहर की सड़कों पर चहलकदमी कर रहे थे कि अचानक उनकी नजर एक महाविद्यालय के महागुरु पर पड़ी। चौराहे के रेड सिग्नल पर उनकी कार थी खड़ी। आयोजक महोदय ने उस ओर दौड़ लगा दी और अपनी बाड़ी कार से मिला दी। ड्राइवर बहुत चीखा-चिल्लाया, परंतु आयोजक कार से नीचे न आया, तब महागुरु ने कहा, ''क्या बात है क्यों कार के बोनट पर लोट-पोट मचाए हो, मेरी खोपड़ी को पिचकाए हो?'' इतने में ग्रीन सिग्नल हो गया। हॉर्न बजाते हुए ड्राइवर गाड़ी को आगे ले गया। हाथ जोड़ आयोजक चिल्लाया, ''महाशय, मेरी बिनती सुनिए, मेरी प्रस्टेज को सिक्योर करिए! हुजूर, होली मिलन का एक भव्य आयोजन हो रहा है, जिसमें शहर भर के गण्यमान्य व्यक्तियों का सम्मेलन हो रहा है। बस एक चीफगेस्ट की सीट खाली है, उसके लिए आपकी छवि निराली है। श्रीमान आप इस पद को ग्रहण कर लीजिए और इस कार्यक्रम को शोभायमान कर दीजिए। महागुरु ने गाड़ी रोकने का संकेत दिया। गाड़ी रुकते ही महागुरु कार से बाहर आए, तब आयोजक ने कार के बोनट से छलाँग लगाई और स्नेह भरी दृष्टि से महागुरु के चरणों में सिंगल बॉडी को अर्पित कर फिर अपनी गुहार लगाई।

महागुरु बोले, ''महोदय, उस तारीख में मेरे चार बाहरी प्रोग्राम लगे हैं, जो मेरे हृदय में पड़े हैं और पाँचवाँ घर का है, अगर घरवाली ने परमीशन दे दी तो अवश्य ही अंतिम समय में उपस्थित होकर आपके पांडाल की शोभा बढ़ाऊँगा। आपकी निराशा को आशा में बदल जाऊँगा।

सिक्योरिटी गार्ड ने आयोजक महोदय को दूर धकेला, फिर कार का दरवाजा खोला। महागुरु कार में प्रवेश कर गए। कार आगे बढ़ गई। आयोजक भी बन गया उनके पीछे घोड़ा। यह देखकर सड़क पर खड़ा कुत्ता उनके पीछे दौड़ा। आयोजक टाँग फैला गए और रोड पर ही गुलाट खा गए। अपनी गीत-फुहार यों फरमा गए—

*''तेरा जाना दिल के अरमानों का मिट जाना।*
*कोई देखे तकदीरों का मिट जाना।''*

इस समय पर एक खुशी के बंदों की टोली वहाँ आ गई। आयोजक महोदय के हाल पर तरस खा गई। उन्होंने उनको सँभाला और पूरा माजरा भी जाना, तब उनमें से एक ने ताली फटकारते हुए कहा, ''अयहय! अल्ला की कसम, बड़ा जुलुम मचा गया जे कारवाला।''

उनमें से एक फ्लाइंग किस लेते हुए बोला, ''अरे जुग्गू! तुम्हारी निराशा को आशा में बदल देंगे हमारे उस्ताद।'' तब उस्ताद आगे आए और चार ताली फटकारकर यों फरमाए, ''अयहय बन्नो! क्या पटर-पटर बातें करे जा रही हो जा लौंडे से।''

बन्नो ने तालियाँ फटकारते हुए कहा, ''परेशानी में पड़ा है, एक चीप गेस्ट के लिए अड़ा है। मैं तो कहती हूँ, हमारे उस्ताद को बिठा दो चीप गेट की कुरसी पर, तेरे होली के जलसे में चार चाँद लग जाएँगे।''

आयोजक ने सड़क पर बैठे-बैठे अपनी आँखों को खोला और दया-दृष्टि से उनकी ओर देखा। तब उनका उस्ताद यों बोला, ''अल्ला कसम, हमारी बन्नो सही कह रही है। खेल में, जेल में, रेल में और हर घर की पोल में सभी जगह तो हमारा बोलबाला है। जितने मशहूर हम हैं, क्या कोई और हो सकता है। तेरे मजमे में हम ताली फटकार ठुमका लगाएँगे तो वहाँ बैठे सबके सब खुशी में लोट-पोट हो जाएँगे और न्योछावरों का ढेर लगाएँगे।

आयोजकजी ने एक फुरती मारी, अपनी पैंट-शर्ट झाड़ी और दौड़ लगा दी। यह देख टोली ने ढोलक पर थाप मारी और गीत के बोलों की झड़ी यों मारी—

*''रुक जा ओ जानेवाले रुक जा,*
*मैं तो राही तेरी मंजिल का।''*

अब होली है तो जरूरतमंद भी इस अवसर का इंतजार कर रहे हैं, मौका मिलते ही इसे कैश करते हैं। हुआ यों कि जग्गा राम एक मोटर मिस्त्री बड़ी मेहनत-मशक्कत से काम करके नई-पुरानी मॉडल की मोटरकारों की मरम्मत कर उनका उद्धार करते। मजदूरी भी मुँहमाँगी लेते, परंतु नई करेंसी में भी उन्हें बड़े नोट प्राप्त न होते, छोटे-मोटे नोट उछल-कूद मचाकर बाजार में खर्च हो जाते। लाख कोशिश करके भी वे बचत-जमा न कर पाते। एक दिन किस्मत से उन्हें सौ-सौ के २१ नोट प्राप्त हो गए। फिर क्या था, मिस्त्री साहब खुशी के हिंडोले में डोल गए। नकदी हाथ लगते ही होली के जश्न में शिरकत करने का प्रोग्राम बनाया। दारू के ठेके पर जाकर एक पउआ चढ़ाया और चले झूमते-झामते घर की ओर। रास्ते में उन्हें अपने नोटों की याद ने सताया। उन्होंने जेब से नोट निकालकर फख्र से काउंटिंग प्रारंभ कर दी।

ताड़नेवाले भी कयामत की नजर रखते हैं। एक जरूरतमंद मिस्त्रीजी के पास आ गया। दो हजार का नोट देकर सौ-सौ के बीस नोट छुट्टा लेने का बहाना पा गया। मिस्त्रीजी प्रसन्न हो गए कि नई करेंसी में दो हजार के नोट पहली बार दर्शन पा गए। अब घर जाएँगे, होली के मौसम की शाम घरवाली को दो हजार का पूरा गुलाबी नोट थमाएँगे और प्रेम की दो पींगें बढ़ाएँगे। लड़खड़ाते गाते—

*''मुझे दुनियावालो शराबी न समझो*
*मैं पीता नहीं हूँ, पिलाई गई है।''*

गीत की पंक्तियों के साथ प्रसन्नतापूर्ण दो हजार का नोट अपनी श्रीमतीजी को थमाया और यों फरमाया, ''सुनती हो, ये पूरे दो हजार का नोट है सुंदर-सुंदर सा, अब इसे खर्च में नहीं लाना, जमा में रखेंगे।'' उनकी श्रीमतीजी ने नोट को थामा, फिर अपनी गहरी नजर को उस पर डाला और चीखीं, ''हाय राम! दारू के झोंक में तुम क्या कर बैठे, ये दो हजार का चूरन का नोट ले बैठे। मिस्त्रीजी ने एक दहाड़ लगाते हुए कहा, ''देख, तू अनपढ़-गँवार घर की है, जिंदगी में पहली बार नया नोट देख रही है और हमारी सरकार को चूरन मेड कह रही है। उसको चूरन का कह रही है।'' इतना कहकर मिस्त्रीजी ने नोट झटक लिया और चार बार देखकर उनकी दारू फुर्र हो गई और वे चिल्लाते हुए भागे, ''अरे! कोई नटवरलाल मुझे झटका दे गया और असली की जगह नकली दे गया!

२८२, इतवारइ गंज, झाँसी-२८४००२ (उ.प्र.)
दूरभाष: ०९४५२९६९०३५

कहानी

# आखिर वो मर्द है

● रहिला रईस

कोठी के जनाने हिस्से के गेट पर गाड़ी लेकर ड्राइवर खड़ा है। अंदर से न तो कोई आवाज आ रही है, न ही कोई रोना-गाना, बस एक सन्नाटा पसरा है। हाँ, बस थोड़ी-थोड़ी देर में टीपू बाबा की सिसकी जरूर खामोशी की चादर में छेद करती सुनाई पड़ जाती है। सब खामोश हैं। घर में इतने नौकर-चाकर हैं, पर मजाल है कि दिल की बात किसी की जुबान पर आ जाए। सबीहा ने अचानक ही हमेशा के लिए मायके जाने का फैसला कर लिया था। उसके इस निर्णय से सब हतप्रभ रह गए थे। हालाँकि सारी नौकरानियाँ और कोठी से जुड़ी दीगर औरतें जानती थीं कि सबीहा ठीक कर रही है, लेकिन वह भी उसके भविष्य को लेकर सशंकित थीं और मर्द समझते थे कि यह सरकश औरत है, कुछ दिन मायके में रहने से खुमारी उतर जाएगी और आ पड़ेगी फिर से मियाँ के जूते पर। आखिर मर्द है, अगर सईद साहब ने ऐसा कर लिया तो कौन सी कयामत आ गई। उन्हें तो शरीयत से इसके लिए इजाजत है।

टीपू का हाथ खींचते हुए वह गाड़ी में जा बैठी और ड्राइवर को चलने की हिदायत दे डाली। सईद साहब के चेहरे पर न तो शर्मिंदगी थी, न अपने किए का पछतावा। बस अपने होंठों में सिगार दबाए सूनी निगाहों से देखते रहे और सबीहा चली गई। जाना उसके लिए भी आसान नहीं था। अपना घर छोड़ना, वह भी डोली में जाओ और अरथी में निकलो जैसे संस्कारों में पले-बड़े होकर बहुत मुश्किल था। खाली नजरों और भरे दिल से अपलक वह एक-एक चीज निहार रही थी। कोठी के सामने के बगीचे की हर पत्ती, हर फूल इसका गवाह था कि कैसे उसने इस उजाड़ चमन को सँवारा था। गाड़ी फर्राटे भरती निकल गई। पीछे रह गई सिर्फ धूल और गुबार।

गाड़ी सड़क पर तेजी से दौड़ रही थी। उसे अभी ४५० कि.मी. का सफर तय करना था। रास्ते के हर गाँव, हर शहर को सबीहा पहचानती थी, पिछले चार साल में न जाने कितनी बार वह इन रास्तों से गुजरी थी। हर बार सईद साहब साथ होते तो सफर खुशनुमा होता। पर आज, आह! सबीहा को आज से लगभग चार साल पहले का सफर याद आ रहा था, जब इसी रहगुजर पर सईद साहब के पहलू में दुलहन के लिबास में वह बैठी थी। यह कार उसके बाप ने दहेज में दी थी, फूलों से सजी यह कार भी तो उसकी तरह दुलहन ही लग रही थी और आज जब वह उजड़ी है तो यह कार भी उजड़ी लग रही है। यह भीड़ भरा रास्ता साँय-साँय करता बियाबान सा महसूस हो रहा था।

सुपरिचित लेखिका। प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कहानी, शोध-पत्र, अनूदित कहानियाँ प्रकाशित। साहित्य मंडल, श्रीनाथद्वारा द्वारा 'साहित्य कुसुमाकर' की मानद उपाधि से सम्मानित। संप्रति अलीगढ़ मुसलिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ में सहायक प्रोफेसर (हिंदी) के रूप में कार्यरत।

सबीहा अपने माँ-बाप की इकलौती और लाड़ली बेटी थी, लाडों में पली। जो माँगा मिला, न सुनना तो वह जानती ही नहीं थी। अब्बा की काफी बड़ी जमींदारी थी, बिजनेस था। हवेलीनुमा मकान, ढेरों नौकर-चाकर, गर्ज यह कि सबीहा ने बचपन से सिर्फ ऐशो-इशरत में ही जिंदगी गुजारी थी। अब्बा की हर कोशिश यही होती थी कि सबीहा को कोई तकलीफ न हो, कोई परेशानी न हो। सबीहा की आँख में आँसू तो वह देख ही नहीं सकते थे। पर माँ-बाप अपनी बेटी को कितना भी प्यार करते हों, वह उनकी आँख का तारा, कलेजे का टुकड़ा हो, पर उन्हें उसे अपने से दूर करना ही पड़ता है। बी.ए. फाइनल के इम्तिहान होते ही हर माँ-बाप की तरह सबीहा के माँ-बाप भी उसकी शादी के लिए तथाकथित अच्छे लड़के की तलाश में लग गए।

दूसरी तरफ सईद साहब आई.एस. एलाइड में नए-नए सलेक्ट हुए थे। प्रशिक्षण के बाद सर्विस ज्वॉइन की थी। देखने में नौजवान थे, ऊँचा घराना था, पुश्तैनी जमींदारी थी और तीन भाई सिविल सर्विस में चयनित हो चुके थे, जिसकी वजह से घर की इज्जत और रसूख में चार चाँद लग गए थे। सईद साहब की नौकरी हो जाने के बाद से उनकी माँ भी उनकी शादी को लेकर उत्साहित थी। ऐसे में जब उन्हें सबीहा के बारे में पता चला तो वे फौरन ही रिश्ता लेकर पहुँच गईं सबीहा के घर। अंधा क्या चाहे, दो आँख। रिश्ता फौरन ही कबूल कर लिया गया और चट मँगनी, पट ब्याह, चंद महीनों में ही सबीहा सईद साहब के निकाह में थी।

सबीहा के लिए यह शादी जैसे ख्वाबों के आने का सबब थी। वह बहुत खुश थी। सातवें आसमान पर थी। सईद साहब अच्छे इनसान थे। एलाइड ही सही, आई.एस. थे, ऊँचे खानदान के थे और सबसे बड़ी बात पत्नी का दिल जीतना जानते थे। एक लड़की को जिंदगी में और क्या चाहिए। उनकी शादीशुदा जिंदगी का आगाज बहुत ही शानदार था। दिन सुनहरे और रातें रुपहली थीं। सईद साहब का ट्रांसफर हो गया था। अब उन्हें घर से दूर जाना था। इन दिनों सबीहा के अंदर नई जिंदगी करवट

लेने लगी थी। ऐसे में सबीहा का अकेले रहना न तो मुमकिन था और न ही मुनासिब। सईद साहब की माँ जईफ और उम्रदराज थीं, बीमार रहती थीं। ऐसे में उन्हें साथ रखना परेशानियाँ घटाने के बजाय और बढ़ा सकता था। इसलिए सबीहा की आया को उनकी देखभाल के लिए भेज दिया गया। आया सबीहा के साथ रहती, उसका पूरा खयाल रखती। धीरे-धीरे वक्त गुजरता गया और नौवाँ महीना लग गया।

''बिटिया, हम अपनी बहन को यहाँ बुला लें। अब किसी भी वक्त नन्हा मेहमान आ सकता है। ऐसे में मैं अकेली कैसे सँभाल पाऊँगी, अगर मेरी बहन भी साथ रहेगी तो आसानी होगी।'' एक दिन सबीहा की गिरती हालत देखकर आया ने कहा।

''मैं साहब से पूछकर बताती हूँ।'' सबीहा ने जवाब दिया।

सईद साहब को भला क्या एतराज हो सकता था, बीवी की गिरती सेहत और आनेवाली जिंदगी में बढ़ते हुए काम को देखते हुए वे खुद ही फिक्रमंद थे। आया ने अपनी बहन को बुलवा भेजा। एक हफ्ते बाद ही दीदी गाँव से आ गई। उनके साथ ही आई आया की दो बेटियाँ—चौदह साल की नरगिस और दस साल की गौहर। दोनों बच्चियाँ बेहद खूबसूरत। लगता ही न था कि वे नौकरानी की बेटियाँ हैं। आया भी कम खूबसूरत नहीं थी, पर चढ़ती उम्र, मेहनत और गरीबी की वजह से उनकी देह ढल गई थी और रंग फीका पड़ गया था। हालाँकि नाक-नक्श उनकी खूबसूरती के सबूत के रूप में उतने ही तीखे थे।

खैर से सही वक्त पर सबीहा ने एक बेटे को जन्म दिया। बेटे की पैदाइश के बाद वह काफी बीमार हो गई। फिर मसरुफियत भी बढ़ गई थी। हर औरत की तरह उसका रुझान भी बेटे पर ज्यादा और शौहर पर कम हो गया। यह हर स्त्री की प्रकृति होती है कि वह सबसे पहले माँ होती है, बाद में कुछ और; और खुदा का सबसे अनमोल तोहफा अब उसकी गोद में था तो जाहिर है कि उसका पूरा ध्यान अपने बच्चे पर था। उसका सोना-जागना, खाना-पीना, हँसना-रोना सब बच्चे से जुड़ गया था। पर क्या यही उसका गुनाह था। ऐसा गुनाह, जिसने उसकी जिंदगी बरबाद कर दी।

बेटे की पैदाइश से सईद साहब भी बहुत खुश थे, लेकिन सबीहा का बच्चे की तरफ ज्यादा रुझान होना उन्हें अखर रहा था। आखिर वे बच्चे के बाप थे, होना तो यह चाहिए था कि वे भी सबीहा के साथ बच्चे की देखभाल में हाथ बँटाते, उसके हँसने से खुश होते, उसके रोने पर परेशान होते, उसके साथ खेलते, उसको धीरे-धीरे बढ़ते देखते, पर नहीं, वे तो मर्द थे, जिसका काम सिर्फ बीज बोना था। परवरिश की जिम्मेदारी तो सिर्फ औरत की होती है और सिर्फ यही नहीं, उनकी ख्वाहिश तो यह थी कि सबीहा पहले की तरह ही उनकी खिदमत में लगी रहे। उनके दिन और रात पहले की तरह ही गुजरें, पर यह मुमकिन कहाँ था। पति-पत्नी के एकांत जीवन में जब नई जिंदगी शामिल होती है तो उनकी दिनचर्या में बदलाव तो आता ही है।

**आजकल न जाने क्यों, नरगिस हमेशा सईद साहब के इर्द-गिर्द ही मँडराया करती थी। उनका हर काम उसने अपने जिम्मे ले लिया था। सुबह की चाय साहब के कमरे में पहुँचाने से लेकर रात का दूध का गिलास मेज पर रखने तक का सारा काम वह खुद ही करती। यहाँ तक के उनके निजी काम भी वही करती। सबीहा मुतमईन थी कि सईद साहब को कोई परेशानी नहीं है और वह उनसे और भी बेफिक्र होकर अपने बच्चे में मसरूफ हो जाती ।**

सबीहा तो इस बदलाव को अपना चुकी थी, पर सईद साहब के लिए अपना आराम सबसे पहले था। वे अब भी सबीहा को नई-नवेली दुलहन के रूप में ही देखना चाहते थे।

जहाँ एक ओर सबीहा माँ के फर्ज निभाने में मशगूल थी, अपनी जिस्मानी खूबसूरती से गाफिल थी, वहीं दूसरी ओर नरगिस अच्छे रहन-सहन और खान-पान से दिन-ब-दिन निखरती जा रही थी। उसका हुस्न दोबाला हो रहा था। खूबसूरती उसके अंग-प्रत्यंग से फूटती था। आजकल न जाने क्यों, नरगिस हमेशा सईद साहब के इर्द-गिर्द ही मँडराया करती थी। उनका हर काम उसने अपने जिम्मे ले लिया था। सुबह की चाय साहब के कमरे में पहुँचाने से लेकर रात का दूध का गिलास मेज पर रखने तक का सारा काम वह खुद ही करती। यहाँ तक के उनके निजी काम भी वही करती। सबीहा मुतमईन थी कि सईद साहब को कोई परेशानी नहीं है और वह उनसे और भी बेफिक्र होकर अपने बच्चे में मसरूफ हो जाती। लेकिन क्या ऐसे मर्द पर एतबार किया जा सकता था, जिसे सिर्फ अपने आराम की फिक्र हो, जिसके लिए औरत सिर्फ उसकी जरूरत पूरी करने का जरिया हो। ऐसा भी नहीं था कि सबीहा उनसे बिल्कुल बेपरवाह हो गई हो, लेकिन फिर भी।

आया की बूढ़ी और तजुर्बेकार आँखों से बेटी की उड़ान छिप न सकी। एक दिन उन्होंने उसे आड़े हाथों ले ही लिया—

'नरगिस, तुम साहब के कमरे में सुबह-सुबह चाय लेकर मत जाया करो। यूँ भी तुम्हारा उनके कमरे में जाना अच्छा नहीं लगता। गौहर से भिजवा दिया करो।' आया ने नरगिस को समझाया।

'अम्मा, गौहर अभी छोटी है। कहीं चाय उस पर गिर गई तो?' नरगिस ने माँ को तर्क दिया।

'कोई बात नहीं, दीदी से कह दिया करो।' आया ने सुझाव दिया।

पर नरगिस के पास तो हर बात, हर तर्क की काट मौजूद थी।

'अम्मा, दीदी तो सुबह के वक्त बावरचीखाने में मशगूल होती हैं, जल्दी होती है न नाश्ता बनाने की। साहब भारी नाश्ता करना पसंद करते हैं तो बनाने में वक्त तो लगता ही है।' नरगिस ने जवाब दिया।

आया को अपनी बेटी के लक्षण कुछ ठीक नहीं लग रहे थे। वह नमकहलाल औरत थी और फिर सबीहा को उन्होंने अपनी बच्ची की तरह पाला था। वह उसका भला चाहती थी।

'बेटी सबीहा, अब टीपू बाबा एक साल के होनेवाले हैं। तुम्हारी

तबीयत भी खुदा के फजल से ठीक है। अब सोचती हूँ कि दीदी और लड़कियों को वापस भेज दूँ।'

सबीहा के वहमों गुमान में भी नहीं था कि आया किस दिमागी उलझन का शिकार थी और लड़कियों को भेजने के लिए क्योंकर कह रही है।

'अभी क्या जल्दी है, आया अम्मा। आप भी तो यहीं हैं। लड़कियाँ भला वहाँ अकेली क्यों रहेंगी। इतना बड़ा घर है, यहीं रहेगी आराम से। अब आप दुबारा मत कहना उन्हें भेजने को। उनके रहने से तो घर में रौनक है, चहल-पहल है और फिर टीपू भी तो उनसे कितना हिल गया है। जाएँगी तो हुड़क करेगा। वे अभी यहीं रहेंगी बस।' सबीहा ने कहा।

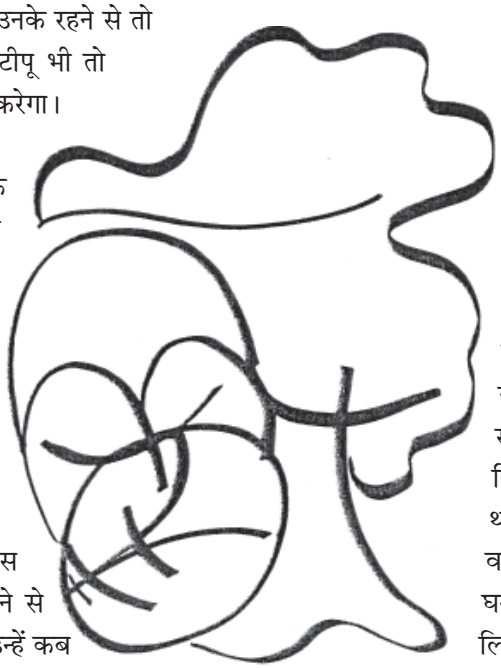

आया आगे कुछ न कह सकी। उनके दिल में अँदेशे उठ रहे थे। भविष्य की काली परछाइयाँ उन्हें अभी से दिख रही थीं। हालाँकि सईद साहब की तरफ से अभी तक उन्हें ऐसी कोई भनक नहीं मिली थी, जो उनकी बदकिरदारी की अलामत होती, पर आग और पानी साथ नहीं रखे जाते, वह अच्छी तरह जानती थीं। मर्द जात पर भरोसा किया भी तो कितना जा सकता था और वह भी तब, जब बला की खूबसूरत, कमउम्र नरगिस खुद ही उनकी तरफ झुक रही हो। माँ बनने से कमजोर जिस्म और बच्चे में उलझी सबीहा उन्हें कब तक बाँध पाएगी, कहा नहीं जा सकता। ऐसे में कब उनका पैर फिसल जाए, कोई ताज्जुब नहीं।

आया सबीहा को लेकर फिक्रमंद थी। नरगिस कुछ भी सुनने और मानने को तैयार नहीं थी और सबीहा से उसने बात तो की थी, पर वह खुलकर उससे कुछ कह नहीं सकती थी। अब उसने दीदी से इस बारे में बात करने का फैसला किया, शायद वह कुछ सलाह दे सकें। दीदी से बात करने पर आया को पता चला कि वह तो सबकुछ जानती हैं और यही नहीं, नरगिस की हिम्मत ही दीदी की शह पर बढ़ी थी।

'आपा, तुम तो कुछ समझती ही नहीं, हम दोनों की उम्र ढलान पर है। बदन में ताकत कब तक रहेगी। कब तक मेहनत कर पाओगी। सोचो आपा, अगर साहब नरगिस से शादी कर लें तो हमारा बुढ़ापा सुकून से कट जाएगा और बच्ची की जिंदगी भी बन जाएगी। उसके नसीब खुल जाएँगे आपा, वरना उसकी किस्मत में तो कोई ड्राइवर या नौकर-चाकर ही लिखा होगा। आपा, मौका मिल रहा है तो छोड़ो मत और फिर इसमें गलत क्या है? मर्द तो चार शादी कर ही सकते हैं।' दीदी ने निहायत ही दुनियादारी भरे लहजे में कहा। लालच और स्वार्थ उनके रोम-रोम से टपक रहा था।

आया चुप रह गई, पर उसका दिल ऐसा करने को तैयार नहीं था।

आखिरकार वही हुआ, जिसका खौफ आया की नींदें हराम कर चुका था। नरगिस की बुलावा देती निगाहों की जबान को सईद साहब सुनने लगे थे और अब उनका जवाब भी देने लगे थे। निगाहों का मिलना कब उनके मिलन में बदल गया, पता ही नहीं चला। चोरी-छिपे अब उनकी मुलाकातें होने लगीं। ताज्जुब की बात यह थी कि सबीहा इन सब बातों से अनजान थी। शायद वह अपने शौहर पर जरूरत से ज्यादा यकीन करती थी या शायद नरगिस, जिसे वह अपनी बहन की तरह प्यार करती थी, उसके बारे में वह ऐसा सोच भी नहीं सकती थी। अगर कभी नरगिस या सईद साहब को कोई बात करते वह सुन भी लेती तो साली-बहनोई का मजाक ही समझती। आया और दीदी के वर्चस्व की वजह से दूसरे कामवाले सबीहा से कुछ कहने की हिम्मत भी न जुटा पाते।

ऐसे ही दिन बीतने लगे। सबीहा के अब्बा बहुत बीमार हो गए थे। इसलिए उसे अपने मायके जाना पड़ा। अब्बा की तबीयत सँभलने में काफी वक्त लग गया। वह अम्मी को अकेला छोड़कर नहीं आ सकती थी। सबीहा और उसके माँ-बाप सईद साहब के बहुत एहसानमंद थे कि उन्होंने इतने दिनों के लिए सबीहा को रुकने की इजाजत दे दी थी। अब्बा अब काफी बेहतर थे। अत: सबीहा वापस अपने घर जाने की तैयारी में जुट गई। अपना घर, क्या होता है यह, अपना घर एक औरत के लिए? शादी से पहले जिस घर को वह अपना घर मानती है, जो उसकी पनाहगाह होता है, वही घर शादी के बाद पराया क्यों हो जाता है? वहाँ की हर चीज, जो पहले अपनी लगती है, वह बेगानी और परायी महसूस होने लगती है। सबीहा भी कल मायका छोड़ अपने घर जानेवाली थी। सईद साहब से मिलने की खुशी उसे दीवाना बना रही थी। कितने तोहफे खरीदे थे उसने सबके लिए।

सबीहा सईद साहब को सरप्राइज देना चाहती थी। अत: अपने आने के बारे उसने नहीं बताया था। खुशी में डूबी-चहकती हुई सबीहा जब घर पहुँची तो वहाँ की हर चीज उसे बदली हुई दिखाई दी।

बगीचे की तराश से लेकर ड्राइंगरूम की सेटिंग तक बदली हुई थी। सबीहा को बदलाव अच्छा लग रहा था। वह सोच रही थी कि सईद साहब ने उसके स्वागत के लिए ही यह सब किया है। पर इस नई सेटिंग में सबीहा की पसंद का ध्यान नहीं रखा गया था, यह बात उसे खटक रही थी। अपने बेडरूम में तो उसे एक अलग और अजनबी खुशबू का अहसास हुआ, पर शौहर की मोहब्बत में डूबी सबीहा ने सिर झटक दिया। सबीहा को देखकर आया और दीदी के तो होश ही उड़ गए थे। सबीहा ने अपना ब्रीफकेस खोलकर अपने लाए हुए तोहफे देने के लिए नरगिस और गौहर को आवाज दी। नरगिस का रूप देखकर सबीहा अचंभे में पड़ गई। वह किसी नई-नवेली दुलहन की तरह सजी हुई थी। लाल कपड़े, भरे हाथ चूड़ियाँ और पैरों में बिछिया। सबीहा समझने की

कोशिश ही कर रही थी कि ऐन इसी वक्त सईद साहब की आमद और उनका नरगिस को पुकारना, उसे सबकुछ समझा गया। सबीहा के पैरों तले से जमीन ही निकल गई। होश-हवास गुम थे। उसका दिल छलनी हो चुका था।

सबीहा ने तीखी नजरों से आया की तरफ देखा। आया की निगाहें नीची थीं, पर नरगिस की आँखों में न हया थी, न अफसोस। बल्कि उसकी नजरों में सबीहा को अपने लिए हिकारत दिखाई दे रही थी। सबीहा ने उसी वक्त घर छोड़ने का फैसला कर लिया। सईद साहब सबीहा की भीतरी उथल-पुथल से बेपरवाह पुरसुकून खड़े थे। सबीहा को जाने से उन्होंने रोका भी नहीं, सिर्फ इतना ही कहा, 'अगर जाओगी तो फिर हमेशा के लिए इस घर के दरवाजे तुम्हारे लिए बंद हैं, सबीहा बेगम। मैंने कोई गैर शरई काम नहीं किया है और यह बात याद रखना कि मैं तुम्हें तलाक नहीं दूँगा। बैठी रहना उम्र भर मेरा नाम लेकर।'

'नहीं मियाँ, मैं कब कह रही हूँ कि आपने गैर-शरई काम किया है। शरीयत से दूसरी शादी की जरूर इजाजत है, पर किन्हीं खास हालात में ही, अय्याशी के लिए नहीं और मियाँ, आपको मेरी इजाजत भी तो लेनी थी, यह भी तो शरीयत का फरमान है। अपने फायदे के लिए शरीयत को तोड़ना-मरोड़ना मरदों की आदत बन चुकी है, पर मैं बगावत करूँगी और क्या कहा आपने, तलाक नहीं देंगे, मत दीजिए, मेरे पास भी खुदा का हक है, जो शरीयत से मुझे मिला है। लेकिन मर्द जात से मेरा भरोसा उठ चुका है। मुझे अब शादी करनी ही नहीं, इससे तलाक हो या न हो, कुछ फर्क नहीं पड़ता और हाँ मियाँ, मैंने अपना मेहर भी माफ किया। तुम जैसे बेमुरव्वत और धोखेबाज इनसान की फूटी कौड़ी भी मुझ पर हराम है।' कहकर सबीहा ने घर छोड़ दिया।

अपना सबकुछ पीछे छोड़, लुटी-पिटी सबीहा जब मायके पहुँची तो अम्मी-अब्बा के तो होश-हवास ही गुम हो गए। वह बाप, जो अपनी बेटी की आँख में एक आँसू न देख सकता था, अब अपनी बेटी को बिलखते देख रहा था। गुस्से से उनकी आँखें जल रही थीं। वह इस आग में सईद साहब को स्वाहा कर देना चाहते थे। वह ऐसा कर भी सकते थे, पर सबीहा को तो सईद साहब से कोई वास्ता ही नहीं रखना था।

''अब्बा, जब वह आदमी मेरी मुरब्बतों और मोहब्बतों की कद्र अपने दिल और जज्बात से न कर सका तो पुलिस-अदालत और शरीया अदालतों की जबरदस्ती से ऐसा करवाने का क्या फायदा? मेरा वकार इसकी इजाजत नहीं देता कि मैं उससे मोहब्बत की भीख माँगूँ। अब्बा, क्या आपके घर में मुझे और मेरे बेटे को पनाह नहीं मिल सकती?'' कहकर सबीहा फूट-फूटकर रोने लगी।

बेटी के आँसुओं की फुहारों से उनका गुस्से से जलता दिल ठंडा पड़ गया।

''ठीक है बेटा, वही होगा जो तुम चाहोगी। लेकिन एक अकेली औरत के लिए जिंदगी जीना इतना आसान भी नहीं। तलाक तो ले ही सकती हो।'' अब्बा ने हारते हुए लहजे में कहा।

''नहीं अब्बा, मैं दूसरी शादी के बारे में सोचना भी नहीं चाहती। जब एक से वफा नहीं मिली तो दूसरे का क्या भरोसा। इसलिए तलाक हो या न हो, क्या फर्क पड़ता है। मैंने अपना मेहर भी माफ कर दिया है। जिस इनसान से मैंने शिद्दत से मोहब्बत की, उसने मुझे धोखा दिया और फिर नरगिस, जिसे मैं छोटी बहन मानती थी, उसने भी मुझे धोखा दिया। मेरे यकीन को, ऐतबार को किरची-किरची कर दिया अब्बा, अगर आप इजाजत देंगे तो मैं यहीं रह जाऊँगी, वरना खुदा की दुनिया बहुत बड़ी है।'' कहकर सबीहा ने उम्मीद भरी नजरों से बाप की ओर देखा।

''बेटा, सबकुछ तुम्हारा है। जो तुम चाहती हो, वही होगा। खुदा की लाठी बेआवाज होती है। उसे भी सजा मिलेगी। तुमने अपना फैसला अल्लाह पर छोड़ा है तो यकीन रखो, वह बेहतर इनसाफ करनेवाला है। कल से तुम मेरे साथ ऑफिस चलोगी और बिजनेस में मेरा साथ दोगी।'' कहकर अब्बा ने सबीहा के सिर पर हाथ रख दिया।

□

सबीहा को घर छोड़े पाँच साल बीत चुके थे। इस दौरान न तो सबीहा कभी अपनी ससुराल वापस लौटी और न ही सईद साहब ने अपनी बीवी-बच्चे से मिलने की कोशिश की। मिलने-जुलनेवाले रिश्तेदारों वगैरह ने भी सबीहा को बहुत समझाने की कोशिश की। लेकिन उसकी अना उसके लिए बहुत मायने रखती थी। उसने अब्बा के बिजनेस में हाथ बँटाना शुरू कर दिया था और अब अकेले ही अपने बच्चे की परवरिश कर रही थी।

दूसरी ओर नरगिस नौकरानी से रानी बन गई थी। उसके ठाठ ही निराले थे। क्लब, पार्टियाँ, खरीददारी, फैशन, बस यही थी उसकी जिंदगी। सईद साहब उसके साथ खुश तो थे, लेकिन सबीहा जिस तरह उनका खयाल रखती थी, उसकी फरमाबरदारी, संजीदगी उन्हें बार-बार याद आ रही थी।

धीरे-धीरे नरगिस की खुदगरजी बढ़ती जा रही थी। रुपए की रेल-पेल से तो वह हवा में उड़ने लगी। सईद साहब अब उससे खिंचे-खिंचे रहने लगे थे। दिलफेंक तो थे ही, अब तो उनके मुँह खून लग चुका था। एक दिन नरगिस को क्लब से आने में देर हो गई। तब तक सैयद साहब का दफ्तर से आने का वक्त हो चुका था। इसलिए वह जल्दी से कमरे में जाकर फ्रेश होना चाहती थी। किचन से पानी का गिलास उठाकर वह कमरे की तरफ दौड़ पड़ी। कमरे का दरवाजा भिड़ा हुआ था। धक्के से दरवाजा खोलकर जैसे ही उसने भीतर का नजारा देखा, वह चकित रह गई। उसके हाथ से गिलास छूटकर जमीन पर चूर-चूर हो गया। गौहर सईद साहब के आगोश में उसके बिस्तर पर थी। उसकी चीख से आया और दीदी वहाँ दौड़ी चली आईं। नरगिस बिलख रही थी, पर गौहर की निगाहें वैसी ही थीं, जैसे पाँच साल पहले ऐसे ही एक लम्हे में उसकी थीं, और आया भी यही कह रही थी, 'आखिर वह मर्द है।'

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
अलीगढ़ विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०८४३९०५८१२७

राम झरोखे बैठ के

# हमारे मोहल्ले के लोग

● गोपाल चतुर्वेदी

हर मोहल्ले में रहनेवालों के अपने वर्गीकरण होते हैं। कुछ की ख्याति झगड़ालू तो कुछ की स्वार्थी की है। झगड़ालू वे हैं, जो मौका ढूँढ़ते रहते हैं बिगड़ने, चीखने-चिल्लाने का। कहीं किसी बच्चे ने खड़े स्कूटर से हाथ लगाकर हाय-हैलो कर लिया तो उसे चपतियाने से वे नहीं चूकते हैं। इस चक्कर में बड़ों के बीच हाथापाई की नौबत भी आती है। कइयों का विचार है कि मोहल्ले के बच्चे कहीं जान-बूझकर उनके धैर्य का परीक्षण तो नहीं कर रहे हैं? कई बार प्रताड़ना का दृश्य मनोरंजक भी हो जाता है। आगे तेज भागते गप्पू, पप्पू और पीछे-पीछे अपना पाजामा सँभालते, उनका पीछा करते, क्रोधाग्नि में सुलगते, बड़बड़ाते वर्माजी। कुछ बुजुर्गों को आपातकाल की नसबंदी याद आती है, जब उन्होंने सड़क पर, सफेद कोट पहने एक डॉक्टर को, अस्पताल से नस कटवाने गए, तड़ी होते अपने शिकार के पीछे दौड़ते देखा था। वक्त की नियति ही बीत जाना है। आपातकाल भी कैसे टिकता? बस उसकी सुधियाँ शेष हैं।

स्वार्थी अकसर वे कहलाते हैं, जो दूध, चाय, चीनी, पैसे वगैरह ले तो जाते हैं वक्त-जरूरत पर, किंतु सौदा इकतरफा है। कोई उनसे माँगे तो 'नही है' का अनपेक्षित उत्तर ही अपेक्षित है। ऐसा नहीं है कि आर्थिक दृष्टि से इनकी हालत पतली है, पर 'मनुष्य एक निकृष्ट स्तर का स्वार्थी प्राणी है' जैसी अवधारणा को सिद्ध करने, कुछ नमूने तो होने ही होने। यों ऐसे इनसानी कैक्टस हर मोहल्ले, क्षेत्र, धंधे, दफ्तर, शहर की शोभा हैं। कुछ की कीर्ति-गाथा, वायरल फीवर की तरह फैलती है, कुछ बेचारे उपेक्षा की गुमनामी में पड़े रहते हैं। मोहल्ले के बाहर उनके नाम तक की चर्चा नहीं है। इसके भी लाभ हैं। यदि उन्होंने मोहल्ला बदला तो वे नए सिरे से अपना भीख का धंधा शुरू कर सकते हैं। ऐसी संभावना नहीं है कि अतीत उनके आड़े आए।

मोहल्ले का एक सामान्य अनुभव है कि कोई भी आदमी दूसरे की प्रशंसा खुले दिल से कभी नहीं करता है। तारीफ का दौर कुछ यों प्रारंभ होता है, ''फलानेजी इनसान तो नेक हैं, बोल-चाल में बहुत अच्छे हैं, पर आपसे क्या छिपाना, मदद किसी की नहीं करते हैं'', या फिर, ''उनकी एक ही कमजोरी। भ्रष्ट तो नहीं हैं पर सुरा-सुंदरी का मोह कुछ अधिक ही है।'' ऐसे अंत के बाद तारीफ करनेवाले ने एक तीर से दो दाँव खेल लिये, तारीफ की तारीफ की और चरित्र-हनन का चरित्र-हनन। सुननेवाला कोई शीर्ष मूर्ख ही होगा, जो प्रशंसा के इस पुल को पार कर प्रशंसित नायक के दर्शन करने का कष्ट करे।

ऐसे भी इक्कीसवीं सदी के बाजार युग में कोई किसी से स्वार्थवश ही मिलता है, वरना सब अपने डिजिटल अकेलेपन में ही खुश हैं। किसी के पास टी.वी. है तो कोई ट्विटर, वाट्सएप या फेसबुक का लतियल है। संचार सुविधा में चिप बाबा का ऐसा योगदान है कि लोग इंग्लैंड-अमेरिका के अपने रिश्तेदारों से तो 'फेस बुक' या 'फेस टाइम' पर संपर्क करने में सफल हैं, पर अपने आसपास रहनेवाले के 'फेस' तक से अनजान हैं।

जो अपेक्षाकृत समृद्ध हैं, वे विदेशों की सैर के शौकीन हैं। उन्हें पता है कि जीवन नश्वर है और घूमने-जानने का दायरा अपार। समय के सही उपयोग से वे दुनिया को जानते हैं, भले ही अपने देश से अनभिज्ञ रहें। देश के अज्ञान से उन्हें आत्म-गौरव का अनुभव भी होता है। वे सेमिनार-गोष्ठी में अपने विदेश-गमन और वहाँ की सभ्यता-संस्कृति के किस्से ऐसे सुनाते हैं, जैसे यह शोध उनकी खुद की हो। वे भूलते हैं कि वे केवल उन देशों की प्रचार-सामग्री रटकर दोहरा रहे हैं।

विदेशों की बात हो और हिंदी-कवि पीछे रह जाएँ, यह संभव नहीं है। जैसे गंदगी में मच्छर-मक्खी हैं, वैसे ही हर मोहल्ले में कवि पाए जाते हैं। मोहल्ले के एक परिचित युवाकवि एक वृद्ध गीतकार की सेवा और देखभाल के लिए उनके साथ विदेश गए थे। वहाँ उन्होंने अपनी हँसोड़ तुकबंदियाँ सुनाईं। तालियाँ बटोरीं। महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों के पते नोट किए और गीतकार का आशीर्वाद पाया। तब से वे हर वर्ष अमेरिका का एक चक्कर लगाते हैं। उन्होंने गीतकार से लंदन के संपर्कों की फेहरिस्त भी पा ली है। अब उनके एक पंथ से दो काज हो जाते हैं। उनकी अतिशय धनलोलुपता की काफी प्रसिद्धि है। अब वे लंदनवालों से भी किराया वसूलते हैं और अमेरिकावालों से भी, जब कि खर्चा एक ही टिकट का पड़ता है। कविताओं पर जब तालियाँ पिटती हैं, तब वे दोहरे हो-होकर आभार प्रगट करते हैं।

उन्हें मुगालता है कि श्रोताओं को कविताएँ पसंद हैं जब कि दर्शक उनकी शक्ल और भाव-भंगिमाओं पर हँसते हैं। उनका परिचय देते संयोजक उनकी बीस विदेश यात्राओं का बखान नहीं करें तो पहले के युवा और वर्तमान के अधेड़ कवि रूठ जाते हैं। एक बार तो वे मंच से

बर्हिगमन भी कर गए थे। संचालक ने उन्हें अंतरराष्ट्रीय कवि नहीं संबोधित किया था। कवि को अपनी विदेश यात्राओं पर ज्यादा गर्व है कि भारतीय होने पर, यह कहना कठिन है। वे सबसे अपनी विदेशों में अपार लोकप्रियता का जिक्र जरूर करते हैं। वृद्ध गीतकार अब उनके स्मृति-पटल से ओझल हैं। बस कभी कभी दारू में बहककर वे इतनी आत्म-स्वीकृति दोस्तों से कर लेते हैं कि विदेश-यात्रा से उनके मंचीय पारिश्रमिक में काफी इजाफा हुआ है। पहले उन्हें चार-पाँच सौ मिलते थे, अब वे दस-बारह हजार से कम में खुद को नहीं बेचते हैं।

मोहल्ले की विविधताओं का अंत यहीं नहीं है। मुल्क का हर मोहल्ला बिना किसी स्वघोषित जनसेवक के अधूरा है। ऐसे स्वैच्छिक कहते हैं कि वह किसी सियासी दल से संबद्ध नहीं हैं, पर चुनाव के समय हर एक को झाँसा देते हैं कि एकमुश्त राशि के बदले वे मोहल्ले के वोट थोक में उन्हें दिलवा देंगे। इनका सेवा-भाव प्रशंसनीय है। हर बीमारी, विवाह, मृत्यु, दुर्घटना के अवसर पर ये उपस्थित रहते हैं। शहर के हर अफसर से इनका पहचान का दावा है। हर नेता के घर इनकी पहुँच है। किसी को पुलिस पकड़े या गुंडे-बदमाश किसी लड़की को छेड़ें, ये थानेदार से लेकर पुलिस कप्तान तक को फोन घुमाने को प्रस्तुत हैं। कभी-कभार मामला गंभीर हो तो ये खुद भी थाने जाने से नहीं कतराते हैं। थानेदार से इनका संवाद रहता है, ''देखिए, जल्दी उचित कारवाई कीजिए वरना हमें कप्तान साहब से शिकायत करनी पड़ेगी।'' कप्तान साहब को ये गृहमंत्री के नाम से हड़काते हैं। अभी तक यह पता नहीं कि आज तक जनसेवक की ऐसी धमकियों का क्या असर हुआ है।

सबको पता है कि बिना खर्चे-पानी के आजकल कुछ मुमकिन नहीं है। जाने जनसेवक को मजबूरी में बिचौलिए की भूमिका भी निभानी पड़ती है। पुलिस हो या अन्य सरकारी विभाग, वहाँ के बड़ों से सौदेबाजी का जिम्मा इन्हीं का है। यहाँ तक कि किस विभाग में नियुक्ति का कितना रेट है, इस तक के विश्वसनीय सूत्र भी यही हैं। लोग कहते हैं कि शर्माजी खुद भी कहीं कार्यरत हैं तो विश्वास नहीं होता है। मोहल्ले के लोगों ने तो इन्हें सुबह से शाम तक यहीं घूमते, बतियाते या पान की दुकान पर दरबार लगाते ही देखा है।

वे ऐसे अपवाद हैं, जो बुजुर्गों से लेकर युवाओं तक के आदर्श हैं। युवाओं से इन्होंने प्रश्नपत्र 'आउट' करने का ठेका लिया है, उसमें भी दिक्कत लगे तो उन्हे नकल करवानेवाले गैंग से भी मिलवाया है। इन कामों में न स्नेह-मोहब्बत का सवाल है, न मुरव्वत का। नियत खर्चापानी तो देना ही पड़ता है। कुछ माँ-बाप महत्त्वाकांक्षी हैं। उनका अरमान है कि उनकी संतान 'टॉप' करे या सूबे में दूसरे-तीसरे नंबर पर तो आए ही आए। जनसेवक यह 'सेवा' भी मुहैया करवाते हैं। बस धनराशि में एक-दो गुना बढ़ोतरी से कोई कैसे इनकार करे?

**जनसेवक ने उन्हें फिर से सफलता का भरोसा दिलाया। एकबारगी उसका मन हुआ कि कुछ अपना मेहनताना भी माँग ले। फिर उसे अपनी सेवा की साख का ध्यान आया। साख बढ़ी तो और आसामी फँसेंगे। उस का 'कट' तो पाँच लाख की राशि में था ही। ज्यादा लालच बुरी बला का सोचते हुए वह वापस लौट गया। लौटते वक्त अपने आप ही मुसकरा रहा था। मोहल्ले में कैसे-कैसे लोग बसते हैं। कितनी गंभीरता से बाबूजी ने 'खून-पसीने' की कमाई का जुमला उछाला था, जबकि पूरी दुनिया इन की भ्रष्टाचारी प्रवृत्ति से परिचित है। फिर उसे अपनी निजी अनुभव याद आया। उसका इतने लोगों से पाला पड़ा है। जो जितना भ्रष्ट है, वह उतना ही ईमानदारी का दम भरता है।**

जनसेवक की ईमानदारी पर किसी भ्रष्ट तक को संदेह नहीं है। जो हाथ में लिया, उस काम को पूरी लगन से पूरा करने का प्रयास उनकी विशेषता है। तभी तो विभिन्न विभागों में नौकरी दिलवाने के खर्चे का जिम्मा इन्हीं को सौंपा जाता है। कभी-कभार तो स्थिति अविश्वसनीय हो जाती है। जैसे एक लिखित परीक्षा में नकल से पास प्रत्याशी नौकरी का इच्छुक था। प्रश्न-पत्र 'ऑब्जेटिव' आनेवाला था। हर सवाल के तीन-चार संभावित उत्तर और उनमें एक को 'टिक' करने का विकल्प, जानकार के लिए आसान है। अज्ञानी के लिए कठिन।

नकलची प्रत्याशी ने जनसेवक से जानना चाहा, ''अंकलजी, यहाँ कोई नहीं है जो हमारी मदद कर दे?'' अंकलजी ने रास्ता सुझाया, ''बस बेटा, एक रास्ता है। तुम कुछ भी मत करना। प्रश्न-पत्र को कोरा छोड़ देना। बाकी सब हो जाएगा। लिखित परीक्षा से लेकर साक्षात्कार और नियुक्ति होने तक सिर्फ पाँच लाख की 'रेट' है। अपने बाबूजी से बात कर लो। वे सहमत हों तो हम कोशिश करें?''

बाबूजी को क्या एतराज होता? वे जानते थे कि नौकरीशुदा बेटे की दहेज के बाजार में कीमत और बढ़ जाएगी। जितना अभी खर्चेंगे, उससे कहीं ज्यादा वसूलेंगे। उन्होंने तत्काल जनसेवक को बुलाया और धनराशि उपलब्ध करवाई, ''भैयाजी! यह खयाल रखिएगा कि कोई चूक न हो। खून-पसीने की कमाई है और हमने पेट काटकर बचाई है।''

जनसेवक ने उन्हें अश्वस्त किया कि रकम मंत्री के खाते में जानी है और इसमें धाँधली का प्रश्न ही नहीं है। सही उत्तर प्रश्न-पत्र बनानेवाली एजेंसी के लोग ही भरेंगे और 'भैया' का चयन शर्तिया होगा। बाबूजी ने फिर जनसेवक को चलते-चलते प्रस्ताव दिया, ''देखिए! कोई भी जरूरत हो तो बताएँ। हमारे भैया की जिंदगी का सवाल है। इसमें हमें कामयाब होना ही होना है।''

जनसेवक ने उन्हें फिर से सफलता का भरोसा दिलाया। एकबारगी उसका मन हुआ कि कुछ अपना मेहनताना भी माँग ले। फिर उसे अपनी सेवा की साख का ध्यान आया। साख बढ़ी तो और आसामी फँसेंगे। उस का 'कट' तो पाँच लाख की राशि में था ही। ज्यादा लालच बुरी बला का सोचते हुए वह वापस लौट गया। लौटते वक्त अपने आप ही मुसकरा रहा था। मोहल्ले में कैसे-कैसे लोग बसते हैं। कितनी गंभीरता से बाबूजी ने 'खून-पसीने' की कमाई का जुमला उछाला था, जबकि पूरी दुनिया इन की भ्रष्टाचारी प्रवृत्ति से परिचित है। फिर उसे अपनी निजी अनुभव याद आया। उसका इतने लोगों से पाला पड़ा है। जो जितना भ्रष्ट है, वह

उतना ही ईमानदारी का दम भरता है।

जनसेवक के व्यक्तित्व का ऐसा जादू है कि वह सबकी प्रशंसा का पात्र है। जिनके काम उसके पैसा लेने के बाद भी नहीं हो पाते हैं, वह उनका पैसे लौटा देता है। पर उन्हें यह बताने से भी नहीं चूकता है कि ''हमने तो सरकारी विभाग में भी सबको बता दिया है कि उनके पैसा लेने से हमें कोई नैतिक आपत्ति नहीं है, बस इतना जरूरी है कि काम हो जाए। नहीं होने की दशा में ईमानदारी का तकाजा है कि पैसा लौटाया जाए।'' जनसेवक का दावा है कि वर्तमान के समाज या सरकारी विभाग में सदाचार का यही इकलौता मानक है। ज्यादातर इस तक का भी अनुपालन नहीं करते हैं।

मोहल्ले में कुछ सरकारी सेवा में भी हैं। जनसेवक की ऊँचे संपर्कों की धाक ऐसी है कि उन्हें भी अपने प्रमोशन और मनचाही पोस्टिंग के लिए उसी का सहारा है। 'ना' जैसा नकारात्मक शब्द उसके शब्दकोश में नहीं है। सबके काम करवाने के प्रति उसका नजरिया सकारात्मक है। कुछ के हो जाते हैं, कुछ के नहीं होते हैं। अधिकतर वह किसी के लिए कुछ भी नहीं करता है, बस मौके-बेमौके ऐसों से मिले तो उन्हें यह सूचना देने के अतिरिक्त कि उसने उचित स्तर पर बात कर ली है और उसे ताज्जुब है कि अभी तक कुछ क्यों नहीं हुआ? 'लगता है फिर याद दिलाना पड़ेगा' की टिप्पणी के साथ वह उन्हें निराशा के अँधेरे से पल भर को उबारकर फूट लेता है।

उसे आभास है कि समृद्ध हो या गरीब, सबकी अपनी-अपनी समस्याएँ हैं। सुखी कोई नहीं है। वह स्वीकार करता है कि उसका और ज्योतिषी का उसूल समान है। दोनों ग्राहकों में झूठी आस जगाने की कमाई खाते हैं। उसका करवाया कोई काम या ज्योतिषी की एक भी भविष्यवाणी सच हो जाए तो लोगों को याद रहता है। दस भविष्य वाणियों का झूठ या काम न होना, किसे याद है? फिर स्वैच्छिक समाजसेवक की ईमानदारी तो ऐसी है कि वह पैसे लेता ही नहीं, लौटा भी देता है। अंततः धार्मिक देश में बात प्रारब्ध पर आ अटकती है, ''उस का क्या दोष है? उसने तो पूरी कोशिश की, अपनी (या किसी और की) किस्मत ही खोटी है।''

अचानक एक दिन सेवक के घर छापा पड़ा और तब से वह गायब हैं। हमारे मोहल्ले में शंकालु भी बसते हैं। उनका मत विभाजित है। कुछ कहते हैं कि ''जमाना ईमानदारों का नहीं है। सी.बी.आई. ने पैसे खाकर एक समर्पित जनसेवक को बदनाम करने की साजिश रची है।'' दूसरी टोल की मान्यता है कि ''जरूर दाल में कुछ काला है। अपने परिवार और जान के अलावा नेता एक तो दूसरों की सेवा नहीं करते हैं तो इसे किस जन-कल्याण के पागल कुत्ते ने काटा था कि यह मोहल्ले में सब की निस्स्वार्थ सेवा करे?'' कुछ ऐसे भी हैं, जिनका विचार है कि इस पूरे केस में सियासी षड्यंत्र है। 'शासक दल' को समाज-सेवक की बढ़ती लोकप्रियता रास न आई। चुनाव में एक-एक सीट बेशकीमती है। वह चुनाव लड़ता तो शर्तिया जीतता। इसीलिए आदेश देकर 'केंद्रीय अन्वेषण कम, अनुपालन अधिक, ब्यूरो को उसके पीछे लगा दिया गया है।''

हमारे मोहल्ले में देश की विविधताओं का प्रतिनिधित्व है, उसकी प्रतिक्रियाओं में भी!

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१

## लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

# रंग-रंग हैं मस्तियाँ

● अशोक 'अंजुम'

कुल कॉलोनी आ गई, भर पिचकारी रंग।
भाभीजी नखरे करें, देवरजी हुड़दंग॥

दारू रंगों में घुली, फैल गया उन्माद।
नफरत के आवेग में, रहा नहीं कुछ याद॥

रंग-रंग प्रस्तावना, रंग-रंग निष्कर्ष।
रंग-रंग हैं मस्तियाँ, रंग-रंग है हर्ष॥

रंग-बिरंगे पर्व की, छटा निराली मित्र।
बिलजी तन-मन में जगे, बदले सभी चरित्र॥

काकाजी सुर छेड़िए, सभी करें इसरार।
अभी असर कम कर रही, ठंडाई की धार॥

इस होली पर धूप ने, फैला दिया वितान।
नए-नए अंदाज से, पंछी भरें उड़ान॥

पहले भी थीं टोलियाँ, अब भी टोलीबाज।
हुईं निरंकुश मस्तियाँ, बदल गया अंदाज॥

बूढ़ी काकी नाचतीं, काका छेड़ें ताल।
पिचके मुँह में भर गया, 'अंजुम' रंग-गुलाल॥

रंग पर्व में रंग की, रंगत आलीशान।
एक रंग में रँग गए, राम और रहमान॥

चढ़ा गए जब जोश में, अद्धा पूरे तीन।
घूरे पर घंटों तलक, सोए मंगलदीन॥

बचपन की वो होलियाँ, बचपन का हुड़दंग।
बड़े हुए कम हो गईं, अंजुम सभी उमंग॥

पहले करती थी सदा, हफ्तों तलक धमाल।
वह होली अब हो गई, इक दिन में बदहाल॥

फाग न गाएँ ईसरी, न ढोलक न चंग।
डीजे पर जमकर मचे, लौंडों का हुड़दंग॥

जींस पहनकर छोरियाँ, डांस करें बिंदास।
लें उफान को देखकर, काका ठंडी साँस॥

घुले रसायन रंग में, होली लगे बवाल।
हफ्तों तक सूजे रहे, गोरी के वो गाल॥

सुपरिचित रचनाकार। अब तक चार हास्य-व्यंग्य-संग्रह, पाँच गजल-संग्रह, 'एक नदी प्यासी' गीत-संग्रह; हास्य-व्यंग्य एवं गजल, कविता, दोहा, लघुकथा, गीत आदि विधाओं पर सत्ताईस पुस्तकें संपादित। 'राष्ट्रभाषा गौरव', 'काव्यश्री', 'साहित्यश्री' सहित दर्जनों पुरस्कार। संप्रति 'प्रयास' पत्रिका के संपादक।

पगली को यूँ भा गया, ठंडाई का स्वाद।
गोरी आई होश में, कई दिनों के बाद॥

रंग-बिरंगी ऋतु हुई, दिशा-दिशा रंगीन।
प्रियतम है परदेस में, गोरी है गमगीन॥

हुई तरबतर भोर से, निकली जाए जान।
इतने देवर देखकर, नई बहू हैरान॥

## चल बेटा, चल

ओ माँ! नीना कह रही थी
अब तुम कुछ काम नहीं करतीं
यहाँ तक कि चार कदम पर लगे
म्युनिसिपैलिटी के नल से
चार बाल्टी पानी भी नहीं भरतीं!

ओ माँ! खाना बनाने तो
वैसे भी तुम्हारे वश का नहीं,
क्योंकि तुम्हारे हाथों में पड़ी ठेक के कारण
रोटियों की डिजाइन बिगड़ जाती है,
तुम्हें बनाने में भले न आती हो
लेकिन हमें खाने में शर्म आती है।

ओ माँ! बच्चों को तुम्हारा
किसी भी काम में हस्तक्षेप
कतई नहीं भाता है,
देखा, इसीलिए कोई
तुम्हारे पास नहीं आता है!

और हाँ, तुम्हारी खाँसी, उफ!
टेलीविजन के सभी कार्यक्रमों का
गुड़-गोबर कर देती है,
जान-बूझकर तभी खाँसती हो
जब कोई अच्छा कार्यक्रम चलता है।
घर के एक-एक सदस्य को
तुम्हारा तब खाँसना बहुत खलता है!

ओ माँ! नीना कह रही थी—
तुम पड़ोसियों से
चुगली करती फिरती हो,
न जाने क्या-क्या भिड़ाती हो,
अपनी धोती में लगी
थेगली दिखा-दिखाकर टसुए बहाती हो।

ओ माँ! शहर में एक आश्रम खुला है,
जहाँ वृद्ध महिलाओं को
बड़ा आराम मिलता है।
चलो तो बतलाओ?
हँ···हँ···नीना कह रही थी।
अगर माँजी बुरा न मानें
तो उन्हें वहीं छोड़ आओ।

यह सुनकर माँ की आँखों में
आँसू भर आए
उसने जुबान खोली
भर्राए गले से बोली—
'शांत हो जा, कुलदीप शांत हो जा!
अब और ज्यादा दिल न जला,
अरे, चल बेटा, चल
तेरे इस घर से तो
वह अनाथालय भला!'

गली-२, चंद्रविहार कॉलोनी
(नगला डालचंद), क्वारसी बाईपास
अलीगढ़-२०२००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९२५८७७९७४४

# अगला जन्म

*मूल* : **दिनकर जोशी**

*अनुवाद* : **शिवचरण मंत्री**

और बात थी एकदम सच। जसवंत राय का दूसरा नाम सफलता था। जहाँ-जहाँ उन्होंने कदम रखा, वहाँ-वहाँ सफलता मानो उनकी प्रतीक्षा कर रही हो। जसवंत राय ज्यों ही हाथ खींचते, सफलता एक आज्ञाकारी बालक की तरह उनकी उँगलियों से लिपटी रहती।

जसवंत राय ने एक ही धंधा न करके अनेक धंधे किए थे। इनके किसी भी धंधे में अपना हिस्सा रखने को अनेक उद्योगपति साझेदार के रूप में कतार में खड़े रहते थे। इसका कारण एकदम स्पष्ट था। सबको यह पूरा विश्वास था कि जसवंत कभी निष्फल होनेवाले न थे। जो भी पूँजी लगाई, वह दुगुनी होने की संभावना था। सामाजिक सेवाओं में जसवंत राय का योगदान कम नहीं था। उन्हें स्वयं को भी यह ध्यान नहीं था कि वे कितनी संस्थाओं के ट्रस्टी हैं। सार्वजनिक चंदा एकत्र करनेवाले चंदा लेने की शुरुआत जसवंत राय से ही करते थे।

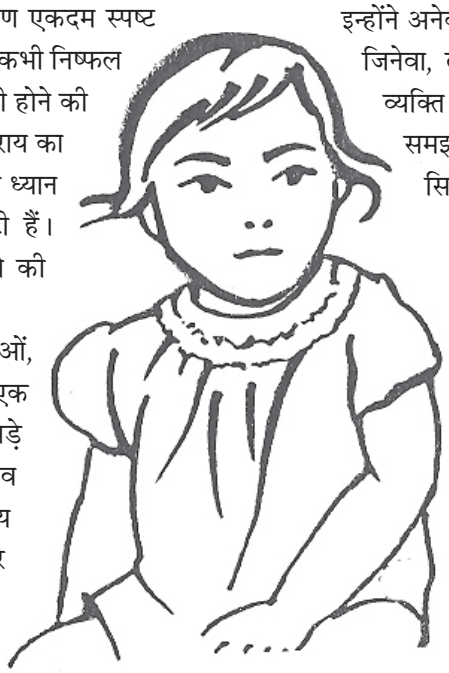

तदुपरांत वे कई सुविख्यात संस्थाओं, जातिगत संस्थाओं और राजकीय पक्ष में भी एक या दूसरे रूप में जुड़े थे। जसवंत राय बड़े समझदार व्यक्ति थे और अपने वर्षों के अनुभव से यह समझ चुके थे कि किसी भी राजकीय पक्ष के साथ सीधी तरह से जुड़ना समझदार व्यक्ति के लिए न्यायसंगत नहीं है। जो भी बेकार या सत्तापक्ष के नेता इनके पास आते थे, उसे चंदा आदि देकर खुश रखते थे, तदुपरांत यदि कोई उन्हें चुनाव लड़ने को कहता तो अतीव विनम्रता से हाथ खड़े कर देते थे। 'अरे भले आदमी, मेरे जैसे अनपढ़ व्यक्ति को अपने पक्ष में लोगे तो आपके पक्ष पर मुसीबतें आएँगी। मैं मात्र चौथी तक पढ़ा हूँ। राजकीय दाँवपेंच, पक्ष-विपक्ष से अनभिज्ञ हूँ। अत: इन कामों से मुझे दूर ही रहने दें।'

जसवंत राय की यह बात सच थी कि वे ज्यादा पढ़े-लिखे नहीं थे। ऑक्सफोर्ड, कैंब्रिज विश्वविद्यालय की बात तो दूर, उनके पास बिहार के किसी फालतू विश्वविद्यालय की बी.ए. की डिग्री भी नहीं थी। तदुपरांत इनसे बात कर चुकने पर आदमी कहता था, 'आदमी बड़ा घाघ है। सारी बात संकेत में समझ जाता है।'

जसवंत राय की सबसे बड़ी मुश्किल समयाभाव की थी। दिन में चौबीस घंटों में अड़तालीस घंटों का काम करना चाहते थे। कई बार मुंबई में चाय-नाश्ता लेकर दोपहर में चेन्नई के किसी उद्योगपति के साथ खाना खाते और रात में कलकत्ता के किसी क्लब में डिनर लेकर व्याख्यान देते और दूसरे दिन समय पर मुंबई के दफ्तर में आ जाते। विगत दशक में इन्होंने अनेक विदेश यात्राएँ कीं। अत: कई बार ऐसा हुआ कि रोम, जिनेवा, लंदन के सिवाय न्यूयॉर्क या एल.ए. (आजकल सफल व्यक्ति लॉस एंजिल नहीं कहते। अत: आप एल.ए. का अर्थ समझ लें) तक यात्रा करते और बंगलौर ऑफिस में बैठे-बैठे सिलीकॉन और वैली के बार में धड़ल्ले से बातें करते थे।

कई बार ऐसा होता कि जसवंत राय के नजदीक के सगे-संबंधी सुमित्रा बहन को उलाहना भी देते। किसी को कुलदेवी के प्रसादी या पितरों या सूरघन की परसादी करनी होती तो वे सुमित्रा बहन को कहते, 'भाईसाब, जसवंत राय से कृपया भेंट करवा देने की कृपा करें।'

और हंसा बहन हँसकर उत्तर देतीं, 'आपके लिए मैं क्या कहूँ? यहाँ तो खुद को ही बात करने के लिए एक सप्ताह पहले अपॉइंटमेंट लेना पड़ता है।'

इस तरह कुलदेवी के पूजा-पाठ आदि में या पितरों के निवेद में सुमित्रा बहन अकेली ही चली जाती थीं। पर इस प्रकार के प्रसाद के व्यय का सारा खर्च जसवंत राय ही उठाया करते थे।

और सच बात तो यह थी कि जाति के लोगों को जसवंत राय की उपस्थिति की अपेक्षा खुले हाथ से पैसा देना अधिक प्रिय लगता था। कुलदेवी का कर चुकाते समय सरकारी करवेरा में से किस प्रकार छूटना था, का आयोजन जसवंत राय स्ट्रिक्ली कॉन्फिडेंशियली कॉन्फ्रेंस रूम में बैठकर चार्टर्ड एकाउंटेंट के साथ बात करते। सुमित्रा बहन की बात सच थी। बड़े लड़के का विवाह किए पाँच साल हो गए, पर अभी बहू की गोद सूनी थी। पर जसवंत राय को इसका खयाल ही नहीं था। पर सुमित्रा बहन की मनौती से या वैसे ही संयोग से छठे बरस बहू की गोद भरी। लोकभाषा

में कहें तो चाँद सा प्यारा बेटा बहू ने पैदा किया। सुमित्रा बहन ने कई बार मनौती पूरी करने को जसवंत राय को कहा, पर जसवंत राय को तो मरने तक के लिए समय नहीं था। जबकि सुमित्रा बहन ने लाख रुपए का यदि हीरा भी खरीदा तो जसवंत राय ने कोई आपत्ति नहीं की थी। तदुपरांत यही हीरा सुमित्रा बहन ने नाक की नथ में जड़ाकर पहना तो भी जसवंत राय ने नहीं देखा। अंतत: थककर सुमित्रा बहन ने ही कहा, 'आपने क्या मेरा हीरा देखा? मैंने गत सप्ताह खरीदा है। बहुत अच्छा है? कैसा चमक रहा है?' उत्तर में जसवंत राय ने जूती के फीते बाँधते हुए कहा, ''हाँ, हाँ, बहुत अच्छा है, कैसा चमक रहा है!''

**जसवंत राय की गाड़ी जब खुले फाटक के पास से गुजरी तो सुमित्रा बहन की नजर खाली स्टेशन पर पड़ी। स्टेशन के एक ओर फाटक बंद करनेवाले के घर की एक कोठरी सी थी। कोठरी के बाहर घने वृक्षों की घनी ठंडी छाया थी और इस शीतल छाया में एक आदमी बैठा था। सुमित्रा बहन ने अनुमान लगाया कि वह व्यक्ति फाटक का चौकीदार ही होगा और खटिया के पास जमीन पर एक सुंदर, पर मैले-कुचैले कपड़ों में आलथी-पालथी लगाकर एक स्त्री बैठी थी। चौकीदार के हाथ में तेल की शीशी थी। उसने दाएँ हाथ की उँगलियों में तेल लेकर जमीन पर बैठी स्त्री के सूखे बालों में रमा रहा था।**

पर अब सुमित्रा ने सामाजिक व्यवस्था का आग्रह किया। सत्यनारायण की कथा से पहले साधु-व्यापारी की तरह जसवंत राय समय को आगे बढ़ाते रहते थे। यथा अगले माह, वर्षाऋतु पूरी हो या फिर यह बड़ा काम सिमट जाए, ऐसे बहाने बनाते रहे।

पर सुमित्रा बहन ने जब यह धमकी दी कि यदि उसकी मनौती पूरी नहीं हुई तो वह नई मनौती माँगेगी। तो जसवंत राय ने अपनी डायरी में नोट किया, 'अमुक दिनांक सुमित्रा की मनौती के लिए कुलदेवी के पास जाना, राजसी भोज लगाना आदि। और वास्तव में ऐसा ही हुआ। बहुत जल्दी परिवार के सभी सदस्य निकट के सगे-संबंधी और जान-पहचानवाले तीन-चार गाड़ियों में भरकर कुल देवी के मंदिर में जा पहुँचे। प्रसाद में केवल लपसी ही चढ़ानी थी। पर मात्र लपसी का ही प्रतिभोज नहीं हो सकता है, इसीलिए तरह-तरह की बानगियाँ बनाने का आदेश पहले ही दे दिया गया था। इस आदेश के अनुसार एक स्टेशन वैगन भरकर सामग्री और नौकर-चाकर पहले ही दिन पहुँच चुके थे। तदुपरांत मुख्य मुद्दे की बात यह थी कि माताजी के भोग रखने के तुरंत पश्चात् जसवंत राय वहाँ से निकल जाएँ, क्योंकि उसी दिन शाम को एक विशेष मीटिंग रखी थी। जसवंत राय को इस मीटिंग में शिरकत करने के बाद फ्लाइट से दिल्ली पहुँचना था। मीटिंग चल रही हो, उसी समय उनका सामान हवाई अड्डे पर पहुँच जाने की भी पूर्व में व्यवस्था हो चुकी थी। उनका विशेष पी.ए. ऑफिस से आवश्यक फाइलें लेकर सीधा ही हवाई अड्डे पर आनेवाला था।

सुमित्रा बहन ने कुलदेवी पर चाँदी का छत्र चढ़ाया, चूँदड़ी रखी, नवजात पोते का सिर माताजी के पारे के सामने रखकर लपसी के नैवेद्य में से एक उँगली भरकर प्रसाद बालक की जीभ पर रखा। यह सब काम जहाँ एक ओर हो रहा था, वहीं दूसरी ओर जसवंत राय मंदिर के पुजारी से यात्रियों के इस धार्मिक स्थान पर आने और क्या-क्या सुधार किए जा सकते हैं, के बारे में विचार-विमर्श कर रहे थे। अन्य मेहमान माँ के मंदिर में सिर झुकाकर सामने के खुले मैदान में घूमने की मौज ले रहे थे। जसवंत राय का आगमन पुजारी को बड़ा भला या मीठा लग रहा था। अत: गरमी में मातेश्वरी को गरमी नहीं सताती हो, पर पुजारी को तो सताती थी। अत: उसने फ्रिज, एयर कंडीशनर से लेकर अन्य आवश्यक सामग्री की लंबी लिस्ट जसवंतराय को सौंप दी।

सारे काम सोचे अनुसार फटाफट पूरे हो गए। अन्य अतिथि पर्यटन का आनंद लेकर शाम को लौटने को थे। पर जसवंत राय काम के बोझ से दबे थे। अत: प्रसाद लेकर तुरंत ही लौट पड़े। सुमित्रा बहन को भी अब मंदिर में रुकने की कोई जरूरत नहीं थी। अत: वे भी पति के साथ ही गाड़ी में बैठ गईं। गरमी थी, तेज धूप थी, लू के सपाटे चल रहे थे, पर ये सब बाहर के बाहर ही रहे। गाड़ी के दरवाजे एयर टाइट थे। अंदर एयर कंडीशनर था, दोपहर के समय जसवंत राय सामान्यत: हलका ही खाना खाते। इसका कारण था, दोपहर को खाना खाते समय अपार काम होते थे। खाना खाते समय में मिलनेवाले प्रतीक्षा तो करते ही हैं। यदि भारी खाना खाया जाए तो सब काम गड़बड़ा जाएँ। हल्का खाना खाने से सब काम पूरे हो जाते हैं। जसवंतराव को ऐसा खाना खाना पसंद नहीं था, जिससे सुस्ती आए।

दोपहर का समय होने से रास्ते पर यातायात का दबाव कम था। गाड़ी सरपट दौड़ रही थी। जसवंत राय को लपसी पसंद थी। अत: माताश्री के प्रसाद की लपसी खूब घी मिलाकर, बड़ा चम्मच भरकर खाई थी। अत: आँखें सहज भारी हो गईं और गाड़ी खड़ी हो गई। रेलवे फाटक आया था। फाटक के पास ही रेलवे का कोई छोटा सा स्टेशन था।

जसवंत राय की गाड़ी जब खुले फाटक के पास से गुजरी तो सुमित्रा बहन की नजर खाली स्टेशन पर पड़ी। स्टेशन के एक ओर फाटक बंद करनेवाले के घर की एक कोठरी सी थी। कोठरी के बाहर घने वृक्षों की घनी ठंडी छाया थी और इस शीतल छाया में एक आदमी बैठा था। सुमित्रा बहन ने अनुमान लगाया कि वह व्यक्ति फाटक का चौकीदार ही होगा और खटिया के पास जमीन पर एक सुंदर, पर मैले-कुचैले कपड़ों में आलथी-पालथी लगाकर एक स्त्री बैठी थी। चौकीदार के हाथ में तेल की शीशी थी। उसने दाएँ हाथ की उँगलियों में तेल लेकर जमीन पर बैठी स्त्री के सूखे बालों में रमा रहा था।

रेलवे फाटक होने से ड्राइवर ने गाड़ी धीमी कर दी थी। सुमित्रा बहन ने देखा कि चौकीदार अपनी पत्नी के सिर में तेल रमा रहा है और उसकी पत्नी पास से निकल रहे जसवंत राय और सुमित्रा बहन को दस-

बीस लाख रुपयों की आयातित एयर कंडीशनर गाड़ी की परवाह किए बिना, आँख मूँदकर मस्तक पर हाथ का स्पर्श और तेल की खुमार की अनुभूति करा रही थी। उसके चेहरे पर एक अनूठी सुख की अनुभूति फैल रही थी। चौंकीदार ने पास से निकल रही गाड़ी को देखा तो अवश्य, पर मानो वह गाड़ी उसे विघ्न डालती सी हो, ऐसा भाव उसके मुखमंडल पर झलक रहा था। तदुपरांत गाड़ी को देखकर भी चौकीदार अपना काम यथावत् करता रहा।

गाड़ी फाटक लाँघकर पुन: मुख्य मार्ग पर आ गई। जसवंत राय की तंद्रा टूटने से आँख खुली। पत्नी अब तक पति को कुछ कह रही थी, परंतु जसवंतराय अपनी तंद्रा टूटने पर भी मौन थे, उनकी जुबान पर मानो ताला लग गया था। तदुपरांत गाड़ी सड़क पर तेजी से दौड़ती रही, सुमित्रा बहन की बोली भी बंद थी, वे मौन बैठी थीं, इतना ही नहीं, उनकी दृष्टि बाहर के दृश्य को सतत देखती रही, यह देखकर जसवंत राय मौन नहीं रह सके। पत्नी का यह व्यवहार उन्हें अस्वाभाविक लगा। अत: कुछ मौन रहकर उन्होंने पूछा, 'क्यों, क्या अब नींद की झपकी लेने की तेरी बारी है? अब हम घर पहुँचने को ही हैं। तुझे घर पर छोड़कर मैं मीटिंग के लिए आगे बढ़ जाऊँगा।'

पति की बात सुनकर भी सुमित्रा मौन ही बैठी रहीं। खिड़की से बाहर यथावत् देखती रही। उन्हें अपनी पत्नी का यह व्यवहार असहज लगा। अत: उन्होंने पुन: पूछा, 'तू किन विचारों में डूबी है? आज तेरी मान्नता पूरी हो गई है। तदुपरांत यदि कोई अन्य मनौती हो तो वह भी बता दे, मैं उसे भी पूर कर दूँगा।'

'अब मान्यता, मनौती, कष्ट कुछ भी नहीं है।' सुमित्रा ने खिड़की में से बाहर नजर फैलाए और कहा, 'पर एक इच्छा होती है, बताऊँ?'

'कह भी दे। तेरी हर इच्छा की पूर्ति करने की भगवान् ने मुझे क्षमता दी है, अवसर दिया है।'

'नहीं, नहीं दी।' सुमित्रा ने एक लंबा साँस लेकर कहा।

'ऐसी कौन सी इच्छा है जो मैं पूरी नहीं कर सकता हूँ?' जसवंत राय ने उत्सुकता से पूछा।

'मेरी इच्छा है, आप अगले जन्म में रेलवे फाटक के चौकीदार बनें और मैं आपकी अर्द्धांगिनी बनूँ।' और तत्पश्चात् चेहरा पति की तरफ करके पूछा, 'कहिए, क्या आप मेरी यह इच्छा पूरी कर सकते हैं।' जसवंत राय बुत से खड़े रह गए।

ग्राम-श्रीनगर
अजमेर (राज.)
दूरभाष : ९४१४९८१९४४

लघुकथा

# प्रवचन और राशिफल

● संजय कुमार

अखबार के लिए प्रतिदिन राशिफल और प्रवचन लिखनेवाले पंडीजी ने टेलीफोन पर संवाद भिजवाया था कि अचानक तबीयत खराब हो जाने की वजह से दो दिन दफ्तर नहीं आ सकेंगे।

न्यूज एडीटर मल्होत्रा साहब ने अपने केबिन में सब एडीटर दीपक को बुलवाया और बोले, 'दीपक दो दिन पंड़ीजी दफ्तर नहीं आ पाएँगे। प्रवचन और राशिफल का जिम्मा तुम्हें ही सँभालना है।' बेचारा दीपक यकायक इस आदेश से घबरा गया। हकलाते हुए बोला, 'सर, पंडीजी का काम मैं कैसे कर सकूँगा।'

तब घाघ पत्रकार की तरह मुसकराते हुए मल्होत्रा साहब ने दीपक को समझाया, 'चिंता की कोई बात नहीं है। दस-बारह साल पहले का फाइल निकलवा लो, उसमें छपे प्रवचन को रिराइट कर दो और राशिफल में हेर-फेर कर कॉपी तैयार कर लो और चीफ सब एडीटर नीलमणिजी को सबमिट कर दो।'

दीपक न्यूज एडीटर के केबिन से बाहर खुशी-खुशी निकला और चपरसी को बारह साल पहले की फाइल लाने का आदेश दे दिया।

### अखबार का लीड

अखबार के दफ्तर में सन्नाटा पसरा था। अखबार के पन्नों की डमी तैयार थी, किंतु कोई लीड नहीं मिल पा रहा था। ऐडटर से लेकर न्यूज एडीटर तक सभी की पेशानी पर बल पड़ रहे थे। तभी टेलीफोन की घंटी बजी। उधर से क्राइम रिपोर्टर की आवाज थी। गांधी मैदान के पास दो समुदायों में जबरदस्त भिड़ंत हो गई थी। चार-पाँच लोग मारे गए थे। दर्जनभर घायल थे। लपकते हुए एडीटर साहब ने रिसीवर पकड़ा और हिदायत दी, 'तत्परता से मौका-ए-वारदात का मुआयना करो, प्रशांत से चार-छह फोटो करवा लो और जल्दी से जल्दी आकर रिपोर्ट फाइल करो।' पूरे दफ्तर में संतोष का माहौल छा गया। कैंटीन से कॉफी का ऑर्डर दिया गया और सारे डेस्क स्टाफ निश्चिंत होकर कॉफी पीने लगे। सबको अब क्राइम रिपोर्टर की टीम का इंतजार था।

रामआशा सदन, नलकूप भवन के पूरब
सर्वोदय नगर, पो. शास्त्री नगर, पटना-८०००२३
दूरभाष : ९९३९३००४३८

# सिंहस्थपुरी के अविस्मरणीय क्षण

● अखिलेश सिंह श्रीवास्तव

भारत लोगों की धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और राष्ट्रीय भावनाओं का संगम है। यहाँ पुन: द्वादश वर्षों की प्रतीक्षा उपरांत स्कंध पुराणोल्लेखित सूक्त की पुनरावृत्ति हो रही है। यथा, *'मेष राशि गते सूर्ये, सिंह राशौ बृहस्पतौ। उज्जयनिया भवेत कुम्भ: सदा मुक्ति प्रदायक:॥* 'क्षिप्रा तट' पर दस महायोगों के संयोग से सिंहस्थ होता है। शास्त्रोक्त है, जब सिंह राशि में बृहस्पति, मेष राशि में सूर्य, तुला राशि में चंद्रमा, स्वाति नक्षत्र, वैशाख माह, शुक्ल पक्ष, पूर्णिमा तिथि, व्यतिपति योग, सोमवार तथा अवंतिका पुरी हो, तभी 'सिंहस्थोदय' की स्थिति बनती है। २२ अप्रैल से २१ मई सिंहस्थ अपनी विशाल धार्मिक भुजाओं को करोड़ों श्रद्धालुओं के आलिंगन के लिए फैला रहा है। यही वह नगरी है, जिसे शिव के सपरिवार निवास के लिए देवताओं ने चुना था।

सिंहस्थ के प्रारंभ दिवस पूर्व, मानो विभावरी आई ही नहीं। रंग-बिरंगी जगमगाहटों से और पूर्णिमा के श्वेत प्रकाश ने उज्जैन की वीथियों से लेकर पुरवासियों के हृदय में नभोमणि के प्रकाश का भान बनाए रखा। यत्र-तत्र चित्रित धार्मिक चित्रचर्या इस आभा मंडल को अलौकिक रूप दे रही है। मध्य चौराहे में निर्मित समुद्र मंथन झाँकी, मानो सिंहस्थ आख्यान का प्रतिनिधित्व कर रही है। नव निर्मित चौड़े, सपाट रास्ते, मृत्युंजय द्वार जैसे सुंदर विशाल प्रवेश द्वार, बड़े फ्लाई ओवर्स, स्नानघाटों में लगी लाइट, फाउंटेंस तथा पानी शुद्धीकरण यंत्र, भव्य चौराहे, फूलों से भरी मार्ग-मध्य क्यारियाँ, बड़ी-बड़ी बिल्डिंग्स, उज्जैन का रूपसी श्रृंगार, किसी महानगर से कम नहीं लग रहा है। मध्य रात्रि में लंबी पद यात्रा से थककर मैंने यहीं इस चौराहे में चाय पी। चाय की चुस्की के साथ शीतल पवन की झप्पियों ने मुझे पुन: स्फूर्तिवान बना दिया। अब यामिनी भ्रमण के लिए मुझमें नई ऊर्जा का संचार हो गया है। थोड़ी ही देर में मैं रामघाट पहुँच गया, जहाँ दस किलोमीटर से कठिनाइयाँ सहते आए हजारों पद-यात्री श्रद्धालुओं का मेला सा लगा है। आश्चर्य! श्रद्धा की यह कैसी निश्छलता है, जिसमें कोई कष्ट, श्रद्धा-भाव के मध्य गति अवरोधक नहीं बने। इनके आनंदित मुख कह रहे हैं, ''यही सच्चा आनंद है।''

भोर अभी शेष है, पवित्र नर्मदा अलिंगित क्षिप्रा जल की लहरीय तान, मंदिरों से आती केसरिया सुगंध, लहराते भगवा ध्वज; मन-कर्ण आह्लादित कर रहे हैं। वनाच्छादित उज्जयिनी, अवंतिका कनक श्रृंगा, कुशस्थली, पद्मावती, कुमुदवती, प्रतिकल्पा अर्थात् सिंहस्थपुरी उज्जैन

विशेष संवाददाता एवं मीडिया सलाहकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में आलेख, रिपोर्ताज आदि निरंतर प्रकाशित, कथ्येतर साहित्य लेखन भी। 'राष्ट्रीय मयूर' पत्रिका का संपादन। संप्रति वोल्गा वेलफेयर ऑर्गेनाइजेशन के अध्यक्ष तथा प्रबंधकीय कृषक।

में सर्वस्व सतरंगी ध्वज श्रृंगार देखने योग्य हैं। अचानक सुबह के इस शांत माहौल में हलचल के साथ दूर से कुछ शोर सुनाई दे रहा है। शनै:-शनै: जिसकी तीव्रता बढ़ रही है। जय महाकाल, हर-हर क्षिप्रे के अभ्रभेदी जयकारों के साथ ये साधुओं की टोलियाँ हैं। यहाँ नागा बाबाओं का विशेष जनाकर्षण है। इनकी जीवन-शैली व कार्यप्रणाली लोगों में खासा कौतूहल पैदा करती है। तीव्र गति से दौड़ते आते ये बाबा एक-दूसरे के कंधों का सहारा लेकर इतना ऊँचा उछल रहे हैं मानो स्प्रिंग बोर्ड लगे हों। भारी-भरकम बाबा तो ऐसे पैर भूमि पर पटक रहे हैं; जैसे पाताल लोक का मार्ग ही बना देंगे। जलामग्न के ये द्वादश वर्षीय प्यासे, सीढ़ियों से ही छलाँग लगा रहे हैं। ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो लंबे अंतराल के पश्चात्, ऊधम मचाते बच्चे अपनी माँ की गोद में घुस रहे हों। यहाँ क्षिप्राजी भी अपने इन भक्त पुत्रों का 'छई छपा छई' बड़े शांत भाव से स्वीकार कर रही हैं।

इन क्षणों को देखने के लिए प्रतीक्षारत सहस्त्रों चक्षुओं को आज शांति मिल रही है, वही शांत तृप्ति-भाव, जो कई दिनों से जागे पथिक को निर्विघ्न निद्रा से मिलता है। क्षिप्रा तट पर प्रशासनिक सुरक्षा व्यवस्था भी चौकस है। आज प्रथम स्नान के प्रकाशित आँकड़े बता रहे हैं; लगभग सवा लाख साधु-संतों ने तथा भक्तों ने अमृत के मेले से धर्म लाभ प्राप्त किया। ऐसे ही उत्साह और हर्ष की स्थिति तब भी थी, जब सिंहस्थ प्रारंभ का प्रथम पट खुला, अर्थात् मान्यता प्राप्त तेरह अखाड़ों की पेशवाई निकली थी। पेशवाई सिंहस्थ की पूर्ण पीठिका है। शिव का श्रृंगार किए साधु-संत शिव के बाराती लग रहे थे। यहाँ उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि श्रीआदिशंकराचार्य द्वारा वैदिक ज्ञान के उत्थान हेतु सभी साधु-संतों को संगठित किया गया था और इसके दस वर्ग स्थापित किए; जैसे— तीर्थ, आश्रम, वन, अरण्य, गिरी, पर्वत, सागर, सरस्वती भारती एवं पुरी। कालांतर में मुगलिया अत्याचार के विरोध में यही संत संगठन, शास्त्र के

साथ-साथ शस्त्रधारी भी हो गए और अखाड़ों के रूप में विकसित हुए।

मेला परिक्षेत्र में श्रद्धालुओं का सैलाब उमड़ रहा है। नागा बाबाओं की हठ साधना सभी के मुख मंडल में आश्चर्य भाव सुनिश्चित कर रही है; जैसे—पेड़ पर वैताल जैसे उल्टे लटकना, लंबी-लंबी जटाओं को बिखराकर बरगद की जड़ों जैसा रूप देना, सिर पर काँटों का तार रखकर अग्नि रखना और अग्नि पर बैठकर साधना करना, एक के ऊपर एक उल्टी-सीधी पालथी लगाना, काँटों की शैया पर लेटना, अपने अंगों में तलवार डालना, झूले पर लटके रहना या सदैव एक हाथ उठाए रहना इत्यादि। सभी बाबा भभूत लपेटे दूसरी दुनिया के निवासी लग रहे हैं। यहाँ पधारे संतों के नाम भी बड़े आधुनिक हैं; जैसे—कंप्यूटर बाबा, पायलट बाबा, गोल्डन बाबा, साइलेंट बाबा, म्यूजिक बाबा आदि। निश्चित ही इन साधु-संतों, बाबाओं का देखना, अविस्मरणीय, अकल्पनीय, अप्रतिम है। ये अद्‌भुत दृश्य चिर स्मृति बिंब अंकित कर रहे हैं। मैं भ्रमण पथ पर एक कोने में खड़ा निर्निमेष, अनिमिष इस सनातनी वातावरण में खोया-सा हूँ।

लगभग तीन हजार बयानबे करोड़ से विश्व के सर्वश्रेष्ठ लोक आयोजन का प्रारंभ अच्छा रहा। समाचार-पत्रों से पता चला कि कहीं अव्यवस्थाओं से अथवा पुलिसिया उद्‌दंडता से कुछ अखाड़ों में नाराजगी रही। मेरा मानना है, इसके लिए 'आचरण कुंभ' की आवश्यकता है। व्यवस्थाओं की सघनता के बीच अव्यवस्थाओं की विरलता भी दिखी। पुलिस जवानों ने बताया, ''बीस-बीस घंटों की ड्यूटी करने के बाद भी शिफ्ट समाप्त ही नहीं होती।'' मूल सुविधाओं के विषय में पालिका के कई बस चालकों ने बताया, ''वेतन तो छोड़िए, भोजन तक समय पर नहीं मिल रहा है।'' व्यवस्थाओं में लगे पर्यवेक्षकों की खामोशी व्यथित मन को स्पष्ट करती दिखी। थाना एवं खोया-पाया विभाग के एक कनिष्ठ पुलिस अधिकारी ने कहा, ''हम तो समाज सेवा कर रहे हैं, हमारे परिवार मेला नहीं देख पा रहे, क्योंकि उच्चादेश है, कोई भी अपने परिवार को विशेष सुविधा से नहीं घुमाएगा। जबकि वरिष्ठ अधिकारियों के सरकारी वाहनों में उनके सगे-संबंधी निस्संकोच भ्रमण कर रहे हैं।'' पेयजल व्यवस्था कई स्थानों पर निर्मित शौचालयों के समीप है, जिससे अस्वच्छता के साथ कीचड़ भी हो रहा है। इस समस्या को यथासमय सुननेवाले अधिकारी मुझे न मिल सके! सभी ऊपर की ओर दायित्व सरकाते दिखे! फिर भी इन सबसे परे, इस तपती धूप में सूर्य प्रदत्त ताप से सिद्ध योद्धा की तरह संघर्ष करते तथा अव्यवस्थाओं के मध्य आनंदित होते, श्रद्धा लिये ये असंख्य श्रद्धालु मेरी दृष्टि में 'निर्धात अवधूत' हैं। यही हैं सात्त्विक आनंद के प्रेरणास्रोत एवं सिंहस्थ के प्राण। सच है, 'यह सुविधाओं से परे विश्वास और आस्था का पर्व है।'

चलिए, पुनः यात्रा की ओर रुख करते हैं। मेला इतने बड़े क्षेत्र में फैला है कि इसे एक दिन में देखना कठिन है। यहाँ भ्रमणानंद के लिए इ-रिक्शा तथा पैदल चलना ही उचित है। मैंने इमरान भाई के इ-रिक्शे का प्राथमिक सहारा लिया। किसानों से किराए पर लिये खेतों में निर्मित संतों के पंडाल वर्तमान टाउनशिप का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। प्रत्येक पंडाल अद्‌भुत जगमगाहट और किसी बड़े मंदिर तथा प्रसिद्ध शैली के देवालय बिबों के प्रतिरूप दिखे। जगह-जगह जलपान की छोटी-बड़ी दुकानें सजी हैं। खेल, खिलौने, धार्मिक पुस्तकें, गंडा, ताबीज, ज्योतिष केंद्र, बच्चों के लिए झूले इत्यादि, विभिन्न मनोरंजक साधन यहाँ दिखे। परंतु मूल में छिपी एक बात प्रमुख है और वह यह कि नवसप्त शृंगारिका हों या एकल जीवन यापनी अ-पति, तुंदल नरपति हों या दरिद्र नारायण; किशोर हों या वृद्ध, सभी पुण्य लाभ की सुअभिलाषा के साथ यहाँ आए; क्षिप्रा स्नान किया। अन्हान का सिंहस्थ में विशेष महत्त्व है, इसलिए इसे 'अन्हान पर्व' अर्थात् 'स्नान पर्व' कहा जाता है।

विशालता, भव्यता, स्वच्छता इन त्रयी का नयनाभिराम स्थल है, 'सिंहस्थपुरी का सिंहस्थ' बड़े-छोटे मंदिर, मलयज चीर, धूप-हवन सुगंध से सारा वातावरण 'स्वर्गादपि गरयसी-सा' प्रतीत हो रहा है। यहाँ पधारे संतों ने इसे 'वैश्विक अध्यात्म का पवित्र दर्शन' माना है और 'जल महात्म' को विशेष स्थान दिया है। स्वामी सत्यमित्रानंद एवं स्वामी अवधेशानंदजी महाराज ने आदिवासियों-वनवासियों के उत्थानार्थ 'वनवासी कुंभ' की अवधारणा अवधारित की। मुझे लगा, संतवाणी में संविधान वाणी का संगम हो गया और इस महाकुंभ में समाजवादी, पंथ निरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक अवधारणा के दर्शन हुए। यहाँ का वातावरण इतना आध्यात्मिक है कि नास्तिक भी आस्तिक हो जाए। सर्वधर्म समानता और सहयोग सिंहस्थ को विश्व मानचित्र में भारत की शान सिद्ध कर रहा है। सहसा विचार कौंधा कि यदि संतों के प्रवचनों में राष्ट्रवादी मुद्‌दे तथा संवैधानिक जागरूकता भी शामिल हो जाती तो और सशक्त परिचय सामने आता। वोल्गा वेलफेयर ऑर्गनाइजेशन संस्थान को यहाँ संवैधानिक जागरूकता के 'कैपहर्ड' प्रोजेक्ट का आयोजन करना चाहिए था। आखिर व्यावहारिक तौर पर यह संविधान प्रदत्त उपबंधों के अंतर्गत ही वह संभव हो पा रहा है। क्षिप्रा स्नान के साथ यहाँ काल भैरव, हरसिद्धि देवी, गढ़कालिका, चिंतामन गणेश, मंगलनाथ, इस्कॉन मंदिर, वेधशाला भरतरी गुफा, नवग्रह मंदिर, कर्क रेखा मंदिर आदि भी दर्शनीय स्थल हैं। उज्जैन से आगे आगरे के पास नलखेड़ा में माँ बगलामुखी का पांडवयुगीन मूल सिद्धपीठ है, इनके दर्शन का सौभाग्य मुझे मेरे बहनोई साहब श्री शैलेंद्र निगमजी के सहयोग से प्राप्त हुआ। ये

सब स्थल भी अवश्य देखने चाहिए।

सिंहस्थ के सुंदर सौभाग्यजनक क्षणों को अचानक आए प्राकृतिक कोप का सामना करना पड़ा। सर्वस्व जल त्राही का दृश्य निर्मित हो गया। बड़े-बड़े पंडाल, दुकानें धराशायी हो गईं। पर दो दिनों में ही जीवन सामान्य सा हो चला है। लोगों का आगमन भी पूर्ववत् हो गया। शासन के साथ संतों की जन सेवाएँ अनुताप पूरित मनों में पुन: विश्वास ज्योति जला रही हैं। मैं कुछ लोगों से मिला। जबलपुर से पधारीं प्रभा श्रीवास्तव, इंदौर की निवेदिता निगम, कल्पना आनंद, रागनी चक्रधर तथा डॉ. ए.बी. चक्रधर, सिवनी से आए दादू निवेंद्र नाथ सिंह, सुमन सिंह, खंडवा के रमेश पटेल, लोचन सिंह, छिद्दू, पूरनलाल, छिंदवाड़ा की किरण श्रीवास्तव, दिल्ली से आए सार्थक निगम, भोपाल के सुरेश ब्यौहार, वीणा ब्यौहार, चेन्नई के एम. पिल्लै, वेल्लूर के समर्थ निगम, सभी ने व्यवस्थाओं की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। पवित्र डुबकी के इस दस महायोगों के पुण्य संगम के अंतिम चरणों में समीपस्थ ग्राम निनौरा में विभिन्न मानव उपयोगी विषयों पर अंतरराष्ट्रीय विचार कुंभ का भव्य आयोजन किया गया। स्थापित लोगों ने अपने-अपने विचार रखे, जिससे सकारात्मक वातावरण का निर्माण हुआ। यदि यहाँ आमजनों को भी कुछ कहने का अवसर मिलता तो यह विचारों की व्यावहारिक डुबकी होती। ऐसा मेरा अभिमत है। इस सम्मेलनोपरांत मेरी तरह संभवत: कई आलेख-लेखकों को प्रतीक्षा थी कि १५ मार्च, २०१५ तक आमंत्रित आलेखों में से चयनित दस उत्कृष्ट आलेखों की जानकारी प्राप्त होगी, पर ऐसा हो न सका!

नारी प्रथम प्रणाम योग्य है। इसकी समतुल्य शक्ति का एक सुंदर उदाहरण यहाँ दिखा, जब पूजा क्षेत्र में नारी प्रतिनिधित्व के लिए योगानंद नारी शक्तिपीठ द्वारा महिलाओं को योग शिक्षा के साथ अध्यात्म का बोध कराया गया। इसी प्रकार संतों की यह घोषणा कि आतंकवाद के विरोध में 'विश्व धर्म संसद्' दिल्ली या हरिद्वार में आयोजित होगी। नमन है ऐसे प्रयासों को। इस अग्निवर्षा जैसे ताप में, श्रद्धालुओं के तदनुसार से सराभूत तनु, श्रद्धा की शीतलता लिये महाकाल की नगरी और क्षिप्रा की पवित्र जलधारा में पुण्य अर्जन की डुबकी को अपना ध्येय बनाए, सब कष्टों को बिसराकर सरकार के इस प्रशंसनीय प्रयास को सफल बना रहे हैं। यह सबसे महत्त्वपूर्ण विषय बिंदु है। इधर सरकार ने भी अंतिम चरण में पृथ्वी पर सम्यक् और संतुलित जीवन के लिए हर समुदाय हेतु उपयोगी सार्वभौम अमृत संदेश जारी किया, जिससे भारतीयता का पल्लव पूरे विश्व में आच्छादित हुआ।

भारत का यह महा आयोजन आत्मशुद्धि के लिए विदेशियों को भी यहाँ खींच लाया और वे सामूहिक रूप से हवन वेदी में यज्ञ करने बैठे। इससे यह स्पष्ट होता है, 'जापर विपदा परत है सो आवत यही देस'। विदाई की वेला आ गई है; पुलकित यामिनी, नव-विहान का आलिंगन कर रही है। सर्वत्र प्रस्थान के लिए हवन-पूजन हो रहे हैं। मौसम के मिजाज में भी आर्द्र शीतलता है, मानो दु:खी होकर कह रहा हो, 'विदा मित्रं सिंहस्थ।' कुछ दिन पूर्व तक जो व्यापारी बंधु आय की कठोर एक पक्षीय कार्यशैली अपनाए थे, वे भी अब शांत चित्त दिख रहे हैं। सुंदर यादों को सँजोए, माँ क्षिप्रा को प्रणाम कर, भारी हृदय से मैं भी वापस जा रहा हूँ।

पुन: २० अप्रैल, २०२८ को नभोमणी की राशि में अनिमिष आचार्य प्रवेश के साथ सिंहस्थ आगमन होगा। उस समय की क्या परिस्थितियाँ होंगी! मिलन-विदा जीवन का शाश्वत सत्य है, वह किस रूप में होगा! कौन कहाँ होगा! सब समय-काल के गर्भ में है। नमन है हर श्रद्धालु को, नमन है हर कार्यकर्ता को, नमन है सिंहस्थ और सिंहस्थ धरा को; और नमन है, मेरे सखा-मेरे राष्ट्र 'भारत' को।

दादू मोहल्ला, संजय वार्ड
सिवनी-४८०६६१ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५१७५८६१

# नीति के दोहे

दोहे

● नरेंद्र दीपक

ज्यों ही मन में प्रेम की उड़ने लगी पतंग।
बिखर गए आकाश में इंद्रधनुष के रंग॥

दीपक ने दोहे लिखे, दोहों की भरमार।
हर दोहा, दुहरा रहा, सिर्फ प्यार ही प्यार॥

कुछ भी कहने के लिए, पहले मन को तोल।
समझ-बूझ ले ठीक से, फिर बंदे तू बोल॥

सब है राम-रहीम का, अपना क्या है यार।
ढाई आखर से गढ़ा छोटा सा संसार॥

दोहों में पैदा करो, ऐसी कुछ तासीर।
जैसी यारो कर गए, फक्कड़ संत-कबीर॥

पागल-पागल मिल गए, पगलों का संसार।
इसको पागल कर गया, उस पागल का प्यार॥

सेलफोन पर साँस ली, उसको क्या अंदाज।
इतना शोर मचाएगी, बिन बोली आवाज॥

बिन बोले बातें करें, कौन चीज है यार?
या तो उसकी दृष्टि है या फिर उसका प्यार॥

आँख बचाकर आँख ने पल भर लिया निहार।
तब से मन के मंच पर, बजने लगा सितार॥

४ पारिका, फेज-२
चूनाभट्ठी, कोलार रोड
भोपाल-४६२०१६ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५०११५१०

# दिनभर का इंतजार

*मूल* : **अर्नेस्ट हेमिंग्वे**

*अनुवाद* : **सुशांत सुप्रिय**

जब वह खिड़कियाँ बंद करने के लिए कमरे में आया तो हम सब बिस्तर पर ही लेटे थे और मैंने देखा कि वह बीमार लग रहा था। वह काँप रहा था, उसका चेहरा सफेद था और वह धीरे-धीरे चल रहा था, जैसे चलने से दर्द होता हो।

''क्या बात है, शैट्ज?''

''मुझे सिरदर्द है।''

''बेहतर होगा, तुम वापस बिस्तर पर चले जाओ।''

''नहीं, मैं ठीक हूँ।''

''तुम बिस्तर पर जाओ। मैं कपड़े पहनकर तुम्हें देखता हूँ।''

पर जब मैं सीढ़ियाँ उतरकर नीचे आया तो वह अलाव के पास कपड़े पहनकर तैयार बैठा था। वह नौ वर्ष का एक बेहद बीमार और दु:खी लड़का लग रहा था।

जब मैंने अपना हाथ उसके माथे पर रखा तो मुझे पता चल गया कि उसे बुखार था।

''तुम बिस्तर पर जाओ'', मैंने कहा, ''तुम बीमार हो।''

''मैं ठीक हूँ।'' उसने कहा।

जब डॉक्टर आया तो उसने लड़के का बुखार जाँचा।

''कितना बुखार है?'' मैंने उससे पूछा।

''एक सौ दो।''

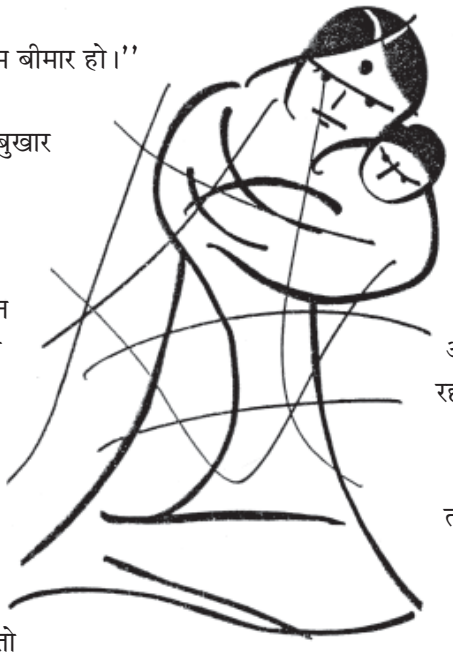

डॉक्टर अलग-अलग रंग के कैप्सूलों में तीन अलग-अलग तरह की दवाइयाँ और उन्हें देने के बारे में हिदायतें भी दे गया। एक दवा बुखार उतारने के लिए थी, दूसरी रेचक थी और तीसरी अम्लीय स्थिति पर काबू पाने के लिए थी। इंफ्लुएंजा के कीटाणु केवल अम्लीय स्थिति में ही जीवित रह सकते हैं, उसने बताया। लगता था, उसे इंफ्लुएंजा के बारे में सबकुछ मालूम है। उसने कहा कि यदि बुखार एक सौ चार डिग्री से ऊपर नहीं गया तो डरने की कोई बात नहीं।

यह फ्लू का एक हल्का हमला है और यदि आप निमोनिया से बचकर रहें तो खतरे की कोई बात नहीं है।

कमरे में वापस जाकर मैंने लड़के का बुखार लिखा और अलग-अलग तरह के कैप्सूलों को देने का समय नोट किया।

''क्या तुम चाहते हो कि मैं तुम्हें कुछ पढ़कर सुनाऊँ?''

''ठीक है। अगर आप पढ़ना चाहते हैं तो।'' लड़के ने कहा।

उसका चेहरा बेहद सफेद था और उसकी आँखों के नीचे काले घेरे थे। वह बिस्तर पर चुपचाप लेटा था और जो कुछ हो रहा था, उससे बेहद निर्लिप्त लग रहा था।

मैं उसे हार्वर्ड पाइल की 'समुद्री डाकुओं की किताब' जोर से पढ़कर सुनाने लगा, लेकिन मैं देख सकता था कि मैं जो पढ़ रहा था, उसमें वह दिलचस्पी नहीं ले रहा था।

''अब कैसा महसूस कर रहे हो, शैट्ज?'' मैंने उससे पूछा।

''अब तक ठीक वैसा ही।'' उसने कहा।

मैं बिस्तर के एक कोने पर बैठकर पढ़ता रहा और उसे दूसरा कैप्सूल देने के समय का इंतजार करता रहा। उसका सो जाना स्वाभाविक होता, लेकिन जब मैंने निगाह ऊपर उठाई तो वह बड़े अजीब ढंग से बिस्तर के पैताने को घूर रहा था।

''तुम सोने की कोशिश क्यों नहीं करते? मैं तुम्हें दवा देने के लिए उठा दूँगा।''

''मुझे जगे रहना अधिक पसंद है।''

थोड़ी देर बाद उसने मुझसे कहा, ''पापा, अगर आपको परेशानी हो रही है, तो आपका यहाँ मेरे पास रहना जरूरी नहीं।''

''मुझे तो कोई परेशानी नहीं हो रही।''

''नहीं, मेरा मतलब है, अगर आपको परेशानी हो तो आप यहाँ मत रुकिए।''

मैंने सोचा, शायद बुखार के कारण वह थोड़ा व्याकुल हो गया है और ग्यारह बजे उसे निर्दिष्ट कैप्सूल देने के बाद मैं थोड़ी देर के लिए बाहर चला गया।

वह एक चमकीला, ठंडा दिन था और जमीन बर्फ से ढकी हुई थी। बर्फ जम गई थी, जिससे लगता था कि बिना पत्तोंवाले सभी पेड़ों, झाड़ियों, सारी घास और खाली जमीन को बर्फ से रोशन कर दिया

गया हो। मैंने आइरिश नस्ल के छोटे कुत्ते को सड़क पर कुछ दूर तक सैर करा लाने के लिए अपने साथ ले लिया। मैं उसे एक जमी हुई सँकरी खाड़ी के बगल से ले गया, पर काँच जैसी सतह पर खड़ा होना या चलना मुश्किल था। वह लाल कुत्ता बार-बार फिसलता और गिर जाता था तथा मैं भी दो बार जोर से गिरा। एक बार तो मेरी बंदूक भी हाथ से छूटकर गिर गई और बर्फ पर फिसलते हुए दूर तक चली गई।

हमने मिट्टी के एक ऊँचे टीले पर लटके झाड़-झंखाड़ में छिपे बटेरों के एक झुंड को उत्तेजित करके उड़ा दिया और जब वे टीले के ऊपर से उस पार ओझल हो रहे थे, मैंने उनमें से दो को मार गिराया। झुंड में से कुछ बटेरें पेड़ों पर जा बैठीं, पर उनमें से ज्यादातर झाड़-झंखाड़ के ढेर में तितर-बितर हो गईं और झाड़-झंखाड़ के बर्फ से लदे टीलों पर कई बार उछलना जरूरी हो गया, तब जाकर वे उड़ीं। जब आप बर्फीले, लचीले झाड़-झंखाड़ पर अस्थिर ढंग से संतुलन बनाए हों, तब उन्हें निशाना साधकर गोली मारना मुश्किल रहता है और मैंने दो बटेरें मारीं, पाँच का निशाना चूका और घर के इतने पास एक झुंड को पाने पर प्रसन्न होकर वापस लौट चला। मैं इसलिए भी खुश था कि किसी और दिन शिकार करने के लिए इतनी सारी बटेरें बची रह गई थीं।

घर पहुँचने पर लोगों ने बताया कि लड़के ने किसी को भी कमरे में आने से मना कर दिया था।

''तुम लोग अंदर नहीं आ सकते'', उसने सबसे कहा, ''तुम्हें इस बीमारी से दूर रहना चाहिए, जो मुझे हो गई है।''

मैं उसके पास भीतर गया और उसे ठीक उसी अवस्था में पाया, जिसमें उसे छोड़कर गया था। उसका चेहरा सफेद था, पर उसके गालों का ऊपरी हिस्सा बुखार के कारण लाल हो गया था। वह सुबह की तरह बिना हिले-डुले बिस्तर के पैताने को घूर रहा था। मैंने उसका बुखार जाँचा।

''कितना है?''

''सौ के आस-पास।'' मैंने कहा। बुखार एक सौ दो से थोड़ा ज्यादा था।

''बुखार एक सौ दो था।'' उसने कहा।

''यह किसने बताया?''

''डॉक्टर ने।''

''तुम्हारा बुखार ठीक-ठाक है।'' मैंने कहा, ''चिंतित होने की कोई बात नहीं।''

''मैं चिंता नहीं करता।'' उसने कहा, ''लेकिन मैं खुद को सोचने से नहीं रोक सकता।''

''सोचो मत,'' मैंने कहा, ''तुम केवल आराम करो।''

''मैं तो आराम ही कर रहा हूँ,'' उसने कहा और ठीक सामने देखने लगा। साफ लग रहा था कि वह किसी चीज के बारे में सोच-सोचकर बेहद चिंतित हो रहा था।

''यह दवा पानी के साथ ले लो।''

''क्या आप सोचते हैं कि इससे कोई फायदा होगा?''

''हाँ, जरूर होगा।''

मैं बैठ गया और समुद्री डाकुओंवाली किताब खोलकर पढ़ने लगा, लेकिन मैं देख सकता था कि उसका ध्यान कहीं और था, इसलिए मैंने किताब बंद कर दी।

''आप क्या सोचते हैं, मैं किस समय मरनेवाला हूँ?''

''क्या?''

''मेरे मरने में अभी और कितनी देर लगेगी?''

''तुम कोई मरने-वरने नहीं जा रहे हो। ऐसी बहकी-बहकी बातें क्यों कर रहे हो?''

''हाँ, मैं मरने जा रहा हूँ। मैंने डॉक्टर को एक सौ दो कहते हुए सुना।''

''लोग एक सौ दो बुखार में नहीं मरते। बेवकूफी भरी बात मत करो।''

''मैं जानता हूँ, वे मरते हैं। फ्रांस में लड़कों ने मुझे स्कूल में बताया था कि तुम चौवालीस डिग्री बुखार होने पर जीवित नहीं बच सकते। मुझे तो एक सौ दो बुखार है।''

तो वह सुबह नौ बजे से लेकर दिन भर मरने का इंतजार करता रहा था।

''ओ मेरे भोले शैट्ज,'' मैंने कहा, ''मेरे प्यारे बच्चे! यह मीलों और किलोमीटरों की तरह है। तुम कोई मरने-वरने नहीं जा रहे। वह एक दूसरा थर्मामीटर है। उस थर्मामीटर में सैंतीस सामान्य होता है, जबकि इस थर्मामीटर में अट्ठानबे सामान्य होता है।''

''क्या आपको पक्का पता है?''

''बेशक,'' मैंने कहा, ''यह मीलों और किलोमीटरों की तरह है। जैसे कि जब हम कार से सत्तर मील की यात्रा करते हैं तो हम कितने किलोमीटर की यात्रा करते हैं, समझे?''

''ओह!'' उसने कहा।

लेकिन बिस्तर के पैताने पर टिकी हुई उसकी निगाह धीरे-धीरे शिथिल हुई। अपने ऊपर उसकी पकड़ भी अंत में ढीली हो गई और अगले दिन वह बेहद सुस्त और धीमा था और वह बड़ी आसानी से उन छोटी-छोटी चीजों पर रोया, जिनका कोई महत्त्व नहीं था।

**''ओ मेरे भोले शैट्ज,'' मैंने कहा, ''मेरे प्यारे बच्चे! यह मीलों और किलोमीटरों की तरह है। तुम कोई मरने-वरने नहीं जा रहे। वह एक दूसरा थर्मामीटर है। उस थर्मामीटर में सैंतीस सामान्य होता है, जबकि इस थर्मामीटर में अट्ठानबे सामान्य होता है।'' ''क्या आपको पक्का पता है?'' ''बेशक,'' मैंने कहा, ''यह मीलों और किलोमीटरों की तरह है। जैसे कि जब हम कार से सत्तर मील की यात्रा करते हैं तो हम कितने किलोमीटर की यात्रा करते हैं, समझे?''**

ए-५००१, गौड़ ग्रीन सिटी,
वैभव खंड, इंदिरापुरम्,
गाजियाबाद-२०१०१० (उ.प्र.)
दूरभाष : ८५१२०७००८६

यात्रा-संस्मरण



# लला, फिर आइयो खेलन होरी

● प्रेमपाल शर्मा



सुपरिचित लेखक-संपादक। बुलंदशहर (उ.प्र.) के मीरपुर-जरारा गाँव में जन्म। देसी चिकित्सा लेखन में विशेष दक्षता। 'जीवनोपयोगी जड़ी-बूटियाँ', 'स्वास्थ्य के रखवाले, शाक-सब्जी-मसाले', 'सचित्र जीवनोपयोगी पेड़-पौधे', 'घर का डॉक्टर', 'स्वस्थ कैसे रहें?' तथा 'स्वदेशी चिकित्सा सार' कृतियाँ चर्चित रहीं। इसके अलावा पत्र-पत्रिकाओं में विविध लेख प्रकाशित। श्रीनाथद्वारा (राज.) की सुप्रसिद्ध संस्था 'साहित्य मंडल' द्वारा 'संपादक-रत्न' की मानद उपाधि। संप्रति 'सवेरा न्यूज' (साप्ताहिक) का संपादन एवं आयुर्वेद पर स्वतंत्र लेखन।

होली-दहन की पूर्व-संध्या पर, यानी ४ मार्च, २०१५ को ऐसा संयोग बना कि वृंदावन धाम के दर्शनों का पुण्य लाभ मिला। हमारे मित्र भाई जीत शर्मा प्रतिवर्ष बिहारीजी के साथ होली खेलने के लिए वृंदावन जाया करते हैं। भगवत्-प्रेमी होने के कारण उन्हें अकेले जाना सुहाता नहीं है, सो एक दिन में ही एक बड़ा यात्री-दल तैयार हो गया। इस दस सदस्यी यात्री दल में मेरे मित्र आनंद शर्मा, भाई जीत शर्मा, बिजेंद्र सिंह, भाई महेशजी तो एक गाड़ी में तथा भाई धर्मेंद्र एवं उनके चार साथी, जिनमें लगभग सभी तरुण हैं, और सब-के-सब पहली बार वृंदावन यात्रा पर आए हैं। बिजेंद्र भाई युवा हैं, कुकिंग के मास्टर हैं, बड़े-बड़े शादी-समारोहों का काम उठाते हैं। धर्मेंद्र भाई महेश भाई के अनुज हैं, अपना गैराज है, बहुत दक्ष मेकैनिक हैं और बाकी के तरुण उनके साथ गैराज में काम करनेवाले प्रशिक्षु हैं। ये सब धर्मेंद्र भाई की गाड़ी में सवार हैं। चार मार्च के भोरे-भोर पाँच बजे हम सब वृंदावन की तीर्थयात्रा पर निकल पड़े। इतने सवेरे दिल्ली की सड़कों पर ज्यादा ट्रैफिक नहीं है। दो दिन पूर्व ही देशभर में भारी वर्षा और कहीं-कहीं ओलावृष्टि भी हुई है, सो मौसम खासा ठंडा हो गया है। सड़कों पर दृश्यता तो पर्याप्त है, लेकिन सड़क के दोनों ओर दूर-दूर हल्की धुंध दिखाई पड़ रही है। पेड़-पौधे उनींदे, अलसाए से खड़े हैं, पक्षी अभी जागे नहीं हैं, सो वातावरण में खासी नीरवता छाई हुई है।

अब हम लोग पलवल के आसपास हैं और पूरब दिशा में पौ फट रही है, लाली छा रही है। बालरवि ने स्वर्ण-रजाई से अपना मुख बाहर निकाला भर है। दूर-दूर तक फैले खेतों के बीच और पेड़ों के पीछे ताँबई-लालवर्णी बालरवि कितना मनोहर लग रहा है! सभी का शिशु रूप मनोहारी होता है। पल-छिन-पल गोले का आकार छोटा होकर स्वर्ण-आभा बढ़ती जा रही है। सूर्यदेव रथारूढ़ हो जगत् के कल्याण के लिए अपनी दैनिक यात्रा पर निकल पड़े हैं। अहा! अब तो इनसे आँखें मिलाना भी कठिन हो रहा है, आँखें चुँधिया रही हैं। खैर, सूर्यदेव के साथ हम भी अपनी यात्रा पर आगे बढ़ रहे हैं, बढ़े चले जा रहे हैं। लगभग साढ़े आठ बजे हम लोग छठीकरा मोड़ आ पहुँचे और मथुरा राजमार्ग छोड़ बाईं ओर वृंदावन मार्ग पर आगे बढ़े। यहाँ से मात्र एक कि.मी. की दूरी पर गाड़ी की दिशा में दाईं ओर माँ वैष्णो देवी का धाम है। सड़क के बाईं ओर मंदिर के सामने के विशाल मैदान में गाड़ियाँ खड़ी कर दी गईं। लगभग सभी मंदिरों में जूता-चप्पल, चमड़े की चीजें बेल्ट, पर्स तथा बीड़ी, सिगरेट के साथ मोबाइल ले जाना मना है। सो ये सब चीजें गाड़ी में छोड़ दी गईं। मित्र आनंद शर्मा मंदिर जाने के अनिच्छुक हैं, क्योंकि पूर्व यात्रा में वे यहाँ के दर्शन कर चुके हैं। हम सब इकट्ठे ही मंदिर के प्रवेश-द्वार से अंदर आ गए हैं। यहाँ द्वि-स्तरीय जाँच व्यवस्था है। पहले तो मुख्य प्रवेश-द्वार पर घुसते ही और आगे मुख्य मंदिर में प्रवेश करने से पूर्व। यहाँ बाईं ओर अमानती घर है, यानी अपना सामान यहाँ रख सकते हैं। दाईं ओर पेयजल की प्याऊ है, इसके साथ ही कई खिड़कियाँ हैं, जहाँ से यात्रा-परची लेना अनिवार्य है, जो नि:शुल्क मिलती है—बिल्कुल जम्मू-कटरा के वैष्णो-यात्रा की तर्ज पर। हम नौ जन हैं, सभी की एक परची ले ली गई।

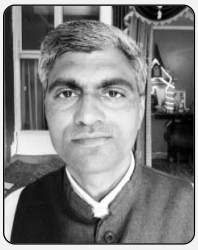

परची लेकर ठीक ८:४८ पर हम लोग मंदिर की ओर बढ़े। यहाँ पर हमारी पुन: गहन जाँच-पड़ताल की गई। पुरुष तथा महिला यात्रियों की जाँच हेतु अलग-अलग सिक्यूरिटी गार्ड तैनात हैं। मंदिर परिसर में फर्श इतना ठंडा है कि नंगे पैर रखने को मन नहीं कर रहा है, सो पंजों के बल चल रहे हैं। वास्तु की दृष्टि से मंदिर का डिजाइन ऐसा है कि इसे इनडोर और आउटडोर, दोनों रखा गया है। कुछ सीढ़ियाँ चढ़कर हम नीचे उतरे, सीढ़ियाँ उतरते ही बाईं ओर गर्भगृह में माँ वैष्णो का मंदिर है। गर्भगृह के मंदिर के प्रवेश-द्वार के साथ बाईं ओर यमुनाजी सदेह विराजमान हैं और निकास-द्वार पर गंगाजी। अंदर कुछ सीढ़ियाँ उतरकर विशाल गोलाकार हॉल है, इसके बीचोबीच गोल चबूतरे पर सिंह पर सवार माँ वैष्णो विराजमान हैं। माँ की मूर्ति के ठीक सामने उनके पद-चिह्न अंकित हैं तथा बाईं ओर अखंड ज्योति प्रज्वलित है। हम सबने माँ को दंडवत् प्रणाम किया। पुजारीजी ने सभी के मस्तक पर सिंदूर का तिलक लगाया। गोलाई में दीवारों पर नाना संत-महात्माओं तथा कृष्णलीला के सुंदर चित्र अंकित हैं। मोटे और मध्यम आकार के विशाल खंभों के ऊपर कृत्रिम पहाड़ बनाया गया है, जो देखने

में बिल्कुल प्राकृतिक लगता है। गर्भगृह के ठीक सामने खुला मैदान यानी जागरण-स्थल है, जहाँ पर चबूतरानुमा मंच बनाया गया है। इसी के बाईं ओर विशाल आम्रवृक्ष है, जिसका तना छोटे से चबूतरे पर लोहे की जालीदार रेलिंग से सुरक्षित कर दिया गया है। श्रद्धालुओं द्वारा यहाँ मनौती के लिए सैकड़ों चुनरी बाँध दी गई हैं। भारतीय लोगों की इच्छाओं का अंत नहीं, सब देवी-देवताओं के यहाँ उनकी अर्जियाँ हमेशा पेंडिंग रहती हैं। अस्तु।

यहाँ बनाई गई गुफा भी दर्शनार्थियों के आकर्षण का केंद्र है, सो हम सब ने बाईं ओर स्थित गुफा के द्वार में प्रवेश किया। गुफा को रंग-बिरंगी रोशनी के द्वारा कौतूहल पैदा करनेवाली तथा जीवंत बनाया गया है, कलाकारी ऐसी कि यह एक प्राकृतिक गुफा ही मालूम पड़ती है। गुफा के अंदर सबसे पहले विनायकजी के साथ रिद्धि-सिद्धि की बड़ी मनमोहक झाँकी है। इसके बाद कुछ-कुछ अंतराल पर माँ शेरोंवाली के नौ रूपों—वैष्णो माता, शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चंद्रघंटा, कूष्मांडा, स्कंदमाता, महागौरी, सिद्धिदात्री के साथ-साथ भैरवजी और उनके कुत्ते की इतनी सुंदर-सजीव झाँकियाँ हैं, लगता है कि अभी बोल पड़ेंगी। गुफा के निकास-द्वार पर गौ-चारण लीला की विशाल झाँकी मन मोह लेती है। अच्छा, आधी गुफा पार करने के बाद रास्ता ऊपर की ओर खुले आसमान के नीचे खुलता है, यहीं पर पहाड़नुमा धरातल पर सिंह पर सवार माँ वैष्णो तथा विनयावनत, गदा को जमीन पर टिकाए हनुमान की विशाल प्रतिमाएँ स्थापित हैं, जो इस मंदिर की लोकप्रियता का कारण हैं। ये विशाल मूर्तियाँ दूर से ही दिखाई पड़ने लगती हैं और सामने की सड़क से गुजरनेवाले हर यात्री का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती हैं। शिल्पियों ने इन्हें इतनी खूबसूरती से बनाया है कि इनमें बस जान डालना बाकी रह गया है। यहाँ मूर्तियों के चरणों में खड़े होने पर व्यक्ति बौना दिखाई पड़ता है। गुफा के ऊपर जो खुला स्थान है, इसमें रंग-बिरंगे फूलों की क्यारियाँ इस तरतीब से बनी हैं कि यह पूरा क्षेत्र रंग-बिरंगा कालीन ही मालूम पड़ता है।

*माँ वैष्णो धाम, वृंदावन*

इस मंदिर का निर्माण जे.के. ट्रस्ट द्वारा करवाया गया है। इसका उद्घाटन २२ मई, २०१० संवत् २०६७, वैशाख शुक्ल नवमी को जाने-माने विद्वान् डॉ. कर्णसिंह के कर-कमलों से संपन्न हुआ था। हम लोग खुले प्रांगण में हैं और यह देखकर चकित हैं कि पूरे मंदिर परिसर में फर्श इस कलाकारी के साथ बनाया गया है कि इसके काठ से बने होने का भ्रम होता है, लेकिन है एकदम कंक्रीट-सीमेंट का। यहाँ ठहरने की भी व्यवस्था है। अब हम माता को पुनः दंडवत् प्रणाम कर निकास-द्वार की ओर आ रहे हैं। मुख्यद्वार के बाहर कुछ तीर्थयात्री माता वैष्णो की विशाल प्रतिमा को पार्श्व में लेकर फोटो खिंचवा रहे हैं। जैसे ही कोई यात्री या यात्री-दल मंदिर की ओर आता है, यहाँ पर खड़े चार-छह फोटोग्राफर फोटो खिंचवाने के लिए उनसे बड़ी मनुहार करते हैं। हम लोगों ने सड़क पार की और अपने-अपने वाहन में सवार हो आगे चल पड़े।

अब हम वृंदावन की ओर बढ़ते हुए थोड़ा आगे इसी सड़क के बाईं ओर निर्माणाधीन वृंदावन चंद्रोदय मंदिर देखने आए हैं। मंदिर के परिसर में ही गाड़ी पार्किंग की सुविधा उपलब्ध है। विशाल फाटक पार कर गाड़ियाँ अंदर खड़ी कर दी गईं। अभी भी मौसम ठंडा है, सभी ने स्वेटर आदि पहन रखे हैं। चूँकि आज हम लोग प्रातः चार बजे उठकर पाँच चल पड़े थे, सो पेट साफ न होने के कारण दबाव बन रहा है। मंदिर परिसर में शौचालय सुविधा है। सो हम तीन जन शौचालय जाकर निबटे। हाथ धोने के लिए यहाँ एक मग में खुला सैंपू रखा है, इसी से अच्छी तरह हाथ साफ किए, मुँह-हाथ धोए। देखते क्या हैं कि मित्र आनंद शर्मा तो मंदिर दर्शन के लिए आगे निकल गए हैं और बाकी लोग हरे-भरे लॉन में बैठे खिचड़ी का नाश्ता उड़ा रहे हैं। हम तीनों ने भी गरमागरम खिचड़ी का नाश्ता किया। खिचड़ी-प्रसाद यहाँ प्रातः से ही तैयार हो जाता है और निःशुल्क वितरित होता है। देव-दर्शन से पहले आपको यहाँ बन रहे दुनिया के सबसे ऊँचे मंदिर के बारे में बताए देते हैं।

पूज्य प्रभुपाद स्वामी की इच्छानुसार इस्कॉन द्वारा यहाँ दुनिया के सबसे ऊँचे और विशाल ७० मंजिला 'वृंदावन चंद्रोदय मंदिर' का निर्माण कार्य प्रगति पर है। इसकी ऊँचाई २१३ मीटर यानी ७०० फीट होगी। इसका विस्तार अर्थात् कुल क्षेत्रफल ५,४०,००० वर्ग फीट है। इसके निर्माण पर ३०० करोड़ रुपए खर्च होने का अनुमान है। मंदिर परिसर के २६ एकड़ क्षेत्र में पवित्र बारह वन विकसित किए जाएँगे, इनको 'द्वादश कानन' नाम दिया गया है। इनमें फलदार, शोभादायी, सुगंधि देनेवाले, सदाबहार वृक्षों के साथ-साथ, झरने, जल से भरी सुंदर झील विकसित की जाएगी, इसमें खिलनेवाले कमल और कुमुदिनी पुष्प इसकी सुंदरता में चार चाँद लगाएँगे। वैसे तो मंदिर ६२ एकड़ में फैला है, परंतु बारह एकड़ क्षेत्र में पार्किंग की व्यवस्था की जाएगी। इस मंदिर की चोटी यानी आखिरी तल पर एक उच्च शक्ति का टेलीस्कोप लगाए जाने की योजना है। इसके माध्यम से आनेवाले श्रद्धालु पूरे वृंदावन धाम का नजारा देख सकेंगे। इस विश्वविख्यात मंदिर का शिलान्यास १६ नवंबर, २०१४ को राष्ट्रपति मान. प्रणब मुखर्जी द्वारा किया गया। इस भव्य मंदिर के वर्ष २०१९ तक बनकर तैयार हो जाने का अनुमान है।

खिचड़ी का नाश्ता कर हम लोग अब बाईं ओर स्थित 'राधा-माधव' मंदिर में दर्शनार्थ आगे बढ़े। यहाँ का वातावरण सुगंधित तथा अलौकिक आभा से देदीप्यमान है। कुछ सीढ़ियाँ चढ़कर हम लोग ऊपर पहुँचे। यहाँ मैं राधा-कृष्ण की युगल मनोहर झाँकी अपलक देखता रह जाता हूँ। कुछ देर निहारकर दंडवत् प्रणाम करता हूँ। फिर हम सब कुछ देर यहाँ बैठे। अपूर्व शांति और अलौकिक आनंद की अनुभूति हो रही है। आखिर एक-एक कर हम सब नीचे उतर आए। यहाँ हमारे बाईं ओर इस्कॉन द्वारा संचालित

'अक्षयपात्र रसोई' के द्वारा दस मील के दायरे में आनेवाले सभी विद्यालयों में मिड डे मील यानी दोपहर का खाना उपलब्ध कराया जा रहा है। यहाँ खाना बनाने की आधुनिक मशीनें लगी हैं। यहाँ के पुजारीजी ने अक्षयपात्र योजना के बारे में बताया कि एक बार भक्ति वेदांत स्वामी ने अपनी यात्रा के दौरान कलकत्ता के पास मायापुर गाँव में बड़ा ही हृदयद्रावक दृश्य देखा। भूखे बच्चों का एक झुंड गली के आवारा कुत्तों के बीच जूठन पाने के लिए जद्दोजेहद कर रहा था। इस दृश्य ने स्वामीजी के हृदय को झकझोर दिया। उसी क्षण उसी दिन उन्होंने प्रण किया कि हमारे (इस्कॉन) सेंटरों के दस-दस मील के दायरे में कोई बच्चा भूखा नहीं रहेगा, और इसी प्रण के साथ 'अक्षय पात्र फाउंडेशन' का जन्म हुआ। पहले-पहल जून २००० में अक्षय पात्र फाउंडेशन ने 'मिड डे मील' का शुभारंभ कर बंगलौर के पाँच सरकारी विद्यालयों के १५०० बच्चों को दोपहर का भोजन देना शुरू किया और आज पूरे देश में इस्कॉन द्वारा लाखों बच्चों को भोजन उपलब्ध कराया जा रहा है।

*निर्माणाधीन चंद्रोदय मंदिर, वृंदावन*

वर्तमान में तो यह दुनिया का सबसे विशाल 'मिड डे मील' कार्यक्रम है, जो भारत सरकार, राज्य सरकारों एवं दानदाताओं के सहयोग से सरकारी और निजी हिस्सेदारी के तहत चल रहा है। उन्होंने हाथ के इशारे से इंगित कर बताया कि हमारी इस अक्षय रसोई के द्वारा पूरे ब्रज क्षेत्र के स्कूलों में बच्चों को दोपहर का भोजन पहुँचाया जाता है। इस कार्यक्रम में कोई भी किसी प्रकार से सहयोग कर सकता है। गरीब बच्चों को भूख की मार से बचानेवाला यह महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम है। पुजारीजी को प्रणाम कर हम अपने वाहनों की ओर लौटे। मित्र आनंद शर्मा ने दर्शनों के बाद खिचड़ी का प्रसाद ग्रहण किया।

अब हम इसी सड़क पर एक-डेढ़ किलोमीटर आगे बाईं ओर जगद्गुरु कृपालुजी महाराज की अनमोल विरासत 'प्रेममंदिर' आ पहुँचे हैं। वाहन मंदिर के बाहर खड़े कर दिए गए। मुख्य-द्वार पर जाँच-पड़ताल के बाद मंदिर में प्रवेश किया। मंदिर-दर्शन से पहले हम आपको इसके निर्माण तथा इतिहास के बारे में बताए देते हैं। पाँचवें जगद्गुरु कृपालुजी महाराज का यहाँ पर आश्रम हुआ करता था। यहीं पर १४ जनवरी, २००१ को भव्य-दिव्य, शुभ्र-धवल 'प्रेममंदिर' का निर्माण कार्य शुरू हुआ। देश के कोने-कोने से चुने हुए नौ सौ से अधिक शिल्पियों, कलाकारों और वास्तु-विशेषज्ञों ने दिन-रात काम करते हुए लगभग ग्यारह वर्षों में प्रसिद्ध सोमनाथ मंदिर की शैली में शुद्ध श्वेत संगमरमर का यह प्रेममंदिर साकार किया। इसके निर्माण में लगभग तीस हजार टन इटालियन संगमरमर काम में आया और निर्माण पर तब एक सौ पचास करोड़ से अधिक की राशि खर्च हुई। दुनिया के सबसे बेहतर क्वालिटी के संगमरमर से बने इस मूल मंदिर की लंबाई एक सौ पचासी फीट तथा चौड़ाई एक सौ पैंतीस फीट है। पूरे मंदिर में दक्षिण की स्थापत्य शैली के दर्शन होते हैं। संगमरमर पर बारीक नक्काशी और अंकन का काम गुजरात के सुप्रसिद्ध शिल्पी सुमनराम त्रिवेदी सोमपुत्र द्वारा किया गया है। दूध-सा ध्वल यह दुमंजिला भव्य मंदिर भगवान् 'राधा-कृष्ण' को समर्पित है। कृष्णं वन्दे जगद्गुरुः।

यह पूरा मंदिर ५४ एकड़ में फैला है। इसका भव्य उद्घाटन १५ फरवरी, २०१२ को हुआ और १७ फरवरी, २०१२ को दर्शनार्थियों के लिए खोल दिया गया। सबसे बड़ी बात यह है कि इस मंदिर में खंभों का उपयोग नहीं किया गया है। पूरब-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण यह मंदिर तिहत्तर हजार वर्ग फुट में फैला है और एक समय में यहाँ २५००० दर्शक मंदिर-प्रांगण में समा सकते हैं। इस लिहाज से खुला क्षेत्र काफी विस्तृत है। आओ, अब हम भी देव-दर्शन करने चलते हैं। हम प्रवेश मार्ग पर आगे बढ़े ही थे कि सब लोग ग्रुप में मंदिर को पार्श्व में लेकर फोटो खींचने लगे। घुसते ही यहाँ बाईं ओर रंग-बिरंगे फूलों की कलात्मक फुलवाड़ी जैसे दर्शकों का स्वागत कर रही है। प्राकृतिक वातावरण में कृष्णलीला की झाँकियाँ इतनी मनोहारी हैं कि बिल्कुल सजीव मालूम पड़ती हैं।

यहाँ एक झाँकी में बालकृष्ण वंशी टेर रहे हैं, इर्द-गिर्द गोप-ग्वाले, गाय-बछड़े, मोर और अन्य जीव बाँसुरी की रस-माधुरी में बेसुध हैं। इसके बाद नटखट कृष्ण सखाओं के साथ हैं, पानी के जीव भी बाहर निकलकर उन्हें एकटक निहार रहे हैं; गोप-गोपियों के साथ कृष्ण। अहा! यहाँ तो गोवर्धन नख पर धारे कान्हाजी इंद्र का मान-मर्दन कर रहे हैं। इस झाँकी का अनोखापन इस बात में है कि पूरा गोवर्धन पहाड़ हवा में लटका मालूम देता है। दर्शकों की आँखें आश्चर्य से फैल जाती हैं कि आखिर यह टिका कैसे है! इसके सामने से हम पहले मूल मंदिर की ओर मुड़े। यह मंदिर आयताकार चार फुट ऊँचे चबूतरे पर खड़ा है। इस चबूतरे के प्रवेश की सीढ़ियों पर स्थापित दो सुसज्जित हाथी दर्शनार्थियों के स्वागत में खड़े हैं। संगमरमर के ये सफेद हाथी बच्चों को बड़े लुभा रहे हैं। अनेक दर्शक और बच्चे इनके साथ खड़े होकर फोटो खिंचवा रहे हैं।

प्रेममंदिर में आने-जाने के दो रास्ते हैं, सो प्रवेश-द्वार पर दंडवत् प्रणाम कर हम आगे बढ़े। गर्भगृह में ठीक सामने श्रीराधा-कृष्ण की अत्यंत मनोहारी युगल मूर्तियाँ विराजमान हैं। इनके ठीक सामने के सभा-मंडप में कीर्तन चल रहा है, दो भजन-गायिकाएँ अपनी प्रस्तुति दे रही हैं। दोनों मूर्तियों के समक्ष हमने दंडवत् प्रणाम किया। पुजारीजी ने पंचामृत पान कराया। श्रीराधा-कृष्ण भगवान् के ठीक सामने कृपालुजी महाराज की सुंदर-सजीव प्रतिमा स्थापित है। मंदिर के दोनों ओर दीवारों में कृपालुजी महाराज की कीर्तनरत नाना झाँकियाँ, साथ ही चैतन्य महाप्रभु की सुंदर झाँकी है। मंदिर की दीवारों पर दरवाजों के आसपास बारीक नक्काशी की गई है। दर्शनार्थी हाथ लगाकर इन्हें गंदा न करें, इसलिए इन्हें पारदर्शी पॉलीथीन से ढक दिया गया है। बाईं ओर स्थित सीढ़ियों से अब हम ऊपर जा रहे हैं। यहाँ भी नीचे की तरह ही भगवान् राधा-कृष्ण की नयनाभिराम युगल झाँकी के ठीक सामने कृपालुजी महाराज की साधनारत सुंदर प्रतिमा लगाई गई है, जिससे कि वे

अपने ईष्ट का हर पल दर्शन करते रहें। राधा-कृष्ण की मूर्तियाँ इतनी मनोहारी हैं कि दर्शनार्थी एकटक देखते रह जाते हैं, पलक झपकाना ही भूल जाते हैं, श्रद्धावश हाथ अपने आप जुड़ जाते हैं। हर कोई मनमोहन की दिव्य झाँकी को आँखों में बसा लेना चाहता है।

यहाँ भी हमने राधा-कृष्ण एवं कृपालुजी महाराज को दंडवत् प्रणाम किया और हम सीढ़ियाँ उतरकर मंदिर के बाहर आ गए। फिर बाईं ओर से शेष बची झाँकियाँ देखते आगे बढ़े। छोटे-छोटे उद्यानों में रंग-बिरंगे फूलों और हरी-हरी घास पर गोपियों के साथ रास रचाते कृष्ण, ग्वाल-बालों के साथ गौएँ चराते कृष्ण, सखाओं के संग नाना खेल खेलते कृष्ण। कृष्ण ही कृष्ण! एक से एक सुंदर झाँकियाँ हैं। हरी घास के बीच खड़े धवल-श्वेत बगुले और नाचते मोर एकदम सजीव मालूम पड़ते हैं, उनकी भाव-भंगिमाएँ इतनी सहज कि शक की गुंजाइश ही नहीं। प्रेममंदिर की बाहरी दीवारों पर ऊपर से नीचे तक आद्योपांत संपूर्ण कृष्णलीला की झाँकियाँ इतनी कलात्मकता से उकेरी गई हैं कि इनके दर्शन के बाद भगवान् कृष्ण के बारे में जानने के लिए कोई ग्रंथ पढ़ने की जरूरत नहीं रह जाती है।

*कृपालुजी महाराज की अमर कृति प्रेममंदिर, वृंदावन*

झाँकियों के दर्शन करते हुए अब हम बाहर की ओर आ रहे हैं, यहाँ अंतिम विशाल झाँकी में भगवान् कृष्ण कालिय नाग के फन पर नृत्य कर रहे हैं। कृत्रिम सरोवर के बीच इसे पूरी तरह प्राकृतिक बनाने की कोशिश की गई है—लता, विटप, तरु सबकुछ है इस झाँकी में। मंदिर के संपूर्ण दर्शन करने में कम-से-कम दो घंटे लगते हैं। यह मंदिर बच्चों की पहली पसंद है, बच्चे तो यहाँ से बाहर निकलना ही नहीं चाहते हैं। रात्रि को लकदक रंग-बिरंगी रोशनी में इस मंदिर के दर्शन करने पर अलौकिक आनंद की अनुभूति होती है। यह वृंदावन के विशाल और ख्याति प्राप्त मंदिरों में गिना जाता है। मित्र आनंद शर्मा हम सबसे अलग और आगे-आगे दर्शन करते हुए निकास-द्वार के पास हमारा इंतजार कर रहे हैं। कुछ देर में हम उनसे आ मिले और मंदिर परिसर से बाहर निकल अपने-अपने वाहन में बैठ अगले मंदिर के दर्शनार्थ निकल पड़े।

अब हम श्रीबाँके बिहारीजी के दर्शन करने जा रहे हैं। हमारी गाड़ियाँ सीधी न जाकर परिक्रमा मार्ग पर बाएँ मुड़ गईं। जब तक हम और हमारे वाहन श्रीबाँकेबिहारी मंदिर के पास पहुँचें, तब तक हम आपको इस मंदिर के बारे में भी बताए देते हैं। बाँकेबिहारी मंदिर का निर्माण स्वामी हरिदास ने संवत् १८६४ में वृंदावन की पावन भूमि पर करवाया था। इसके निर्माण की कथा स्वामी हरिदास से संबद्ध है। संगीत के सम्राट् और तानसेन के गुरु स्वामी हरिदास का जन्म संवत् १५३६ में वृंदावन के निकट राजापुर गाँव में हुआ था। आगे चलकर हरिदास स्वामी आशुधीर देव के शिष्य बने। हरिदास बचपन से ही श्याम-सलोने के ध्यान में मग्न रहते थे, सो गुरु आशुधीर इन्हें देखते ही पहचान गए थे कि ये राधाजी की सखि ललिताजी के अवतार हैं। गुरु से मंत्र-दीक्षा लेकर हरिदास यमुना के समीप निकुंज के एकांत स्थान में ध्यानमग्न रहने लगे। अपनी युवावस्था में हरिदासजी निकुंज विहारीजी की नित्य लीलाओं का चिंतन करने लगे, तब निकुंज वन में इनको विहारीजी ने स्वप्न में जमीन से अपनी मूर्ति निकालने की प्रेरणा दी।

प्रभु की आज्ञा से जमीन को खोदकर श्रीविग्रह को मार्गशीर्ष के शुक्ल पक्ष की पंचमी को बाहर निकाला गया। यही सुंदर मूर्ति संसार में श्रीबाँकेविहारी के नाम से विख्यात है। इनके प्रकट होने की तिथि को 'विहार पंचमी' के रूप में बड़े उल्लासपूर्वक मनाया जाता है। स्वामी हरिदासजी निधिवन में ही श्रीविहारीजी की सेवा करते रहे। जब यह मंदिर बनकर बनकर तैयार हुआ, तब विहारीजी को यहाँ लाकर विराजमान कर दिया गया। कालांतर में स्वामी हरिदासजी की उपासना पद्धति में भी परिवर्तन किया गया और निंबार्क संप्रदाय से स्वतंत्र एक 'सखी भाव संप्रदाय' बनाया गया। तब से वृंदावन के लगभग सभी मंदिरों में इसी पद्धति के अनुसार प्रभु की सेवा एवं महोत्सव मनाए जाते हैं। इस मंदिर में केवल शरद पूर्णिमा के दिन श्रीविहारीजी वंशी धारण करते हैं। श्रावण मास में तीज को झूले पर बैठते हैं और केवल जन्माष्टमी के दिन ही उनकी मंगला आरती होती है। अक्षय तृतीया को श्रीविहारीजी के चरण-दर्शन होते हैं।

यहाँ नित्य मंगला आरती न होने के संबंध में यह कथा प्रचलित है कि एक दिन प्रातः वृद्ध स्वामी हरिदासजी ने देखा कि उनके बिस्तर पर कोई कपड़ा ओढ़कर सो रहा है, तो उन्होंने टोका, 'अरे! मेरे बिस्तर पर कौन सो रहा है?' अद्‌भुत आश्चर्य की बात कि वहाँ तो विहारीजी सोए हुए थे, सो यह पुकार सुनते ही वहाँ से उठकर निकल भागे, किंतु हड़बड़ी में अपना चूड़ा तथा वंशी बिस्तर पर ही छोड़ गए। जर्जर काया, वयोवृद्ध तथा दृष्टि क्षीण होने की वजह से स्वामीजी को ज्यादा कुछ नजर नहीं आया। उधर प्रातः जब पुजारीजी ने मंदिर के पट खोले तो उन्हें विहारीजी का चूड़ा तथा वंशी नजर नहीं आई। हताश-परेशान पुजारीजी दौड़े-दौड़े निधिवन में स्वामी हरिदासजी के पास आए और सारी घटना कह सुनाई। स्वामीजी बोले कि प्रातः कोई मेरे बिस्तर पर सो रहा था, मैंने उसे टोका तो वह जल्दी-जल्दी में बिस्तर पर कुछ भूल गया है। तब पुजारीजी ने प्रत्यक्ष अपनी आँखों से देखा कि बिहारीजी का चूड़ा और वंशी पलंग पर विराजमान हैं। इससे यही प्रमाणित होता है कि रात को बिहारीजी नित्य रास रचाने निधिवन जाया करते हैं, सो प्रातःकाल तक सोए रहते हैं। प्रातः बिहारीजी की मंगला आरती करने से उनके शयन में बाधा पड़ेगी, इसी कारण से यहाँ मंगला आरती नहीं की जाती है। इसके अलावा इस संबंध में और भी कहानियाँ प्रचलित हैं।

श्रीबाँकेबिहारी मंदिर में 'झलक दर्शन' अर्थात् 'झाँकी दर्शन' होते

हैं। कुछ-कुछ अंतराल पर परदे को हटाया जाता है। इसके संबंध में भी कई कहानियाँ प्रचलित हैं। बताया जाता है कि एक बार एक भक्तिन अपने पति के साथ बिहारीजी के दर्शन करने के लिए वृंदावन आई। श्रीबिहारीजी के दर्शनों के पश्चात् पति ने घर लौटने को कहा तो भक्तिन यह सोचकर विह्वल होकर रोने लगी कि अब बिहारीजी के दर्शन-लाभ से वंचित होना पड़ेगा; फिर भी घर लौटना तो था ही, सो रोते-रोते बिहारीजी से विनती करने लगी, 'हे प्रभु! न चाहते हुए भी मुझे घर लौटना पड़ रहा है। मैं आपके दर्शन के बिना कैसे रहूँगी। मेरी बड़ी इच्छा है साँवरे, कि आप मेरे साथ ही रहें।' भारी मन से वह पति के साथ ताँगे में बैठकर स्टेशन की ओर निकल पड़ी। उधर बिहारीजी उसकी विनती से पिघलकर एक गोप बालक बनकर ताँगे के साथ चलते हुए भक्तिन से अपने साथ ले चलने का हठ करने लगे।

इधर पुजारीजी मंदिर में बिहारीजी को गायब देखकर अनुमान करने लगे कि हो न हो, ठाकुरजी उस भक्तिन के पीछे चले गए हैं। पुजारीजी तुरंत दौड़े और आगे जाकर ताँगे में बैठी भक्तिन से पूछताछ करने लगे कि वह गोप बालक देखते-ही-देखते गायब! पुजारीजी लौटकर मंदिर आए तो देखा कि बिहारीजी अपने स्थान पर विराजमान हैं। एक कथा यह भी बताई जाती है कि एक भक्त नित्य दर्शन कर बिहारीजी को अपलक निहारता रहता, दीन भाव से टकटकी लगाए रहता। उसके प्रेम में पड़कर एक दिन बिहारीजी उसके साथ भाग निकले। पुजारीजी ने जब मंदिर कपाट खोले तो बिहारीजी गायब। फिर उन्हीं की प्रेरणा से पता चला कि वे एक भक्त के साथ चले आए हैं। जैसे-तैसे उन्हें वापस लाया गया। प्रेम के वशीभूत हो बिहारीजी किसी के भी साथ चले जाएँगे, अत: तभी से ऐसी व्यवस्था कर ही गई कि 'झलक दर्शन' में भक्त बिहारीजी से नजर न मिला सकें, इसलिए परदा निरंतर खुलता और बंद होता रहता है। यहाँ ऐसी और भी कई कहानियाँ सुनने को मिलती हैं।

*होली की धूम, श्रीबांकेबिहारी मंदिर (वृंदावन)*

हमारे वाहन अब मंदिर के करीब पहुँच चुके हैं। जीत भाई ने एक चौड़ी सी गली में सुरक्षित स्थान देखकर गाड़ी खड़ी कर दी, इसके पीछे दूसरी गाड़ी भी। अपने जूता-चप्पल, जाकेट, मोबाइल आदि सब गाड़ी में छोड़ दिए गए। श्रीबाँकेबिहरीजी का जयकारा लगाते हुए आगे बढ़े। मैंने अपना चश्मा उतारकर जेब में रख लिया। डर है कि हनुमानजी के वंशज किस ओर से झपट्टा मार चश्मा ले उड़ें। मैं नहीं जान पाया कि यहाँ के बंदर चश्मे के ज्यादा शौकीन हैं या चश्मेवालों के प्रति ईर्ष्यालु हैं? बंदर पलक झपकते ही कंधे पर आ बैठेगा और चश्मा अपने कब्जे में कर सीधा छत पर। यदि ऐसा हो जाए तो चश्मा सही सलामत पाने का बड़ा आसान उपाय है कि एक केला उसकी ओर उछालिए, वह चश्मा आपकी ओर उछाल देगा। देख रहे हैं कि वृंदावन की गलियों में होली की धूम मची है। यहाँ वसंत पंचमी से होली प्रारंभ होकर डेढ़ माह, यानी रंग पंचमी तक चलती है। वृंदावन के हुरियारे बड़े मशहूर हैं। भीगने से बचते, गुलाल से रँगते हम मंदिर की ओर बढ़ रहे हैं। मित्र आनंद शर्मा थोड़ा आगे निकल गए हैं। बिजेंद्र भाई ने होली खेलने के लिए गुलाल का दस किलो का एक कट्टा खरीद लिया, सब लोग इसी से होली खेलेंगे। बिहारीजी को भेंट के लिए एक-एक फूलमाला लेकर सबको हिदायत दे दी गई कि एक-दूसरे का साथ न छोड़ें। कारण—मंदिर से बाहर आने पर रंग-गुलाल में सराबोर कोई एक-दूसरे को पहचान नहीं पाएगा।

लाल पत्थर से बना यह भव्य मंदिर रंग-गुलाल की बौछार से और भी रंगीन हो गया है। संगमरमर का फर्श अबीर-गुलाल और रंग की कीचड़ से चिपचिपा रहा है। भक्तों की भीड़ इतनी ज्यादा है कि एक रेले में हम लोग मंदिर के बरामदे में जा लगे। 'श्रीबाँकेबिहारी लाल की जय' के नारों और अबीर-गुलाल के उड़ते बादलों के बीच ज्यादा कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा है। हालाँकि इन दिनों बिहारीजी अपने स्थान से काफी आगे आ जाते हैं। जैसे ही परदा हटता है तो भक्तों का जन-सैलाब भी उन्मत्त हो ऐसा कोलाहल करता है कि पूरा मंदिर गूँज उठता है। सुरक्षा-सेवक भक्तों को आगे बढ़ाते जाते हैं। इस बार की हिलोर में हम लोग भी बिहारीजी के सामने जा पहुँचे। माला यहीं से फेंककर उन्हें अर्पित कर दी गई। फिर हुई गुलाल की बौछार। दाएँ से गुलाल, बाएँ से गुलाल, पीछे से गुलाल, सामने बिहारीजी की ओर से उनके सेवक-पुजारी भक्तों पर गुलाल उछाल रहे हैं। गुलाल ही गुलाल! मंदिर के क्षितिज में खुशबूदार रंगों के बादल छा गए। होली खेलनेवाले भक्तों का कोई ओर-छोर नहीं है।

भक्तों का अंग-अंग, पोर-पोर बिहारीजी की भक्ति के रंग में सराबोर हो गया है। होली के प्रति भक्तों में ऐसा उछाह, ऐसा उन्माद न कभी देखा, न कभी सुना, पर आज इस दिव्य होली-मिलन का हिस्सा बनकर आनंदित हूँ, गौरवान्वित हूँ। अभी हम इसी तरह जमे हुए मुट्ठी भर-भरकर गुलाल उड़ा रहे थे कि आनंद शर्मा किस हिलोर में बहकर हमसे आ मिले। मैंने और जीतभाई ने उन्हें गुलाल लगाया और गले मिले। एक अपूर्व आनंद, अनोखा रोमांच, एक अलग तरह का सुख मैं अनुभव कर रहा हूँ। मेरा चश्मा गुलाल से अँट गया है। भक्तों की भीड़ का दबाव इतना ज्यादा है कि यहाँ ठहर पाना असह्य हो रहा है, अत: मैं और महेश भाई जोर लगाकर किनारे की ओर खिसक आए।

भारत के कोने-कोने से तो लाखों कृष्णभक्त होली खेलने आ ही रहे हैं, विदेशों से आए अंग्रेज और गोरे कृष्णभक्त भी बड़ी संख्या में यहाँ आए हुए हैं। वे अपने महँगे कैमरों की परवाह न कर, रंग में सराबोर हो इस अद्‌भुत आनंद का लुत्फ उठा रहे हैं। धीरे-धीरे और आगे-पीछे हम सब लोग मंदिर से बाहर निकल आए। वास्तव में चेहरे से एक-दूसरे को कोई पहचान नहीं पा रहा है। बिजेंद्र भाई दल से बिछुड़ गए। कुछ देर बाद वह भी बाहर आ गए। फिर सब एक साथ अपने वाहनों की ओर बढ़े। पतली-पतली गलियों में छत से, खिड़कियों से, दरवाजों से गुलाल, रंग और कहीं

से पानी की बौछार हो जाती है। छज्जों पर खड़े बच्चे भी कूद-कूदकर पिचकारियाँ चला रहे हैं। कहीं ढोल की ताल पर नाच हो रहा है। अपूर्व उल्लास का वातावरण है चारों ओर। यहाँ कोई किसी को रंग लगा सकता है। यह तो प्रेम के रसिया की रास-भूमि है। अगर रंग से परहेज है या रंग-गुलाल का बुरा मानो तो अपने घर बैठो, यहाँ मान-गुमान नहीं चलता। ब्रज में सब रंगों पर एक रंग भारी है—प्रेम का रंग।

वृंदावन की गलियों से निकलते, भीगते अपने वाहनों के पास आ गए हैं। आनंद शर्माजी ने ठाकुरजी को गुझिया का भोग लगवाया था, सो हम सभी ने बाँटकर गुझिया का प्रसाद खाया और फिर वाहनों में बैठ आगे चल पड़े। कालीदह पर वाहन खड़े कर दर्शन करने निकले। पहले यहाँ तक यमुना का बहाव था, पर आज यहाँ पक्की सड़क बनकर इसके दोनों ओर बसावट है। यमुनाजी काफी दूर चली गई हैं। यहाँ लाल पत्थर के दो छोटे-छोटे मंदिर बने हैं, जिनका जीर्णोद्धार इंदौर रियासत ने करवाया था। यहीं स्थित कदंब के वृक्ष को कृष्ण-काल का बताया जाता है। भगवान् कृष्ण यमुना के जल से गेंद लाने के लिए इस कदंब पेड़ पर चढ़कर ही यमुना जल में कूदे थे, उनके पद-चिह्न आज भी इस पर अंकित हैं। कुल मिलाकर भगवान् कृष्ण का यह लीला-स्थल अपनी दुरवस्था पर आँसू बहा रहा है। यहाँ भी हनुमान बंदर बड़ी संख्या में हैं।

इससे थोड़ा आगे चलकर इसी सड़क पर हम सिद्धपीठ इमलीतला के दर्शन करने आए हैं। सन् १५१६ में कार्तिक पूर्णिमा के दिन चैतन्य महाप्रभु सर्वप्रथम यहाँ पधारे थे। यहीं पर महाप्रभु की बैठक रही। इसी स्थान पर श्रीबिहारीजी इमली वृक्ष के नीचे श्रीराधाजी से मिला करते थे। ऐसा बताया जाता है कि यहीं महारास के समय इमली से श्रीराधाजी का आलता धुल गया था, सो श्रीराधाजी के शापवशात् आज भी ब्रज चौरासी कोस में इमली का वृक्ष फलता नहीं है। इमली के उस वृक्ष के तने पर बड़े जतन से सीमेंट जैसा लेप लगा दिया गया है, जिससे तना समय की मार तथा हानिकर कीड़ों से बचा रहे। इस मंदिर की दीवारों पर दोनों ओर हरि-कीर्तन में निमग्न चैतन्य की नाना झाँकियाँ चित्रित हैं। मंदिर के पट बंद हो गए हैं, सो हमने वहीं कुछ देर इंतजार किया। पट खुलने पर बिहारीजी की सुंदर झाँकी तथा निमाई और निताई की मूर्तियों के दर्शन कर आरती में शामिल हुए। यहीं से अंदर की ओर निकलकर सेवाकुंज में ललिताकुंड के दर्शन किए। यहाँ पर बड़ी सुरक्षा के बीच संरक्षित रखी गई लता-पताएँ हैं, जो कृष्ण-काल की बताई जाती हैं। यात्री या यहाँ आनेवाले दर्शक इनको हानि न पहुँचाएँ, इसलिए जालीदार दर्शक-दीर्घा बनाई गई है। इसी में घूमकर तीर्थयात्री इन लताओं के दर्शन करते हैं। यहाँ बंदरों का बड़ा आतंक है, इस जाली-पथ में तीर्थयात्री भी इन बंदरों से सुरक्षित रहते हैं।

श्रीराधाजी की परम सखी ललिताजी के पुण्य स्मरण को बनाए रखनेवाला 'ललिता कुंड' यहीं पर है। यहाँ के पुजारी एक बंगाली बाबू हैं। देखने में आ रहा है कि यहाँ अधिकतर मंदिरों में, तीर्थस्थलों में बंगाली पुजारी तथा तीर्थपुरोहित काफी संख्या में हैं। बंगाल से तीर्थयात्री भी यहाँ बड़ी संख्या में आते हैं। हमारे इर्द-गिर्द बंगाल से आए स्त्री-पुरुष तीर्थयात्रियों के झुंड-के-झुंड दर्शन कर रहे हैं। पुजारीजी सभी को ललिता-कुंड के जल का आचमन करा रहे हैं। यहाँ अच्छी तरह दर्शन कर हम सब लोग अपने वाहनों पर आ गए। अब लगभग डेढ़ बज रहा है, भूख लग रही है, सो परिक्रमा-मार्ग पर स्थित अग्रवाल धर्मशाला के साथ वाहन खड़े कर दिए गए और इसके परिसर में स्थित भोजनालय में भोजन करने बैठे। यहाँ पर शुद्ध शाकाहारी ताजा भोजन मिलता है। भोजन में दो सब्जी, दाल, रायता, रोटी, चावल, अचार, पापड़ आदि हैं, यानी ७५ रुपए में भरपेट भोजन। सभी ने रुचिकर भोजन किया।

धर्मेंद्र भाई तथा उनके साथियों को दिल्ली लौटना है, सो उनकी टीम के पाँचों सदस्य गाड़ी में बैठ दिल्ली के लिए रवाना हो गए। शेष पाँच जन हम गोकुल के लिए निकल पड़े। अचानक कार्यक्रम बदल गया। आनंदजी को जरूरी कार्य से आगरा जाना पड़ा, हम तीन जन गोकुल के रास्ते पर उतर गए, ये दोनों आगरा चले गए। हम पैदल चलकर गोकुल में घूमे, इन्हें आने में विलंब हुआ और रात साढ़े सात बजे ही लौट सके। रात्रि को रमण रेती में विश्राम किया। प्रातः वहाँ से निकलकर ब्रह्मांडघाट, रसखान समाधि, गोकुल आदि देख वृंदावन लौट आए। यहाँ की गलियाँ ज्यादा चौड़ी नहीं हैं। गलियाँ-सड़कें छोटी-छोटी हैं तो चौराहे भी छाटे-छोटे हैं। हर चौराहे पर उपलों तथा लकड़ियों से होली सजाई गई है और उसके ऊपर बड़ी सज-धज के साथ होलिका की गोद में बैठे भक्त प्रह्लाद की मूर्तियाँ विराजमान हैं। ऐसा दृश्य लगभग हर चौराहे पर देखने को मिलता है। गाड़ी रंगजी के मंदिर की पार्किंग में खड़ी कर दी गई।

पाँचों जन अब यहाँ से पैदल ही बिहारीजी के दर्शन के लिए चल पड़े। गलियों में बाएँ से दाएँ और दाएँ से बाएँ चलते हुए, भीगते, गुलाल-अबीर की बौछार सहते बाँकेविहारी मंदिर के प्रवेशद्वार पर पहुँचे। सभी ने साथ-साथ मंदिर में प्रवेश किया। कल की अपेक्षा आज भक्तों की भीड़ ज्यादा है। मंदिर प्रांगण में अबीर-गुलाल के बादल छा गए हैं। आगे कुछ भी दिखाई नहीं पड़ रहा है। नीचे फर्श पर रंग-गुलाल का एक फुट कीचड़-पानी खड़ा हो गया है। पर भक्तों का जोश-जुनून तनिक भी ढीला नहीं पड़ा है। भक्तों की रेलपेल है, सब एक रंग के हो गए हैं। बिहारीजी का परदा जैसे ही हटता है, 'बाँके बिहारीलाल की जय' के नारों से मंदिर गूँज उठता है। भीड़ के दबाव के चलते हम सब बिहारीजी की जय-जयकार करते हुए मंदिर के बाहर निकल आए। भली प्रकार दर्शन के बाद कुछ खरीदारी कर हम लोग अपराह्न एक बजे दिल्ली के लिए रवाना हुए। छठीकरा मोड़ पर पेड़े का प्रसाद खरीदा। ट्रैफिक की मार सहते, चलते-रुकते पाँच बजे दिल्ली में प्रवेश किया और फिर साढ़े सात बजे घर आ लगे।

बड़ी अद्‌भुत और आनंददायी रही यह तीर्थयात्रा। जब-जब होली आएगी, तब इस यात्रा की याद आए बिना न रहेगी। होली तो हर वर्ष खेली जाती है, खेली जाएगी, पर होली में वह आनंद कहाँ, जो मित्र आनंद और आनंदकंद बिहारीजी के साथ खेली—अद्‌भुत! अलौकिक!! अविस्मरणीय!!!

जी-३२६, अध्यापक नगर, नांगलोई, दिल्ली-११००४१
दूरभाष : ९८६८५२५७४१

आलेख

# पौराणिक साहित्य में संस्कृति का चिंतन

● मरूफ उर रहमान

प्राचीन भारतीय संस्कृति और सभ्यता आदि का जीवंत स्वरूप वेदों के पश्चात् पुराणों में मिलता है। पौराणिक संस्कृति को समझने से पहले भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति को समझना आवश्यक है। साथ ही साथ इसके अजस्र स्रोत का ज्ञान भी आवश्यक है। भारतीय आर्यों की संस्कृति के मूल आधार वेद संसार के प्राचीनतम ग्रंथ माने जाते हैं। वह आर्यों के सर्वप्रथम लिखित प्रामाणिक ग्रंथ हैं। 'ऋग्वेद' उनमें प्राचीनतम है तथा संसार के सभी वर्ग एवं वर्ण उसकी प्रामाणिकता को स्वीकार करते हैं। भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता का भव्य एवं विशाल भवन श्रुति पर प्रतिष्ठित है। श्रुति का अर्थ वेद है। वेद को श्रुति इसलिए कहा गया है, क्योंकि वह ऋषियों से सुने गए हैं, न कि उनके द्वारा रचे गए हैं। वेदों का महत्त्व धार्मिक तथा दार्शनिक तत्त्वों के आधार पर तो है ही, साथ ही अन्य लौकिक विषयों का भी उनमें समावेश है। भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता वेदों से ही पल्लवित, पुष्पित तथा फलित हुई है। भारतीय संस्कृति का अर्थ वैदिक संस्कृति है।

जब हम संस्कृति तथा सभ्यता का नाम लेते हैं, तब स्वभावत: हमारे मन में यह विचार उठता है कि संस्कृति तथा सभ्यता के क्या अर्थ हैं? विद्वानों ने इसके विभिन्न अर्थ बताए हैं। वस्तुत: भिन्न-भिन्न धर्मों की संस्कृति भिन्न-भिन्न हुआ करती है। संस्कृति का सामान्य अर्थ समस्त सीखा हुआ व्यवहार होता है। इसके प्रमुखत: दो भेद हैं—(१) वैयक्तिक संस्कृति तथा (२) जातीय संस्कृति। वैयक्तिक संस्कृति का संबंध मनुष्य की बुद्धि, स्वभाव, मनोवृत्ति आदि से होता है। इनका संबंध मनुष्य के गुणों से होता है तथा यह संबंध जीवन के मूल्यों से जुड़ा होता है। यह गुण स्वयं मूल्यवान होते हैं अथवा मूल्यों के उत्पादन के साधन होते हैं। जातीय संस्कृति जातीय चेतना है, जिसमें व्यक्ति अपने भौतिक अस्तित्व को भुलाकर आत्मा की सृष्टि करता है, जिसके अस्तित्व के लिए भौतिक शरीर की आवश्यकता नहीं होती। इसी जातीय चेतना के अंतर्गत धर्म, दर्शन, काव्य-शास्त्रादि का समावेश होता है। भारतीय संस्कृति का अभिप्राय इसी जातीय संस्कृति से है, परंतु जब हम धर्म, दर्शन, काव्य-शास्त्रादि संबंधी ग्रंथों को पढ़ते हैं, तब कभी-कभी उनके प्रतिपाद्य विषय से हटकर उनके प्रतिपादकों पर भी विचार करने लगते हैं। उस समय वैयक्तिक संस्कृति हमारे सामने आ जाती है।

अब हम आगे इन दोनों के विस्तार में न जाकर संक्षेप में कहेंगे कि भारतीय संस्कृति में इन दोनों का समावेश है। इस भारतीय संस्कृति के स्रोत वेद हैं, जिससे भारतीय संस्कृति परंपरा-रूप में भिन्न-भिन्न कालों में परिवर्धित एवं परिष्कृत होकर इस समय भी सतत प्रवाहित है। भारतीय

सुपरिचित लेखक। 'संस्कृत साहित्य में मनोविज्ञान' एवं अनेक शोध-पत्र प्रकाशित। अनेक सेमीनार, गोष्ठी आदि में पेपर प्रस्तुति एवं सहभागिता। संस्कृत समाराधक सम्मान से सम्मानित। संप्रति जाकिर हुसैन कॉलेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय में संस्कृत के सहायक प्रोफेसर।

संस्कृति का अर्थ वैदिक संस्कृति है। भारतीय संस्कृति के अंतर्गत विस्तारत: वेदादि स्वरूप निरूपण आधिभौतिक तत्त्व, आत्म-तत्त्व; धर्म, संस्कार, विज्ञान, शिल्प, भक्ति उपासना आदि तत्त्वों का अध्ययन करते हैं। ऋग्वेद इन तत्त्वों का मूल स्रोत है। सभ्यता साधन है। वह सब कला-कौशल के तंत्र और तरीके, जिनके द्वारा मनुष्य अपनी मूल सुविधाओं तथा जरूरतों को पूरा कर सकता है, सभ्यता कहलाती है। इस दृष्टि से सभ्यता के साधन भूत साधनों का नाम संस्कृति है अर्थात् वह मूलभूत साधन, जो संस्कृति के फलने-फूलने का अवसर प्रदान करते हैं, सभ्यता के वाचक हैं। मनुष्य के गुणों की वृद्धि उन साधनों के प्राप्त करने पर होती है और जातीय संस्कृति उसी पर पनपती है।

वैदिक तथा पौराणिक संस्कृति-सभ्यता के दो मापदंड हैं। वैदिक संस्कृति से जिस प्रकार वैदिक आर्यों का जीवन प्रभावित हो, उसी प्रकार पौराणिक संस्कृति से आर्येतर मनुष्यों अर्थात् आधुनिक हिंदुओं का जीवन प्रभावित है। आधुनिक हिंदू जाति पुराणों को आधार बनाकर अपने जीवन को व्यवस्थित कर रही है। पुराणों पर वेदों का गहरा प्रभाव है तथा वेद की अनेक मान्यताएँ नारी परिवेश के साथ पुराणों में विकसित हुई है। कुछ मान्यताओं का स्वतंत्र विकास भी हुआ है। पुराणों की प्रमुख संस्कृति-भेद का संक्षिप्त वर्णन प्राप्त होता है—

## धर्म-विषयक संस्कृति

*इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।*
*विभेत्यल्पश्रुताद् माममं प्रहरिष्यति॥*

इतिहास तथा पुराणों द्वारा वेदों का उपबृंहण होता है अर्थात् पुराण वेदार्थ में साहाय्य प्रदान करते हैं। वेद मूल्यत: यज्ञ का प्रतिपादक है (यज्ञो मन्त्रब्राह्मणस्य विषय:, न्यायभाष्य ४.१.६.१), जबकि प्राचीन पुराणों के विषयों से यज्ञ का कोई साधारण संबंध प्रतीत नहीं होता। वस्तुत: व्यास के बाद वैदिक परंपरा में जब पुराणों का सादर अनुप्रवेश होने लगा, उसके बाद ही वेदमंत्र व्याख्यानात्मक और वेदगत कथाओं के

उपबृंहणात्मक संदर्भों का पुराणों में अनुप्रवेश हुआ, ऐसा अनुमान किया जा सकता है और इस काल में ही यह प्रसिद्धि हुई कि 'पुराण वेद का उपबृंहण है।' परंतु यज्ञ से हटकर हिंदू धर्म की धारा प्रवाहित करने में पुराण प्रसिद्ध है। इनके आधार पर आज के ब्राह्मण, शैव तथा वैष्णव धर्म पल्लवित हुए हैं। इस मत के प्रतिपादन में १८ पुराणों में से छह-छह की कोटियाँ बनती हैं—(१) सात्त्विक पुराण—(क) विष्णु पुराण, (ख) नारद पुराण (ग) भागवत पुराण, (घ) गरुड पुराण, (ड.) पद्म पुराण, (च) वराह पुराण (विष्णु वैष्णव धर्म)।

(२) राजस पुराण—(क) ब्रह्मांड पुराण, (ख) ब्रह्मवैवर्त पुराण, (ग) मार्कंडेय पुराण, (घ) भविष्य पुराण, (ड) वामन पुराण, (च) ब्रह्म पुराण (ब्रह्मा ब्राह्मण धर्म)।

(३) तामस पुराण—(क) मत्स्य पुराण, (ख) कूर्म पुराण, (ग) लिंग पुराण, (घ) शिव पुराण, (ड) स्कंद पुराण, (च) अग्नि पुराण। (शिव शैव धर्म)

### पौराणिक वंशानुचरित से संस्कृति का ज्ञान

पुराणों के पाँच लक्षणों में से वंशानुचरित का प्रमुख स्थान है। इसके अध्ययन से ज्ञात होता है कि किस राजा के पश्चात् किस अन्य राजा का वंश स्थापित हुआ। प्रत्येक राजा के समय देश की क्या दशा थी। दशा एक विशद् अर्थ का वाचक है। इस शब्द से सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, नैतिक आदि दशाओं का बोध होता है। भारत में अति प्राचीन काल से राजवंशों की एक लंबी परंपरा रही है। वेदों में कुरु, पांचाल, ययाति, भरत आदि वंशों का वर्णन प्राप्त होता है। वंशों में अनेक राजा हुए तथा उनकी अपनी-अपनी राज्य की नीति थी। पौराणिक-काल में भी वंश-परंपरा चली है तथा इस परंपरा का प्रारंभ वैवस्वत मन्वंतर से प्रारंभ होता है। इस परंपरा में अनेक अर्थात् हजारों राजा होने चाहिए, परंतु पुराणों में मुख्य राजाओं का ही वर्णन प्राप्त होता है। यह पुराणों में जो मुख्य-मुख्य वंश हैं, जन के प्रधान अथवा प्रतापवान राजाओं के ही नामोल्लेख पुराणों में उपलब्ध होते हैं। अप्रसिद्ध अथवा नगण्य राजाओं का वर्णन पुराणों में उपलब्ध नहीं होते हैं। पुराणों में प्राप्त राजाओं के वंशों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। एक कोटि में सूर्यवंश के राजा तथा दूसरी कोटि में चंद्रवंश के राजा आते हैं। सूर्यवंश के प्रमुख राजा इक्ष्वाकु, धुंधुमार, मांधाता, सौभरी, सत्यव्रत, हरिश्चंद, सागर, भगीरथ, ऋतुपर्ण, दलीप, श्रीराम तथा राम के वंशज हैं। इसी प्रकार चंद्रवंश के प्रमुख राजा अत्रि, बुध, इला, सुद्युम्न, पुरूरवा, ययाति, दुष्यंत तथा भरत हैं।

वंशानुचरित से हमें ज्ञात होता है कि किस-किस समय में किन-किन राजवंशों की स्थापना हुई। उनका क्या जीवन-दृष्टिकोण था। उनके समय में देश की दशा क्या थी। प्रजा की क्या दशा थी। प्रजा तथा राजा के संबंध कैसे थे।

शिल्प, कला, विद्या, व्यवसाय की प्रगति किस स्तर की थी। शिक्षा, स्वास्थ्य, न्याय आदि की व्यवस्था किस प्रकार की थी। उस समय स्त्री की क्या दशा थी। स्त्रियाँ समाज की आवश्यक अंग हैं, उनकी शिक्षा-दीक्षा, समाज में उनका स्थान, पुरुष के साथ उनके संबंध, घर तथा बाहर के क्षेत्रों में उनका स्थान क्या था। पौराणिक वंशानुचरित से अनेक उपयोगी बातों की जानकारी हमें प्राप्त होती है। सर्वप्रथम हम देखते हैं कि पौराणिक कालीन लोगों का जीवनसर्वतोन्मुखी था। तत्कालीन लोगों ने केवल बाह्य जगत् को ही नहीं देखा, अपितु उनकी दृष्टि आंतरिक जगत् पर भी थी। यही कारण है कि पौराणिक कालीन लोगों का जीवन भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों पक्षों को समान रूप से स्पर्श कर रहा है। राजा अपने राज-धर्म का पालन कर रहा है। वह प्रजा का हित साधने में जहाँ एक ओर तत्पर है, वहाँ दूसरी ओर देश अथवा राष्ट्र के हित के लिए न्याय मार्ग की सरणि लेता हुआ राज्य को तिलांजलि दे देता है। वंशानुचरित का अध्ययन हमें शिक्षा देता है कि कैसे हम अपने जीवन को सुधार सकते हैं। हमें यहाँ एक सीख मिलती है कि हम अच्छी बातों को सीखें तथा बुरी बातों को छोड़ दें।

### पुराणकालीन लोगों की मनोरंजन-प्रियता

पुराणों के अध्ययन से पता लगता है कि उस काल के लोग मनोरंजन के अनेक साधनों को अपनाते थे। पुराणों में ऐसे संदर्भों को ढूँढ़ा जा सकता है। पुराणों को आधार बनाकर अनेक हिंदी पौराणिक नाटक लिखे गए हैं। डॉ. देवर्षि सनाढ्य का 'हिंदी के पौराणिक नाटक' एक सराहनीय कदम इस दिशा में है।

समाज मानवों का समूह है। इस समूह में विभिन्न रुचि के लोग रहते हैं। मनुष्य अपनी रुचि को पूर्ण करने में अनेक साधनों को अपनाते हैं। वेदों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उस काल के लोग अपने मनोरंजनार्थ, आखेट, युद्ध, मल्ल-युद्ध, जुआ, नर्तन, अश्वारोहण, स्वाँग-रचना आदि कार्य किया करते हैं। निस्संदेह रूप से पौराणिक काल में मनोरंजन के साधनों का विस्तार हुआ।

पौराणिक कालीन मनोरंजन के साधनों का ज्ञान अत्यधिक नवीन वैज्ञानिक साधनों को छोड़कर अन्य साधनों के आधार पर किया जा सकता है। मनोरंजन के विभिन्न साधनों के आधार पर लोगों की रुचि, ज्ञान, रीति, कुरीति, वेश-भूषा आदि का ज्ञान प्राप्त होता है।

### दंड-विधान

प्रगति का मूल मंत्र संयम या नियम का पालन है। जो समाज जितना नियमों में होगा, यह उतना ही प्रगति करेगा। वैदिक समाज को संयमित रखने के लिए दो प्रकार के नियम दिखाई देते हैं। उनमें से एक का संबंध धर्म से है तथा दूसरे का संबंध समाज से है। यह कथन कुछ स्पष्टता की आवश्यकता रखता है। ऋग्वेद में वरुण नैतिकता का देवता है तथा जो लोग नियम को भंग करते हैं, वरुण उनको दंड देता है। इसी प्रकार ऋग्वेद में इंद्र का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इंद्र आर्यों का राष्ट्रीय देवता है। राजा-मित्र तथा अनमित्र दोनों उसी की स्तुति विजय-लाभ के निमित्त करते हैं। स्वत: इंद्र राजा हैं। वह स्वयं युद्ध करता है तथा युद्ध में वृत्र आदि का हनन करता है। वृत्र आदि का हनन उसका दंड-दान है। इस दंड-दान से इंद्र राष्ट्र का कल्याण करता है। लौकिक राजाओं का वर्णन भी ऋग्वेद में उपलब्ध होता है।

वैदिक तथा पौराणिक दो प्रकार के समाज हमारे सामने आते हैं— वैदिक समाज में अपेक्षाकृत विशृंखलता कम थी, परंतु पौराणिक समाज अधिक विशृंखल था। फलत: यहाँ कुछ कड़े दंड-विधान की आवश्यकता थी। नियम के अभाव में समाज की स्थिति शंकास्पद है। यह नियम कई प्रकार के होते हैं। इन नियमों को आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक, नैतिक आदि भागों में बाँट सकते हैं। इस प्रकार उनके भिन्न-भिन्न प्रयोजन होते हैं।

मत्स्य पुराण के २२७वें अध्याय में कतिपय दंड-विधानों का वर्णन किया गया है। उनमें से द्रष्टव्य इस प्रकार है। वहाँ बताया गया है कि स्त्रियों तथा बच्चों के वध करने पर क्या दंड दिया जा सकता है। असभ्य व्यवहार करने पर क्या दंड मिल सकता है। बड़े-बड़े पशुओं की चोरी करने पर चोर को क्या सजा मिल सकती है। तुच्छ मूल्य की वस्तु की चोरी करने पर तस्कर किस प्रकार की सजा का भागी बन सकता है। अन्य विधानों को यहाँ जाना जा सकता है।

**दान-माहात्म्य**

भारतीय संस्कृति में दान का महत्त्व है। दान की एक प्राचीन परंपरा हमारे देश में रही है। दान लेने तथा देने की परंपराएँ हमारे देश में उपलब्ध होती हैं। हम सामान्यत: देखते हैं कि वेदों में विभिन्न देवों की स्तुतियाँ हैं तथा वह विभिन्न देव-स्तुतियों से प्रसन्न होकर अपने-अपने भक्तों को दानों अथवा उपहारों से तृप्त करते हैं। देवों से अनेक प्रकार के दान मिलते हैं, भारत में गो-दान तथा महत्त्व अति प्राचीन काल से रहा है। कठोपनिषद् का गो-दान एक दार्शनिक पृष्ठ-भूमि में वर्णित है। इसके अतिरिक्त राजाओं के संदर्भ से गो-दान के संकेत यत्र-तत्र ऋग्वेद में मिलते हैं। ऋग्वेद में एक सूक्त धनान्नदानम् है। धनान्नदानम् (सूक्त) सांस्कृतिक परिवेश में है, जो अन्य-दान की महत्ता को सूचित करता है। अन्न-दान से शुभ आदि की प्राप्ति होती है। कूर्मपुराण में भी दान का वर्णन उपलब्ध होता है, जिसका संबंध धर्म और विविध देवों की पूजा तथा गृहस्थ की आहिक विधि से है।

मत्स्यपुराण के ७४वें अध्याय में महादान के अंतर्गत सोलह प्रकार के दानों का वर्णन किया गया है। वह तुलापुरुषदान हिरण्यगर्भ दान ब्रह्मांड दान, कल्पपाप दान, गोसहस्रक दान, हिरण्यकामधेनु दान, हिरण्याश्व दान हिरण्याश्वरथ दान, हेमहस्तिरथ दान, पंचलौहलंक दान, धरादान विश्वचक्र दान, कल्पलता दान, सप्त सागरक दान रत्नधेनु दान और महाद्भुतघट दान हैं। सहस्र गौओं का दान, एक स्वर्ण अश्व का दान, एक स्वर्ण हस्ति का दान, पाँच हलों के साथ पृथ्वी का दान तथा कतिपय अन्य दानों के वर्णन मत्स्यपुराण में उपलब्ध होते हैं। दान आत्म-संयम, त्याग-भाव, दया-भाव आदि को सूचित करता है। भारतीय संस्कृति में त्याग, बलिदान, दया आदि का मार्मिक विवेचन उपलब्ध होता है। इन भावों से परिचालित कर्मों के फलस्वरूप मनुष्य की आत्मा की शुद्धि होती है। इस शुद्धि से मनुष्य का ऐहिक तथा पारलौकिक दोनों जीवन सफल होते हैं। भारतीय संस्कृति की एक परम विशेषता यह है कि इसमें मानव-जीवन के लौकिक तथा आध्यात्मिक दोनों पक्षों की उन्नति पर बल दिया गया है। प्रकृत विषय के प्रतिपादन द्वारा पौराणिक संस्कृति पर एक संक्षिप्त प्रकाश डाला गया है।

डॉ. जाकिर हुसैन (सायं)
स्नातकोत्तर विद्यालय, दिल्ली
दूरभाष : ०९८७३३०४९७२

कविता

# बस यूँ ही

● सुनीता बहल

हमें तो मिल जाती है खुशी, बस यूँ ही
चिड़िया की चीं-चीं आवाज में,
नई सुबह की आगाज से।
हवाओं की अठखेलियों में,
पानी की बूँदें हों, जब हथेलियों पे।

हमें तो मिल जाती है खुशी, बस यूँ ही
फूलों की नई खिलती कलियों में,
जब बच्चे खेलें मस्ती में गलियों में।
पत्तों की सर-सर सरसराहट में,
बच्चों की भोली सी मुसकराहट में।

हमें तो मिल जाती है खुशी, बस यूँ ही
नीले आकाश की नीलिमा में,

घने बादलों की कालिमा में।
गगनचुंबी पहाड़ों की ऊँचाइयों में
पाताल तलाशती गहरी खाइयों में।

बस सोचने की बात है,
खुशी हरदम हमारे पास है।
अंतर्मन की आवाज को सुनो,
अपनी खुशियाँ खुद ही चुनो।

१६-वी, सेक्टर-२
रोहतक-१२४००१ (हरि.)
दूरभाष : ९९९१९९६६६७

# अवध में फागुन आयो रेऽऽऽ

● प्रतिमा अखिलेश

सुपरिचित रचनाकार। अब तक 'तुम हो तो···', 'चोर की ओर', 'आकाशकुसुम' *(काव्य-संग्रह)* तथा पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। दो काव्य-संग्रह शीघ्र प्रकाश्य। संप्रति वोल्गा वेलफेयर ऑर्गनाइजेशन, सिवनी की उपाध्यक्ष। 'साज सारंग अलंकरण', 'काव्य कुमुद सम्मान', 'कादंबरी सम्मान' प्राप्त।

राम के हाथों में है अबीर, देख हुई सीता अति अधीर,
हाय अब कैसे रखें धीर, अवध में फागुन आयो रेऽऽऽ!

महल में गूँजे हास-परिहास, उर्मिला के मन में उल्लास,
रँगी लछमन की पीली चीर, अवध में फागुन आयो रेऽऽऽ!

रँगे हैं वृक्ष-लता-उपवन अवधवासी के तन और मन,
रँगीला सरयू का भी नीर, अवध में फागुन आयो रेऽऽऽ!

भरतजी देख हुए हैं निहाल, मांडवी के मुख लाल गुलाल,
हृदय में चुभा प्रेम का तीर अवध में फागुन आयो रेऽऽऽ!

श्रुतकीर्ति में उड़ेले रंग चली पिचकारी भीगे अंग,
शत्रुघ्न का भी टूटा धीर अवध में फागुन आयो रेऽऽऽ!

कोई गाए फगुवा के गीत, हृदय में बसी रहे ये प्रीत,
माँएँ ले आईं मीठी खीर, अवध में फागुन आयो रेऽऽऽ!

बदरवा रंग बरसायो रे अवध में फागुन आयो रेऽऽऽ!
अवध में फागुन आयो रे!

### तुम मथुरा के मेघराज···

तुम मथुरा के मेघराज प्रिय, मैं कालिंदी नीर।
तुम निद्रित विस्मृति में भूले, उर-अनुरागी बातें।
हृदय सँजोता रहा उमंगें मधु मुकुलित सौगातें॥

तुम सम्राट्-विराट् सहेजे, मैं सपनों की पाती।
नील व्योम के ध्रुव योगी तुम,
मैं कंपित कृश बाती॥

भूल गए झूले, निकुंज के, भूले मेरी पीर।
तुम मथुरा के मेघराज प्रिय मैं कालिंदी नीर।

प्रेम अर्चना-प्रति विरक्ति का, कैसा ज्ञान बताना।
इस श्यामल भूतल वसुधा में,
प्राण तुम्हें ही माना॥

तुम बाँसुरिया से मुख मोड़े,
मुझमें तान समाई।
तुम्हें मिला तट हृदयोदधि का,
मैं मझधार कहाई।

पूछो पिघले हिम-शिखरों से
कैसे टूटा धीर?
तुम मथुरा के मेघराज प्रिय
मैं कालिंदी नीर।

अक्षय अविरल इच्छाओं का,
अंत कहाँ है बोलो।
मेरे एकाकीपन को मत
मौन भार से तौलो।

तुम मुक्तालोकित मणि मनहर,
मैं पुष्पों की माला।
तोड़ गए जिसका उर निर्मम,
मैं वह विरहिन बाला॥

निर्जन पथ, नीरव संध्या में
नीरस प्रणय-समीर।
तुम मथुरा के मेघराज प्रिय,
मैं कालिंदी नीर।

### मनवा फगुवा गाए रेऽऽऽ

कैसी ठगनी चली बयार
मेघ बरसाते नेह अपार
जहँ-तहँ रंगों की बौछार
दिन होली के आए रे
मनवा फगुवा गाए रे!

टूटन लागे बाजूबंद
महकता कैसा अंग-अंग,
पलाशी मौसम की हुड़दंग
दिन होली के आए रेऽऽऽ
मनवा फगुवा गाए रेऽऽऽ!

सलोनी छतनारी है साँझ
बजे ढोलक-मंजीरे झाँझ,
ये घड़ियाँ लूँ नैनों में आँज
दिन होली के आए रे,
मनवा फगुवा गाए रे!

मधुकर पी उड़ते मकरंद
अधरों पर कलियों के छंद,
छाया चहुँ ओर आनंद
दिन होली के आए रेऽऽऽ
मनवा फगुवा गाए रेऽऽऽ!

नदी का नीला-नीला नीर
मेघों ने मला हो जैसे अबीर,
माटी संग करे ठिठोली सीर
दिन होली के आए रेऽऽऽ
मनवा फगुवा गाए रेऽऽऽ!

४०/ख दादू मोहल्ला, संजय वार्ड
सिवनी-४८०६६१ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४०७८१४९७५

# लोकगीतों में राम का स्वरूप एवं आस्था

● तिलक राज शर्मा

संस्कृत-हिंदी के शिक्षक। बी.ए., एम.ए., बी.एड., एम.फिल., वर्तमान में हि.प्र. विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. अधीनस्थ 'शोध प्रबंध' के सफल प्रयास हेतु 'लोकगीतों में राम का स्वरूप एवं आस्था' विषय पर शोधरत।

लोकगीत भारतीय समाज के हृदय के स्वतंत्र उद्‌गार हैं। लोकगीतों में राम के स्वरूप का संबंध सामाजिक, धार्मिक, पारिवारिक मर्यादाओं पर परिभाषित होता है। राम के स्वरूप का संबंध भारतीयता की संस्कृति, सभ्यता एवं मानवीय आदर्शों की ऐतिहासिकता से जुड़ा है। राम के स्वरूप व आस्था का वर्णन केवल लोकगीतों में ही नहीं बल्कि राम का स्वरूप व आस्था भारतीय समाज से बाहरी समाज तक अपना विशद रूप धारण कर चुका है। अत: यह कहना आवश्यक है कि राम का स्वरूप व आस्था विश्वव्यापक है। राम के स्वरूप की व्याख्या विद्वानों एवं लेखकों ने अनेक रूपों में करते हुए संगीतात्मक एवं भक्त्यात्मक रूप से मुक्त कंठ द्वारा की है। लोकगीतों में राम के स्वरूप एवं आस्था की पूर्ण विविधता देखने योग्य है। राम लोकगीतों के स्वरूप ही नहीं बल्कि प्राणिमात्र के दिलों के स्वरूप भी हैं। भारतवर्ष विविध जातियों व वर्गों का देश है। सामाजिक व पारिवारिक व्यवस्था में हर वर्ग व जाति का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

हमीरपुर जनपद में कभी किसी धार्मिक समारोह में या व्रत, त्योहार-पर्वों के अवसर पर लोग अपनी वाणी द्वारा लोकगीतों के माध्यम से राम के स्वरूप को चरितार्थ करते हैं। लोग अपने मनोभावों के द्वारा मुक्त कंठ से गायन करके लोकगीतों में राम के स्वरूप को देखते हैं। डॉ. श्याम परमार के अनुसार, लोकगीतों में विज्ञान की तराश नहीं, मानव संस्कृति का सारल्य और व्यापक भावों का उभार है। भावों की लड़ियाँ लंबे-लंबे खेतों सी स्वच्छ, पेड़ों की नंगी डालों सी अनगढ़ और मिट्‌टी की भाँति सत्य हैं। लोकगीतों में सहजता, रसमयता, मधुरता आदि गुण रहते हैं। संक्रांति, मेलों, उत्सवों और अन्य पर्वों पर लोग अपने स्वरों में राम के स्वरूप व आस्था को लोकगीतों का रूप देते हैं। अनेकों प्रकार से लोकगीतों के द्वारा राम के स्वरूप को परिभाषित किया जाता है। जैसे कि शिशु के जन्म पर, नामकरण और मुंडन पर लोकगीतों के द्वारा राम के स्वरूप को दरशाया जाता है। शिशु के जन्म के कुछ दिन बाद शिशु को झूले में लिटा दिया जाता है और महिलाएँ गीत गाती हैं—

*'मेरे लला राम झूल-झूल, तेरी टोपी में लागे फूल।'*

लोकगीत ही मनुष्य को मानवता की प्रत्येक राह का मार्गदर्शन कराते हैं। प्राणिमात्र के अंदर छिपी हुई भावनाएँ एवं भक्तिदायक उद्‌गार, जो कभी भी बाहर आने के लिए मार्ग नहीं खोज पाते, लेकिन लोकगीतों के माध्यम से तथा मानसिक स्वर लहरियों के द्वारा सब भावनाएँ व उद्‌गार गीत के द्वारा अपना रास्ता बाहर आने के लिए खोज लेते हैं। लोकगीत राम का स्वरूप है और राम लोकगीत की आस्था बन चुके हैं। ईश्वर-सृजित सृष्टि का कोई ऐसा कोना नहीं, जगह नहीं, जहाँ गीत किसी-न-किसी रूप में विद्यमान न हों। जहाँ गीत-संगीत है, वहाँ लोक है। लोक और गीत का सृष्टि के आरंभ से पुनीत एवं अटूट संबंध है। लोक और गीत के माध्यम राम का स्वरूप व आस्था है। इसलिए तभी इसे लोकगीत कहा जाता है।

लोकगीतों में राम का स्वरूप व आस्था पहले ही निहित है। यही कारण है कि जीवन का कोई पक्ष अथवा आयोजन ऐसा नहीं है, जिसमें गीत स्वरों की भागीदारी न हो। गीत हमारे समूचे सांस्कृतिक जीवन की रीढ़ हैं। गीत-संगीत मानव की मुक्ति-गाथा का प्रथम प्रणव है। मानसिक तुष्टि, आत्मिक तृप्ति का पर्याय संगीत की सुख-सृष्टि की आधारभूमि है। मानव की तो बात क्या, हिंसक पशु भी संगीत स्वरों से वशीभूत हो जाते हैं । भैंस के समक्ष बीन और वीणा के सुमधुर तानों का कोई महत्त्व नहीं, लेकिन साँप और मृग तो बीन और वीणा के स्वराकर्षण से बँधे हुए मृत्यु को स्वीकार कर लेते हैं। अत: गीत-संगीत जीवन को गति देनेवाला, भूख के बाद का भोजन और थकान के बाद की नींद जैसा है। जब लय और गीत एक बिंदु पर मिल जाते हैं, तभी गीत का जन्म होता है।

हिमाचल प्रदेश भारतवर्ष के राज्यों में लोकगीतों के क्षेत्र में एक अग्रणी प्रदेश रहा है। यहाँ के प्रति धार्मिक आस्थाएँ जुड़ी हैं। हमीरपुर जनपद की तो बात क्या, राम तो जनमानस लोकगीतों के नायक एवं भारतीयों के धार्मिक आस्था के स्वरूप

हैं। धार्मिक आस्था के प्रति हम लोकगीतों के माध्यम से कोटि-कोटि नमन करते हैं, क्योंकि उनके आश्रय से जल-थल और नभलोक दृष्टिगोचर हो रहा है। लोकगीतों में राम भक्तों के अधीन है। जो थोड़े से ही राम को पाया जा सकता है, लेकिन उनको कुछ दिया नहीं जा सकता है। उनके बिना संसार में सच्चा सहाई कौन है। अत: श्रीराम सबके सखा, मित्र, माता व पिता हैं।

लोकगीत शास्त्रीय संगीत की पौधशाला हैं। लोग अपनी लोकगाथाओं एवं गीतों के द्वारा बस यही प्रार्थना करते हैं कि मेरा शुभ और अशुभ, लाभ-हानि, जय-पराजय, हे राम! तुम्हारे हाथों में है। हे प्रभु, जो उचित समझें, वही कीजिए। यह सबकुछ तो धार्मिक आस्था के द्वारा लोकगीतों में राम का स्वरूप परिभाषित होता है। शोध के अनुसार एवं लोगों के मौखिक साक्षात्कार व चर्चा से यह पाया गया है कि यह सिर आपके चरणों में झुका रहे, जिह्वा आपके गुणगान में लगी रहे, यह सब धार्मिक आस्था का प्रतीक और लोकगीतों में राम है। धार्मिक आस्था के चलते हमीरपुर जिले (हि.प्र.) में गाया जानेवाला लोकगीत प्रकार है—

'अधी-अधी राती रामा तेरी याद जे आई
सुतियाँ दी निंद्र गआई ओ मेरे राम!
देयाँ ओ देयाँ सीते तू सिरे दे सलुए
मीरा जेईया गुजरिया जो देणी ओ मेरे राम!
अधी-अधी राती रामा तेरी याद जे आई,
मरी धरी जावे मीरा जेई गुजरी
घर विच झगड़ा पुआया ओ मेरे राम!
अधी-अधी राती रामा तेरी याद जे आई।'

लोकगीतों में राम के स्वरूप की धार्मिक आस्था छिपी है। लोकगीत हमारी अपनी सामाजिक संपत्ति हैं। इन लोकगीतों के द्वारा समाज की नवचेतना जीवंत रहती है। लेकिन इन दिनों लोकगीतों को गाने की परंपरा खत्म होती जा रही है, क्योंकि वर्तमान समय में समाज और परिवारों में बिखराव आ गया है। लोकगीतों को गानेवालों का क्रमश: दिन-प्रतिदिन अभाव होता जा रहा है, लेकिन फिर भी लोकगीतों में राम का स्वरूप धार्मिक आस्था के द्वारा देखने को मिलता है। किसी-न-किसी रूप में राम के स्वरूप को परिभाषित करती हुई जगह अगर कहीं है तो वह लोकगीतों में ही है। आज भी गाँवों की स्त्रियाँ चलते-फिरते, उठते-बैठते गाती रहती हैं—

*'मेरा राम जपण नू दिल करदा*
*पर घर दा धंधा नहीं मुकदा*
*मेरा राम जपण नू दिल करदा!'*

इस प्रकार से अनेकों धार्मिक आस्था के लोकगीत हमीरपुर जनपद में गाए जाते हैं, जिनमें राम के स्वरूप के प्रति आस्था झलकती है। लोकगीतों में राम के स्वरूप व आस्था की परंपरा युग-युगांतर व प्राचीन तथा अति विस्तृत है।

गाँव-कैहरवीं, डाक-बलोह, तहसील-भोरंज,
जिला-हमीरपुर-१७७०२९ (हि.प्र.)
दूरभाष : ०९४१८०४८२५३

## सुधी पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक अथवा बैंक-ड्राफ्ट साहित्य अमृत के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. १११०७३४३९३ अथवा CBIN ०२८०२९७ में साहित्य अमृत के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- पत्रिका न मिलने पर १५ से २० तारीख तक सूचित कर दें, ताकि वह अंक नए अंक के साथ भेजा जा सके।
- आपको अगर साहित्य अमृत का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया कार्यालय दिवस में २ से ५ बजे तक फोन नं. ०११-२३२५७५५५, २३२७६३१६ अथवा **sahityaamrit@gmail.com** पर इ-मेल करें।

बाल-कहानी

# बिन दिमाग

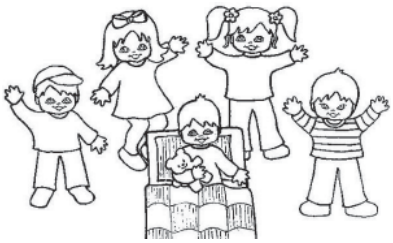

● कोमल वाधवानी 'प्रेरणा'

कुत्तों का चीखना-चिल्लाना और भौंकना सुनकर सभी लोग घरों से बाहर आ गए। कुछ अपनी बालकनी से झाँकने लगे। देखा तो मोहल्ले में कुत्ते पकड़नेवाली गाड़ी आई हुई थी। अवश्य ही किसी ने इन कुत्तों की शिकायत की होगी। सबकी नजरें अपने-अपने परिचित कुत्तों को ढूँढ़ रही थीं, हालाँकि वे उनके पालतू नहीं, गली के ही कुत्ते थे।

कोई कह रहा था, ''अरे! व्हाइटी नजर नहीं आ रही।''

''कालू भी कहीं दिख नहीं रहा है।'' चिंतित देसाई आंटी की आवाज आई।

मुझे अचानक चार-पाँच वर्ष पूर्व की घटना याद आ गई। नगर में माननीया राष्ट्रपतिजी के आगमन की खबर से लोग खुश हो रहे थे, क्योंकि इस वजह से हमारे मोहल्ले की टूटी-फूटी सड़कें नई-नवेली हो चमचमाने लगी थीं। इस बीच एक दिन अचानक नगर-निगम की गाड़ी ने इस इलाके के कुत्तों की धर-पकड़ शुरू कर दी।

यह देखकर पड़ोस के बच्चे घबराने लगे कि कहीं हमारे पिल्लों को भी यह गाड़ी पकड़कर न ले जाए। डरे-सहमे सभी बच्चे पार्षद के पास पहुँचे। पार्षद ने भी जानवरों के प्रति बच्चों का प्रेम देखा तो नियम बताया, ''उन पालतू कुत्तों को नहीं पकड़ा जाता है, जिनके गले में पट्टा बँधा होता है, पर तुम्हारे पिल्लों के गले में तो पट्टे नहीं हैं।''

बच्चों ने अपनी बहनों की बेल्ट, रिबन और हेयरबैंड पिल्लों के गले में पहनाए और निश्चिंत होकर स्कूल जाने लगे। उन्हें क्या पता था कि पिल्लों को इन पट्टों की आदत नहीं है और वे प्रयास कर-करके एक-दूसरे के बंधन नोंच डालेंगे। एक दिन नगर निगम की गाड़ी पिल्लों को पकड़कर ले गई।

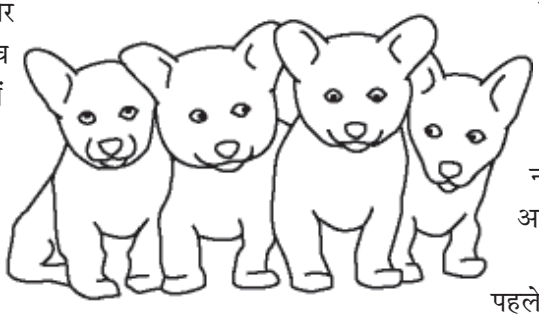

स्कूल से लौटने के बाद सारे बच्चे बहुत उदास हो गए। बिना पिल्लों के मोहल्ला साँय-साँय कर रहा था। सब बहुत गुस्से में थे। भला यह भी कोई बात हुई कि पिल्लों को सदा के लिए खोना पड़ गया!

''गाड़ी के अंदर पकड़कर डाला गया कुत्ता जरूर बिन दिमाग होगा।'' इतने में बबली की जोर की आवाज सुनाई दी तो मैं वर्तमान में लौट आई।

'बिन दिमाग...।' शर्ली ने कँपकँपाती ठंड में चार पिल्लों को जन्म दिया था। बच्चों की टोली यह देख चिंतित हो उठी कि इतनी ठंड में ये बच्चे कैसे रहेंगे। अपने-अपने घरों से पुराने कपड़े व बोरियाँ जुटाकर वे उनके बिछौने तैयार करने लग गए। फिर उनकी देखभाल में जुट गए।

जनम से ही दृष्टिहीनता की शिकार सुपरिचित वरिष्ठ लिखिका। लघुकथा, कविता, संस्मरण आदि की पाँच पुस्तकें, कुछ साझा संकलन तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में तीन सौ से ज्यादा रचनाएँ प्रकाशित। छोटे-बड़े आधा दर्जन से अधिक सम्मान प्राप्त। साहित्य मंडल, श्रीनाथद्वारा से सम्मानित। संप्रति सतत लेखन में रत।

सर्द हवाओं में कपड़े उड़ने लगे तो उन्होंने सोचा, क्यों न पिल्लों के लिए घर बनाया जाए। बच्चों ने आस-पास के बँगलों के कंपाउंड में बेकार पड़ी ईंटें जुटाकर घर बना दिया।

मजे की बात यह थी कि उन पिल्लों का नामकरण-संस्कार भी बच्चों ने बड़े जोर-शोर से किया था। एक हृष्ट-पुष्ट काले पिल्ले का नाम 'कालू पहलवान' रखा गया, सफेद का 'व्हाइटी'। एक प्यारे से पिल्ले का नाम 'किशमिश' और एक भूरे रंग के पिल्ले का नाम 'बिन दिमाग'।

सभी नामों को सुनकर मैंने अपनी खुशी जाहिर की। साथ ही एक नाम पर विरोध जताते हुए कहा था, ''बिन दिमाग, यह कैसा नाम है? जरूर तुमने अपने दिमाग पर जोर नहीं दिया होगा।''

निशू ने कहा, ''नहीं मम्मा, यह है ही बिन दिमाग। इसका बिस्तर लगाओ तो सोता नहीं, बल्कि अपने मुँह से उसे चबाता रहता है।''

उमंग बताने लगा, ''हमारे बनाए घर में जब इसे जाने को कहते हैं तो जाता ही नहीं। जबरदस्ती घुसाओ तो चिल्लाता है। इसे तो सर्दी में रहना पसंद है, परंतु हमारे मेहनत से बनाए घर में नहीं।''

''इसीलिए तो हमने सर्वसम्मति से इसका नाम भोंदू की जगह 'बिन दिमाग' रख दिया।'' आकाश भी बताने में पीछे क्यों रहता।

देखते-ही-देखते सभी पिल्ले बड़े हो गए। पहले जो गली की रौनक थे, अब आने-जानेवालों के लिए मुसीबत बन गए। जैसे ही सड़क से मोटर साइकिल या कारें निकलतीं, ये सब मिलकर भौंकने लगते। इतना ही नहीं, दौड़-दौड़कर उनका पीछा भी करते। एक-दो बार तो स्कूटी पर बैठी एक महिला की साड़ी पकड़ ली। घबराकर वह इतनी जोर से चीखी कि आसपास के लोग बाहर निकल आए और कुत्तों को डाँटने लगे। महिला इतनी दहशत में आ गई कि रोने लगी। अब वाहन चालक कुत्तों के भौंकने और पीछा करने के कारण स्पीड बढ़ाकर अपना पीछा छुड़ाने लगे थे।

एक बार एक मोटरसाइकिल सवार ने हिम्मत की और कुत्तों से बचकर आकाश के घर की कॉलबेल बजा दी, ''अपने इन खूँखार कुत्तों को आप बाँधकर क्यों नहीं रखते? आए दिन हमारा पीछा करते हैं। हमारा तो यही रास्ता है। किसी दिन एक्सीडेंट हो गया तो?''

''भैया, ये हमारे पालतू नहीं कि बाँधकर रखें। ये सब तो गली के कुत्ते हैं। हम क्या करें?'' आकाश की मम्मी ने पल्ला झाड़ते हुए कहा था।

हो सकता है, उसी व्यक्ति ने शिकायत दर्ज करवाई हो। कुत्ते पकड़नेवाली गाड़ी इसी कारण आई हो।

इतने में विश्वकर्मा अंकल की बालकनी से आती कूँऽऽऽकूँऽऽ की आवाज सुनकर सब उस ओर देखने लगे।

''अरे! यह तो बिन दिमाग है, यह तो बड़ा दिमागवाला निकला। इतनी सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर आकर कैसा छिपा बैठा है। जरूर इसका नाम रखनेवाला 'बिन दिमाग' होगा।'' विश्वकर्मा आंटी ने कहा और नामकरण-संस्कार करनेवाली बाल मंडली की ओर व्यंग्य से देखने लगीं। निशू, आकाश और उमंग तीनों शरमाकर वहाँ से भाग लिये।

'शिवनंदन', ५९५ वैशाली नगर
उज्जैन-४५६०१०
दूरभाष : ०९४०६८८६६११

# पैसे का डिब्बा

लघुकथा

● जय किशोर बरेरिया

लक्ष्मी जरा देर आराम करने के लिए अपने बिस्तर पर लेटी ही थी कि तभी उसका छह वर्षीय पौत्र अमूल्य उसके पास आया और उससे पड़ोस की दुकान से चॉकलेट दिलवाने का अनुरोध करने लगा। अमूल्य के पापा बैंक में अफसर हैं। वह अपनी ड्यूटी पर गए थे और अमूल्य की मम्मी अपनी किसी सहेली के साथ शॉपिंग करने बाजार गई थी। बहुत दिनों के बाद उसने अपनी दादी से चॉकलेट के लिए कहा था। वह तुरंत उठी। एक छोटी अलमारी के ऊपर रखा प्लास्टिक का डिब्बा उठाकर बोली, ''मेरी सारी जमा-पूँजी इसी में है। देखती हूँ, इसमें कितने रुपए बचे हैं।''

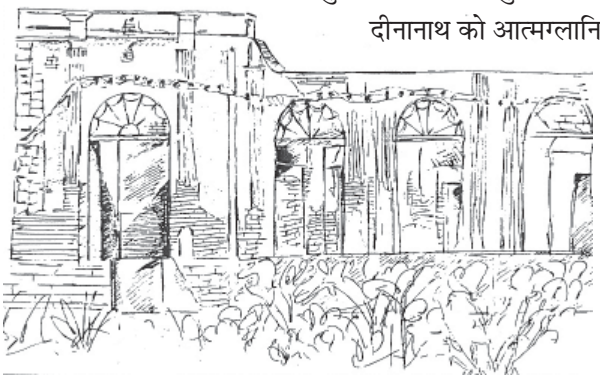

उसने डिब्बा खोला तो उसमें सिर्फ पाँच रुपए का एक सिक्का नजर आया। लक्ष्मी ने अमूल्य को डिब्बा दिखाते हुए कहा, ''मेरे पास अभी और पैसे नहीं हैं। तुम अभी इससे छोटी सी चॉकलेट ले लो। कुछ दिनों के बाद जब मेरे पास ज्यादा रुपए हो जाएँगे तब मैं तुम्हें बढ़िया चॉकलेट खिलाऊँगी।''

अमूल्य पड़ोस की दुकान से चॉकलेट लेने चला गया और लक्ष्मी चिंतामग्न हो गई। शादी-ब्याह, व्रत-त्योहार के अलावा कितने ही ऐसे अवसर आते हैं, जब व्यक्ति अपनी सामर्थ्य और इच्छानुसार खर्च करना चाहता है। शायद यही सोचकर, उसके पति लक्ष्मी के लिए प्लास्टिक के उस डिब्बे में हमेशा कुछ रुपए रख देते थे। पति की दी हुई रकम आज पूरी तरह समाप्त हो गई। पति के गुजर जाने के बाद घर की सारी आवश्यक वस्तुएँ बेटा-बहू खरीद लाते। कभी उनके व्यस्त होने पर कुछ चीजों के लिए बहू लक्ष्मी को रुपए देती और वह सामान लाकर बची रकम बहू को वापस कर देती। वह अब अपने खर्च के लिए पैसे कहाँ से लाएगी। जिस पति पर उसका पूरा अधिकार था, उससे ही कुछ विशेष खर्चों के लिए रुपए माँगने में उसे संकोच होता था। अब बेटे-बहू के आगे हाथ कैसे फैला सकती थी। उसे एक विचार आया। अपनी कोई अँगूठी या कान की बाली बेच दे और मोहल्ले के रामशरण की मदद से विधवा पेंशन की कोशिश करे। उसे इस काम के लिए अच्छी-खासी कमीशन देनी पड़ेगी। वह क्या करे, कुछ तय नहीं कर पाई।

रात में अमूल्य ने दादी की बात बताते हुए अपने पापा से पूछा, ''दादी को पैसे कब मिलेंगे?''

अमूल्य के पापा दीनानाथ ने कुछ सोच-विचारकर कह दिया, ''तुम्हारी दादी को बहुत जल्दी रुपए मिल जाएँगे बेटा।''

दीनानाथ को आत्मग्लानि हुई। उसने माँ की निजी आवश्यकताओं की ओर कभी ध्यान ही नहीं दिया था। वह समय गया था कि उसकी माँ रामशरण को कमीशन देने के लिए अपना कोई गहना बेचेगी और इस भीषण गरमी में इधर-उधर भटकती फिरेगी। जान-पहचानवालों को पता चलेगा तो सब उसका मजाक उड़ाएँगे।

सुबह अमूल्य के स्कूल जाने के बाद दीनानाथ माँ के पास आया और कहने लगा, ''माँ, मुझसे बड़ी भूल हो गई। मैंने इस बारे में कभी सोचा ही नहीं कि औरों की तरह तुम्हें भी अपनी मरजी से कुछ खर्च करने की चाहत होगी।'' उसने प्लास्टिक का खाली डिब्बा खोलकर उसमें कुछ रुपए रखते हुए कहा, ''माँ, अब तुम्हारा यह डिब्बा कभी खाली नहीं रहेगा। तुम्हें रामशरण के साथ कहीं जाने की जरूरत नहीं है। मेरी भूल के लिए मुझे माफ कर दो माँ।''

दीनानाथ के साथ लक्ष्मी की आँखें भी भर आई थीं।

दरीबा बाज बहादुर लेन, दियरा, पटना-८००००८
दूरभाष : ०८५४४२४००६८

## पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक पढ़ा। संपादकीय खूब पसंद आया। यात्रा-आलेख 'लंदन में भारत की खुशबू', 'फिजी में रामायण मेला' खूब पसंद आए। कहानियाँ 'काल-दंश', 'एक सच्ची-मुच्ची की प्रेम कहानी' और 'मृग-तृष्णा' अच्छी लगीं। कविताएँ और बाल संसार की कहानी भी खूब रोचक लगी। मुखपृष्ठ पर सरस्वती माँ का चित्र अति आकर्षक लगा।

***—बद्री प्रसाद वर्मा 'अनजान', गोरखपुर***

'साहित्य अमृत' का जनवरी अंक 'लघुकथा विशेषांक' अनगिनत लघुकथाओं से सुसज्जित पुष्पगुच्छ पाठकों की कथा-पिपासा को तृप्त करने में अपनी शत-प्रतिशत कर्तव्य भूमिका निभा गया। श्री वृंदावनलाल वर्मा की कहानी 'पहले कौन' दमदार राजनैतिक सशक्त वर्णन के साथ प्रारंभ हुई। संतोष सुपेकर की 'टिप' हलकी-फुलकी कथागोई पर विराम लगाकर जीवन-जहान की अनछुई घटनाओं को कथा के माध्यम से रोचक तथा पठनीय बना गई। प्रशसंनीय अंक के लिए संपादकीय विभाग धन्यवाद का अधिकारी है। साथ ही अन्य लेखकों ने लघुकथा की पृष्ठभूमि को विभिन्न कोणों से प्रकाशित कर साहित्य जानने में अच्छा सहयोग दिया।

***—रजनी सिंह, डिबाई (उ.प्र.)***

'साहित्य अमृत' का 'लघुकथा विशेषांक' प्राप्त हुआ। लघुकथा से संबंधित संपूर्ण जानकारियों से परिपूर्ण अपने ढंग के अकेले इस अंक को यदि लघुकथा का विश्वकोश कहा जाए तो अत्युक्ति नहीं होगी। संकलित आलेख एवं लघुकथाएँ अत्यंत उत्कृष्ट हैं।

***—श्रीकृष्ण कुमार त्रिवेदी, फतेहपुर (उ.प्र.)***

'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक प्राप्त हुआ। श्री जगदीश खरे 'जीवमित्र' का बाबू वृंदावनलाल वर्मा पर प्रस्तुत अत्यंत बेहतरीन लेख आज के वोट युग और जातिवाद के माहौल में अत्यंत सटीक है। वर्माजी जैसे विद्वान् ने उर्दूयुग पूर्व इस स्थिति को ध्यान में रखकर लेखन किया और जातिगत सौहार्द को सम्मान दिया। देशवासियों और प्रादेशिक सरकारों को पाठ लेना अभीष्ट होगा।

***—अशोक ननचाहल, नई दिल्ली***

'साहित्य अमृत' का 'लघुकथा विशेषांक' प्राप्त हुआ। इसमें जो अच्छा लगा, वह हैं प्राचीन लघुकथाएँ। हम प्राचीन कथाकारों, साहित्यकारों को न भूलें। प्रतिस्मृति में वृंदावनलालजी की लघुकथाएँ 'पहले कौन?', 'लुटेरे का विवेक' व 'इंद्र का अचूक हथियार' पढ़ीं। यह कभी पहले पढ़ने को नहीं मिलीं। लघुकथा के विषय में जो आलेख दिए हैं, सभी पढ़ने योग्य हैं और ज्ञानवर्धक भी। वैसे लघुकथाएँ लगभग सभी अच्छी हैं। अलग-अलग समस्यायों के बारे में हैं।

फरवरी अंक भी प्राप्त हुआ। प्रकाश मनु का आलेख 'शब्दों की भाव-समाधि जैसी हैं स्वामी विवेकानंद की कविताएँ' बहुत अच्छा लगा। बाबू वृंदावनलाल वर्मा की पुण्यतिथि पर जगदीश खरे 'जीवमित्र' का विशेष आलेख पढ़ा। संपादकीय हमेशा की तरह बहुत विस्तार से लिखा जाता है, जिसमें पूरे माह के साहित्यिक, राजनीतिक, सामाजिक, सभी समाचार आ जाते हैं। श्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदीजी वयोवृद्ध हैं, फिर भी बहुत परिश्रम से लिखते हैं।

***—विनोद शंकर गुप्त, हिसार (हरि.)***

'साहित्य अमृत' का जनवरी 'लघुकथा विशेषांक' मिला। वास्तव में यह अंक शानदार और जानदार है। इस अंक की जितनी भी प्रशंसा की जाए, कम होगी। साहित्य अमृत का समय-समय पर विशेषांक निकालकर पत्रिका में चार चाँद लगाने का कार्य संपादक महोदय एवं इनके सहयोगीगण कर रहे हैं। संपादकीय में 'विमुद्रीकरण और संसद् का शीतकालीन सत्र' शीर्षक से पाठकों का ध्यान नोटबंदी और इससे पड़नेवाले प्रभाव की तरफ आकृष्ट कराया है। इस अंक में दिवंगत लघुकथाकारों की लघुकथाएँ, समकालीन लघुकथाकारों की लघुकथाएँ, नए लेखकों की लघुकथाएँ सहित लघुकथा पर सारगर्भित आलेख प्रस्तुत कर साहित्य की दुनिया में इस पत्रिका ने अलग मुकाम हासिल किया है। अन्य भाषाओं में प्रकाशित लघुकथाओं का हिंदी अनुवाद इस अंक को और भी समृद्ध बनाता है। सभी स्थायी स्तंभों सहित अन्य रचनाएँ भी पठनीय एवं संग्रहणीय हैं।

***—शंभूशरण 'सत्यार्थी', औरंगाबाद (बिहार)***

'साहित्य अमृत' का जनवरी लघुकथा विशेषांक प्राप्त हुआ। इसमें 'नवांकुर' रचनाओं के अंतर्गत मेरी लघुकथा 'श्राद्ध' को भी स्थान दिया गया। लघुकथाओं के इस महा अंक की सुदृढता और भव्यता का आभास तो पत्रिका को एक नजर देखने भर से ही हो जाता है कि इसे संकलित करने में संकलन से जुड़े गुणीजनों ने कितना सतत प्रयास किया होगा। विमुद्रीकरण और राष्ट्रगान के गंभीर मुद्दे को छूता संपादकीय बहुत कुछ कह जाता है। लघुकथा के इस महाविशेषांक में प्राचीन लघुकथाएँ और प्रतिस्मृति में प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद और वृंदावनलाल वर्माजी जैसी विभूतियों की रचनाएँ सहज ही मन को हर्षित कर जाती हैं। पुरुषोत्तम दुबे का 'हिंदी लघुकथा में राष्ट्रीय चेतना', अशोक भाटिया का 'समकालीन हिंदी लघुकथा-पारिवारिक संदर्भ' एवं बलराम अग्रवाल का 'पहली हिंदी लघुकथा···' आलेख निस्संदेह पत्रिका को एक 'शोध-ग्रंथ' सी ज्ञान आभा प्रदान करते नजर आते हैं। समकालीन लघुकथाकारों में लगभग ४१ गुणीजन रचनाकारों की रचनाएँ पत्रिका को संग्रहणीय बना रही हैं। माधव नागदाजी की 'मुझे जिंदगी देनेवाले' और घनश्याम अग्रवालजी की 'तेरा नाम क्या है' जैसी लघुकथा के पर्याय बन चुके नामों की लघुकथाएँ भी हैं तो भागीरथीजी की 'मैरिज एनिवर्सरी' और सुरेश साहनी 'लाफिंग क्लब' जैसे गंभीर साहित्यकारों की रचनाएँ भी हैं। हालाँकि कुछ ऐसे गुणीजन रचनाकार छूटते नजर भी आए, जिनका साहित्य-जगत् में एक अलग ही मुकाम है। साहित्य के भारतीय परिपार्श्व के अंतर्गत लगभग १२ भाषाओं में हिंदी में

अनूदित लघुकथाएँ सहज ही पूरे भारत के साहित्यकारों की सोच को सामने ले आती हैं। साहित्य-जगत् में निरंतर टिमटिमाने वाले कुछ दिवंगत लघुकथाकारों की रचनाएँ उनको याद कर भावुक करने के लिए काफी थीं, चाहे वे सुरेश शर्माजी और विक्रम सोनीजी की रचना हों या फिर कालीचरण प्रेमीजी की रचना 'तवा' हो। इसके अतिरिक्त पत्रिका में साहित्य के क्षेत्र में अपनी पहचान बनाने को उत्सुक नए रचनाकारों के प्रयास का एक साक्षात् उदाहरण है, जिन्हें आदरणीय बलरामजी ने अपनी तीक्ष्ण दृष्टि से ढूँढ़ निकाला है। इन्हीं में से कई गुणीजन लघुकथाकारों की रचना सहज ही ध्यान खींचती हैं, विशेष तौर पर कमल कपूरजी की 'हँसी-खुशी', नीलिमाजी की 'मैरिज मैटीरियल', सुधीर द्विवेदीजी की 'इंतजाम' और ज्योत्स्ना कपिलजी की 'दंश'। सच में अगर देखा जाए तो पत्रिका का यह अंक न केवल किसी भी संकलन से अधिक आकर्षक है, वरन् आर्थिक और साहित्यिक दृष्टि से भी हिंदी के पाठकों के लिए अनमोल उपहार बन पड़ा है।

***—विरेंदर 'वीर' मेहता, दिल्ली***

'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक मिला। पूरा पढ़ गया। यों तो सभी रचनाएँ रोचक और स्तरीय हैं, किंतु कुछ आलेख मेरे लिए विशिष्ट हो गए। 'निराला' का यह 'भिक्षुक' कौन है?' की छानबीन में भारत यायावर ने पूरी साहित्यिक पृष्ठभूमि को खँगाला है और पूरा ऐतिहासिक साक्ष्य प्रस्तुत किया है। जिस शैली से संदीप जोशी ने अनुपम मिश्रजी का स्मरण किया है और उनके व्यक्तित्व का उद्घाटन किया है, वह अभिभूत करनेवाला है। वे सच्चे गांधीवादी थे। बाबू वृंदावनलाल वर्मा के कथा-साहित्य की चर्चा और सोदाहरण विश्लेषण एकदम सामयिक है। राजेश सहाय की कहानी 'मृग-तृष्णा' बहुत मर्मस्पर्शी है।

***—ओम् प्रकाश शर्मा 'प्रकाश', नई दिल्ली***

'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक मिला। सभी रचनाएँ स्तरीय हैं, लेकिन कथा-साहित्य अन्य विधाओं से बाजी मार गया। ऋता शुक्लजी की कहानी 'काल-दंश' एक ज्ञान-विभव से संपन्न परिवार में जन्मे राजीव लोचन का चरित्र-चित्रण वास्तव में आशावादी दृष्टिकोण का एक मनोहारी दृश्य उत्पन्न करती है। सुभाष चंदरजी की 'एक सच्ची-मुच्ची की प्रेम कहानी' आधुनिक प्रेम-संबंधों की एक 'सच्ची' वास्तविकता की अभिव्यक्ति लगी। सुभाषजी वास्तव में व्यंग्य विनोद के सिरमौर हैं। वंदना मुकेशजी की कहानी 'गॉड ब्लैस यू···' अकेलेपन की यंत्रणा और प्यार की प्यास का सुंदर ढंग से संप्रेषण लगा। राजेश सहाय कृत 'मृग-तृष्णा' शहर और गाँव जीवन का समानांतर चित्रण लेखक के गहरे अनुभव और मानवीय संबंधों की एक ताजी कहानी लगी। संपादकजी की चयन कुशलता ने पत्रिका को शीर्ष स्थान पर पहुँचाया है।

***—बी.डी. बजाज, दिल्ली***

'साहित्य अमृत' का 'लघुकथा विशेषांक' प्राप्त हुआ। विशेषांक का मुखपृष्ठ देखते ही मन ने मन से कहा, 'तितली की तरह लघुकथा रूपी खिले पुष्पों के रंग-रूप-रस-गंध का रसास्वाद करना है।' प्राचीन लघुकथा से लेकर सन् २०१६ के अंतिम माह तक के लेखे-जोखे से तो लघुकथा की अपने आप में कुंडली ही तैयार हो गई है। आलेखों में तो मानो इस कुंडली का फलित ब्योरा ही है। प्राचीन लघुकथाओं में सन् १९९१ की ब्रजभाषा लघुकथा (रूपांतरण बलराम अग्रवाल) का उल्लेख है। अर्थात् आज की लघुकथा की कुंडली में उसके पिछले जन्मों की प्रामाणिक जानकारी है कि वह कब (काल), कहाँ (देश), किस चोले (भाषा) में जन्म ले चुकी थी। अद्‌भुत! प्रतिस्मृति, स्मरण, दिवंगत लघुकथाकारों की लघुकथाएँ, आलेख, समकालीन लघुकथाकार, साहित्य का भारतीय परिपार्श्व, साहित्य का विश्व परिपार्श्व, नवांकुर तक आद्योपांत सबकुछ एक ही विशेषांक में प्रस्तुत करना पी-एच.डी. समतुल्य श्रमसाध्य सफल कार्य है।

***—आशागंगा प्रमोद शिरढोकर, उज्जैन***

'साहित्य अमृत' का 'लघुकथा विशेषांक' सही समय पर मिला। इसमें एक विशिष्ट रस, गंध, स्पर्श और भाव का आस्वादन हुआ। पत्रिका का यह प्रयास इस विधा के लिए मील का पत्थर सिद्ध होगा। इस पत्रिका का लघुकथा विशेषांक निकालना बहुत ही सम्मानीय और रचनात्मक प्रतिभाओं का विस्फोट है। संपादकीय में विमुद्रीकरण और नोटबंदी की बहुत ही सुंदर स्क्रिप्ट लिखी है। विशेषांक में एक तरफ प्राचीन, आधुनिक लघुकथाएँ और इसके इतिहास, गुण-धर्म और स्वरूप की गहन चर्चा करते आलेख हैं तो दूसरी तरफ नवोदित लघुकथाकारों की श्रेष्ठतम अभिव्यक्ति, विदेशी लघुकथाओं का संयोजन और श्रेष्ठ आलोचकों, कहानीकारों के विचार इस अंक को बहुमूल्य और संग्रहणीय बनाते हैं। भारत की अन्य भाषाओं से लघुकथाओं का संकलन इसकी रचनात्मकता और सांस्कृतिक उपादेयता को चार चाँद लगा देता है।

***—अशोक बैरागी, कैथल (हरियाणा)***

'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका की सब कहानियाँ पढ़ीं। ज्ञानवर्धक, शिक्षाप्रद एवं अंधकार से रोशनी में ले जानेवाली कहानियाँ हैं। भिलाई से शकुंतला शर्मा की बाल कहानी 'वसंत पंचमी' गरीब बच्चों में आत्मबल पैदा करती है। आर्थिक अभाव से जूझनेवाले बच्चों में प्रोत्साहन भरती है। वंदना मुकेश की 'गॉड ब्लैस यू···' ने भी अकेलेपन से जूझनेवाले लोगों में उत्साह पैदा किया है।

***—पं. रामधारी कौशिक 'पारस', नई दिल्ली***

'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक प्राप्त हुआ। इस अंक में मालती शर्मा का 'घी के बिना होम-हवन नहीं, बेटी के बिना संसार नहीं' लंबे शीर्षक वाला छोटे कलेवर का लेख है। बेटियाँ आज जीवन के हर क्षेत्र में बुलंदियों पर पहुँच रही हैं। बेटी के बिना सृष्टि का चल पाना ही असंभव है।

***—केदारनाथ 'सविता', मीरजापुर (उ.प्र.)***

# वर्ग पहेली (१३८)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान–विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा–

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ मार्च, २०१७ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम–पते मई २०१७ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

# वर्ग पहेली (१३६) का शुद्ध हल

| | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १क | २र | त | ३ब | ■ | ४ना | ५का | ६बि | ल |
| ७ले | ट | ■ | ८द | म | न | शी | ल | ■ |
| जा | ■ | ९ना | च | ■ | क | ■ | १०ख | ११न |
| १२द | श | म | ल | व | ■ | १३अ | ना | ज |
| ह | ■ | १४दा | नी | ■ | १५ख | स | ■ | रों |
| १६ल | १७ह | र | ■ | १८बा | री | बा | री | से |
| १९ना | र | ■ | २०ख | ■ | २१द | ब | ■ | गि |
| ■ | २२सा | २३ह | ब | जा | दा | ■ | २४भा | र |
| २५त | ल | वा | र | ■ | २६र | स | भी | ना |

## ★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री नलिन कुमार श्रीवास्तव**
वार्ड नं. ३७, दिग्विजय वार्ड,
ब्राह्मणपारा
राजनाँदगाँव-४९१४४१ (छ.ग.)

२. **डॉ. ए. श्रीनिवासन**
राजभाषा अधिकारी
मदुरै मंडल, दक्षिण रेलवे
मदुरै-६२५०१६ (तमिलनाडु)

***पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई !***

**वर्ग-पहेली १३६ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—** सर्वश्री विजयपाल सेहलंगिया, ब्रह्मानंद 'खिच्ची' (महेंद्रगढ़), फकीरचंद ढुल (कैथल), सी.आर. नाहड़िया (नारनौल), आशागंगा प्रमोद शिरढोणकर (उज्जैन), राजेश्वर प्रसाद मिश्र (जबलपुर), ओमप्रकाश गोयल (शिवपुरी), प्रणीता सिंह (भोपाल), ओमप्रकाश चौधरी (नीमच), राजा चौरसिया (कटनी), सरिता दशोत्तर (रतलाम), आरती शैलेश सुभेदार (बेलगाम), माणक तुलसीराम गौड़, मधुरानी (बेंगलुरु), राजेंद्र कुमार टेलर (सीकर), रुक्मणी संगल (पटियाला), संतोष शर्मा (गाजियाबाद), मिथिलेश कुमारी (कन्नौज), ओमप्रकाश गुप्त (मुरादाबाद), सुमन निगम (कानपुर), ओमकार नाथ मिश्र (लखनऊ), सुशील कुमार सिंहल (पिलखुआ), गिरधारीलाल अग्रवाल (यवतमाल), पुखराज वार्ष्णेय, बी.डी. बजाज, दिनकर सहल, मुकेश जैन 'पारस', राजेंद्र कुमार सिंह, निशी श्रीवास्तव, सुभाष शर्मा, निर्मला गुजराती (दिल्ली), विश्वनाथ चटर्जी (नागपुर), देवकीनंदन कांडपाल (अल्मोड़ा), मोहन उपाध्याय (अजमेर), सुनीता वर्मा (भिलाई)।

**बाएँ से दाएँ—**

१. पुंसत्वहीन (४)
४. पथिक (४)
७. धूल (२)
८. खड़ाऊँ (३)
१०. गुलाम (२)
११. खिलाफ (५)
१३. ओढ़ना (३)
१५. मंत्र पढ़कर घी आदि अग्नि में डालने का कृत्य (३)
१७. सीने का काम (३)
१८. कठिन विपत्ति (३)
१९. अतिरिक्त (३)
२१. स्वाद (३)
२३. वह जो अन्य मनुष्यों में श्रेष्ठ हो (५)
२६. यंत्र (२)
२८. बंदगी, प्रणाम (३)
२९. दुर्ग का प्रवेश स्थल (२)
३०. ठंडाई (४)
३१. कोशिश में लगा हुआ (४)

**ऊपर से नीचे—**

१. देवता की पूजा के निमित्त की जानेवाली मनुष्य की हत्या (४)
२. समूह (२)
३. रुई का पौधा (३)
४. पड़ाव, डेरा (३)
५. मोहित (२)
६. शुष्क (४)
९. स्तनपायी जीवों से दूध निचोड़ने की क्रिया (३)
११. स्वयं को बहुत विद्वान् समझनेवाला साधारण व्यक्ति (५)
१२. वह महसूल, जो पटरी पर सौदा बेचनेवालों से लिया जाता है (५)
१४. प्राप्ति (३)
१६. घेरा (३)
१९. भूखमरी (४)
२०. तनहा (३)
२२. अवधि (४)
२४. रस का भाव (३)
२५. वक्त (३)
२७. बुरी आदत (२)
२९. ध्वंस करनेवाला (२)

***वर्ग पहेली (१३७) का हल अगले अंक में।***

## वर्ग पहेली (१३८)

| | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ | २ | | ३ | ■ | ४ | | ५ | ६ |
| ७ | | ■ | ८ | ९ | | ■ | १० | |
| | ■ | ११ | | | | १२ | ■ | |
| १३ | १४ | | ■ | | ■ | १५ | १६ | |
| ■ | १७ | | | ■ | १८ | | | ■ |
| १९ | | | ■ | २० | ■ | २१ | | २२ |
| | ■ | २३ | २४ | | २५ | | ■ | |
| २६ | २७ | ■ | २८ | | | ■ | २९ | |
| ३० | | | | ■ | ३१ | | | |

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

## लोकार्पण समारोह संपन्न

१८ जनवरी को नई दिल्ली में नागरी लिपि परिषद् के तत्त्वावधान में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् सभागार में डॉ. श्यामसिंह शशि की अध्यक्षता में डॉ. परमानंद पांचाल की कृति 'हिंदी भाषा : प्रासंगिकता और व्यापकता' का लोकार्पण किया गया। डॉ. प्रेमचंद पातंजलि के सान्निध्य में हुए इस आयोजन के मुख्य अतिथि श्री अतुल कोठारी थे। इस अवसर पर सर्वश्री रवि शर्मा, इंद्र सेंगर, प्रदीप शर्मा, उमाशंकर मिश्र ने अपने विचार व्यक्त किए। संयोजन डॉ. हरिसिंह पाल ने किया। संचालन श्री उमेश चंद्र त्यागी ने किया तथा धन्यवाद डॉ. रामप्रकाश दास ने ज्ञापित किया। ☐

## लोकार्पण समारोह संपन्न

८ जनवरी को हिंदी भवन, नई दिल्ली में 'किताबघर प्रकाशन' तथा 'लेखिका संघ' के संयुक्त तत्त्वावधान में हिंदी भवन में सुश्री निशा भार्गव की दो कृतियों 'चुलबुल कविताएँ' एवं 'रस्साकशी' का लोकार्पण सर्वश्री बालस्वरूप राही, अशोक चक्रधर, प्रदीप पंत, गोविंद व्यास, सुरेश उपाध्याय, लक्ष्मीशंकर वाजपेयी, हरिसिंह पाल के करकमलों से संपन्न हुआ। संचालन डॉ. मंजु गुप्ता ने किया तथा धन्यवाद डॉ. सुशील गुप्त ने ज्ञापित किया।☐

## 'अतुल्य भारत' का विमोचन संपन्न

विगत दिनों मुंबई में सांस्कृतिक सामाजिक संस्था 'भागवत परिवार' द्वारा आयोजित कार्यक्रम में मुख्य अतिथि एवं एयर इंडिया के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री अश्विनी लोहानी द्वारा 'अतुल्य भारत' ग्रंथ का विमोचन किया गया, जिसमें सर्वश्री मुकेश भाटिया, वीरेंद्र याज्ञिक, एस.पी. गोयल, महावीर अग्रवाल नेवटिया ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर सर्वश्री बनमाली चतुर्वेदी, चंद्रकांत जोशी, चंद्रशेखर अग्रवाल, दिनेश चंद्र बेसवारी का सम्मान किया गया। संचालन श्री सुरेंद्र विकल ने किया। ☐

## 'भीतर का सच' कृति लोकार्पित

विगत दिनों पटना में वातायन पब्लिकेशन द्वारा डॉ. सतीशराज पुष्करणा की अध्यक्षता में आयोजित समारोह में श्री सिद्धेश्वर के लघुकथा संग्रह 'भीतर का सच' का लोकार्पण किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि श्री शिवदयाल एवं विशिष्ट अतिथि श्री भगवती प्रसाद द्विवेदी थे। इस अवसर पर सर्वश्री डॉ. उषा किरण खान, संतोष दीक्षित, पुष्पा जमुआर, जयंत मेहता, नागेंद्र सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. अर्चना त्रिपाठी ने किया तथा धन्यवाद श्री राजेश शुक्ल ने ज्ञापित किया। ☐

## लोकार्पण व संगोष्ठी संपन्न

विगत दिनों भोपाल के स्वराज भवन सभागृह में 'परंपरा' संस्था द्वारा श्रीमती सुमन ओबेरॉय के कहानी संग्रह 'तानाबाना' का विमोचन श्री राजेश जोशी की अध्यक्षता में किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री कैलाश पंत, राजेश जैन, स्वाति तिवारी, पुष्प तिवारी ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

## लोकार्पण कार्यक्रम संपन्न

विगत दिनों वाराणसी के पराड़कर स्मृति भवन में 'सोच-विचार' पत्रिका के 'ग्राम कथा विशेषांक' का लोकार्पण व पुरस्कार वितरण समारोह श्री मिथिलेश्वर की अध्यक्षता में आयोजित किया गया, जिसमें सर्वश्री नीरजा माधव, रामसुधार सिंह, संजय पंकज, रमेश ओबेरॉय ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

## 'सहरा के फूल' कृति लोकार्पित

२९ जनवरी को गंगापुर सिटी के मंगलम होटल में डॉ. गोपीनाथ की अध्यक्षता में श्री ए.एफ. नजर उपाख्य अशोक कुमार फुलवारिया के गजल संग्रह 'सहरा के फूल' का लोकार्पण डॉ. पुरुषोत्तम 'यकीन' के मुख्य आतिथ्य एवं सर्वश्री अंजुम करौलवी, सागर करौलवी, फैज मोहम्मद 'फैज', चरण सिंह 'पथिक', प्रभाशंकर उपाध्याय के विशिष्ट आतिथ्य में किया गया। सर्वश्री रामोतार सागर, शाकिर गंगापुरी, प्रेमकुमार उपाध्याय, आर.सी. वर्मा, महादेव गग्र, ओम भारती, अजय विद्रोही, हनुमान 'मुक्त' ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री विश्वंभर पांडेय 'व्यग्र' ने किया। द्वितीय सत्र में श्री प्रेमकुमार उपाध्याय की अध्यक्षता में काव्य गोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें आगंतुक कवियों ने अपनी रचनाएँ पढ़ीं। संचालन श्री सागर करौलवी ने किया। ☐

## लोकार्पण समारोह संपन्न

४ दिसंबर को साहित्यिक संस्था सुपथगा के तत्त्वावधान में गुरुग्राम के राजकीय कन्या महाविद्यालय के सभागार में डॉ. अशोक दिवाकर की अध्यक्षता में श्री नरेंद्र लाहड़ की दो कृतियों 'दीक्षा' एवं 'अंतसी वार्त्तालाप' का लोकार्पण किया गया। मुख्य अतिथि डॉ. गंगाप्रसाद विमल एवं विशिष्ट अतिथि डॉ. मोहनलाल सर थे। इस अवसर पर सर्वश्री उर्मिल मिश्र, सुरेखा शर्मा, डी.एस. कोहली व राजेंद्र शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. पुष्पा अंतिल ने किया तथा धन्यवाद श्री दुष्यंत राही ने ज्ञापित किया। ☐

## कृतियाँ लोकार्पित

१६ फरवरी को नई दिल्ली में आर्यावर्त साहित्य संस्कृति न्यास के तत्त्वावधान में केंद्रीय हिंदी संस्थान के सभागार में डॉ. कमल किशोर गोयनका की अध्यक्षता में डॉ. देवेंद्र दीपक की दो पुस्तकों 'मास्टर धरमदास का व्यंग्यबोध' और 'संत रविदास की राम कहानी : दृष्टि और मूल्यांकन' का लोकार्पण मुख्य अतिथि डॉ. नंदकिशोर पांडेय, सर्वश्री अवनिजेश अवस्थी, नंदलाल मेहता 'वागीश' एवं संजीव सिन्हा के करकमलों से संपन्न हुआ, साथ ही मंचस्थ अतिथियों ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. अशोक कुमार ज्योति ने किया तथा धन्यवाद श्री कुमार पंकज ने किया। ☐

## जयंती समारोह संपन्न

विगत दिनों बाबू गुलाबराय स्मृति संस्थान, आगरा की हिसार शाखा द्वारा बाबू गुलाबराय की १२९वीं जयंती का कार्यक्रम प्रो. कुमार रवींद्र की अध्यक्षता और डॉ. राधेश्याम शुक्ल के मुख्य आतिथ्य में संपन्न हुआ। इस अवसर पर वरिष्ठ साहित्यकार श्री सतीश कौशिक व श्री महेंद्र जैन को सम्मानित किया गया। बाबू गुलाबराय के कनिष्ठ पुत्र श्री विनोद शंकर ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री बूड़ाकोटी शैलांचली ने किया तथा धन्यवाद श्रीमती वसुधा गुप्ता ने ज्ञापित किया। ☐

## सम्मान समारोह संपन्न

२८ जनवरी को कोलकाता में श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय के तत्त्वावधान में हरियाणा के राज्यपाल प्रो. कप्तान सिंह सोलंकी के मुख्य आतिथ्य में स्थानीय ओसवाल भवन सभागार में ३१वाँ विवेकानंद सेवा सम्मान समारोह आयोजित किया गया, जिसमें श्री कमलेश कुमार को 'विवेकानंद सेवा सम्मान', शॉल, श्रीफल, मानपत्र तथा एक लाख रुपए की राशि देकर सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री बल्देव भाई शर्मा, लक्ष्मीनारायण भाला, प्रेमशंकर त्रिपाठी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री महावीर बजाज ने किया तथा धन्यवाद श्रीमती दुर्गा व्यास ने ज्ञापित किया। ☐

## प्रविष्टियाँ आमंत्रित

कोलकाता के राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक चेतना जागरण केंद्र 'परिवार मिलन' इस वर्ष के काव्य-वीणा सम्मान हेतु इच्छुक रचनाकार वर्ष २००५ के बाद प्रकाशित अपनी कृति की चार प्रतियाँ, पासपोर्ट आकार के दो छायाचित्र, संक्षिप्त परिचय ३० अप्रैल, २०१७ तक ४, एस.एन. चटर्जी रोड, बेहाला, कोलकाता-७०००३८ पर भेज सकते हैं। दूरभाष : २४४७७९५७ ☐

## श्री श्यामसुंदर सुमन सम्मानित

विगत दिनों उज्जैन में आयोजित विक्रमशिला हिंदी विद्यापीठ, ईशीपुर, भागलपुर के २१वें महाधिवेशन में श्री श्यामसुंदर सुमन को राष्ट्रभाषा प्रचार-प्रसार एवं साहित्य सेवा के लिए 'हिंदी रत्न-२०१६ सारस्वत सम्मान' से श्री देवेंद्रनाथ शाह व श्री योगेंद्रनाथ 'अरुण' द्वारा सम्मानित किया गया। ☐

## साहित्यकार सम्मान समारोह संपन्न

२९ जनवरी को भीलवाड़ा में श्री श्यामसुंदर सुमन की अध्यक्षता में साहित्यिक उन्नयन को समर्पित संस्था सामयिकी के ४७वें स्थापना दिवस पर आयोजित साहित्यकार सम्मान समारोह में सुश्री रेखा लोढ़ा 'स्मित' द्वारा सर्वश्री राजेंद्र गोपाल व्यास को 'गीत शिरोमणि', भैरूँलाल गर्ग को 'हिंदी रत्न', फतह सिंह लोढ़ा को 'साहित्य गौरव', एम.डी. कनेरिया को 'साहित्य गौरव', श्याम प्रकाश देवपुरा को 'भारत गौरव', महेंद्र शर्मा, रविंद्र जैन व संतोष जोशी को 'काव्य भूषण', गोपाल पंचोली 'आशु' व पुनीता भारद्वाज को 'काव्यश्री' सम्मान से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप सभी साहित्यकारों को कंठहार, उत्तरीय, स्मृति-चिह्न, सम्मान-पत्र, शॉल तथा साहित्यिक पुस्तकें भेंट की गईं। इस अवसर पर काव्य गोष्ठी का आयोजन भी किया गया, जिसमें दो दर्जन कवियों ने काव्यपाठ किया। ☐

## परिचर्चा आयोजित

२५ जनवरी को नई दिल्ली के रामकृष्ण मिशन में इंस्टीट्यूट ऑफ हार्मनी एंड पीस स्टडीज द्वारा 'राष्ट्रीयता : सर्वधर्म समन्वय का आधार' विषय पर परिचर्चा आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री स्वामी शांतात्मानंद, स्वामी सुशील गोस्वामी महाराज, स्वामी सर्वानंद सरस्वती, ब्रह्माकुमारी बहन लक्ष्मी, इमाम उमैर इल्यासी, मौलाना इकबाल मुल्ला, सूफी सैयद अहमद निजामी, आचार्य लोकेश मुनि, साध्वी गरुछाया, भिक्षु कबीर सक्सेना, फादर फेलिक्स और फादर डॉ. एम.डी. थॉमस ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

## वनमाली सम्मान प्रदत्त

विगत दिनों नई दिल्ली के भारत भवन में श्री लीलाधर मंडलोई की अध्यक्षता में आयोजित वनमाली कथा सम्मान समारोह में सर्वश्री मालती जोशी, मुकेश वर्मा, अल्पना मिश्र, पंकज मित्र, मनीशा कुलश्रेष्ठ, रोहिणी अग्रवाल, जयप्रकाश, पल्लव को 'वनमाली स्मृति कथा सम्मान', शॉल, स्मृति-चिह्न व ३१ हजार रुपए की राशि से सम्मानित किया गया। विशिष्ट अतिथि सर्वश्री ममता कालिया, अशोक मिश्र एवं शशांक थे। इस अवसर पर श्री देवेंद्र राज अंकुर की उपस्थिति में आईसेक्ट व डॉ. सी.वी. रमन विश्वविद्यालय के कुलाधिपति श्री संतोष चौबे की कहानी 'गरीब नवाज' का नाट्य मंचन किया गया। संचालन श्री विनय उपाध्याय ने किया तथा आभार श्री बलराम गुमाश्ता ने ज्ञापित किया। ☐

## श्री कमलाकांत त्रिपाठी सम्मानित

३१ जनवरी को नई दिल्ली के एनसीयूआई ऑडिटोरियम में उर्वरक क्षेत्र की प्रमुख संस्था इफको द्वारा दिए जानेवाले 'श्रीलाल शुक्ल स्मृति इफको साहित्य सम्मान' से केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री श्री प्रकाश जावड़ेकर द्वारा श्री कमलाकांत त्रिपाठी को सम्मानित किया। इस अवसर पर श्रीलाल शुक्ल की कृति 'रागदरबारी' पर आधारित नाटक का मंचन भी किया गया। पूर्वाह्न में श्री मुरली मनोहर प्रसाद सिंह की अध्यक्षता में 'श्रीलाल शुक्ल की रचनाधर्मिता और हमारा समय' विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री कमलाकांत त्रिपाठी, नरेश सक्सेना, रविभूषण, जयप्रकाश कर्दम, पंकज चतुर्वेदी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्रीमती प्रीति सागर ने किया। ☐

## सम्मान समारोह संपन्न

३१ जनवरी को आगरा में श्री वाई.के. गुप्ता की अध्यक्षता में बाबू गुलाबराय की १२९वीं जयंती मनाई गई, जिसमें मुख्य अतिथि डॉ. जी.के. अग्रवाल एवं विशिष्ट अतिथि प्रो. रामवीर सिंह थे। इस अवसर पर सर्वश्री रमेशचंद्र शाह को 'बाबू गुलाबराय स्मृति सम्मान', त्रिलोचन तरल व राजकुमार रंजन को 'बाबू धर्मपाल विद्यार्थी सम्मान', योगेश कंसल को 'बाबू रामशंकर गुप्त सम्मान', सर्वश्री जयंत अग्रवाल, अवीनभूति वालिया, मेघा अग्रवाल, श्यामल राय, अनिरुद्ध अग्रवाल व अदिति कुमार को 'बाबू गुलाबराय प्रोत्साहन पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। संचालन श्री भगवन शर्मा ने किया तथा धन्यवाद श्री राकेश कुमार ने ज्ञापित किया। ☐

## सम्मान घोषित

इंदौर में श्री मध्य भारत हिंदी साहित्य समिति द्वारा प्रतिवर्ष दिए जानेवाले शताब्दी राष्ट्रीय एवं प्रादेशिक पुरस्कारों की घोषणा की गई। वर्ष २०१६ के लिए एक लाख रुपए का राष्ट्रीय पुरस्कार डॉ. कमलकिशोर गोयनका को तथा पचास हजार रुपए का प्रादेशिक पुरस्कार डॉ. जयकुमार जलज को मार्च माह में आयोजित सम्मान समारोह में प्रदान किया जाएगा। ☐

## डॉ. सुंदरलाल कथूरिया सम्मानित

विगत दिनों संस्कारधानी जबलपुर की प्रतिष्ठित साहित्यिक संस्था 'कादंबरी' द्वारा आयोजित सम्मान समारोह में प्रो. कपिल देव मिश्र एवं आचार्य कृष्णकांत चतुर्वेदी द्वारा डॉ. सुंदरलाल कथूरिया को 'स्वामी प्रज्ञानंद प्रज्ञाभूषण सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें मोतियों की माला, प्रशस्ति-पत्र एवं इक्कीस हजार रुपए की राशि भेंट की गई। इस अवसर पर डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल' ने अपने विचार व्यक्त किए। □

## श्री वरुणेंद्र कथूरिया सम्मानित

२५ दिसंबर को दिल्ली में स्वामी श्रद्धानंद बलिदान दिवस पर आर्य केंद्रीय सभा द्वारा आयोजित कार्यक्रम में श्री वरुणेंद्र कथूरिया को डॉ. अशोक कुमार चौहान द्वारा 'डॉ. मुमुक्षु आर्य अमर शहीद पं. रामप्रसाद बिस्मिल स्मृति पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें अंगवस्त्र, प्रशस्ति-पत्र एवं सम्मान राशि भेंट की गई। इस अवसर पर श्री विनय आर्य ने अपने विचार व्यक्त किए। □

## लेखक गोष्ठी संपन्न

२६ जनवरी को ओस्लो में भारतीय नॉर्वेजीय सूचना एवं सांस्कृतिक फोरम द्वारा आयोजित लेखक गोष्ठी में सर्वश्री सुरेशचंद्र शुक्ल 'शरद आलोक', मीना मुरलीधरन, संगीता शुक्ला, दिव्या विद्यार्थी, माया भारती, रूबी शेरी, नोशीन इकबाल, प्रगट सिंह, अलका, बासदेव भरत, इंगेर मारिये लिल्लेएंगेन व नूरी रोयसेग ने अपने विचार व्यक्त किए। □

## वार्षिक सम्मेलन संपन्न

विगत दिनों फरीदाबाद में संत साहित्य अकादमी का तृतीय वार्षिक सम्मेलन श्रीमठ के जगद्गुरु स्वामी रामानंदाचार्य के पीठाधीश्वर जगद्गुरु रामनरेशाचार्य की अध्यक्षता में आयोजित किया गया, जिसकी मुख्य अतिथि सुश्री सीमा त्रिखा एवं विशिष्ट अतिथि डॉ. बिंदेश्वर पाठक थे। इस अवसर पर डॉ. बलदेव वंशी और जगद्गुरु द्वारा डॉ. उमा शशि दुर्गा को 'महात्मा बुद्ध साहित्यरत्न सम्मान', डॉ. उदय प्रताप सिंह को 'जगद्गुरु रामानंदाचार्य साहित्यरत्न सम्मान' प्रदान किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें शॉल, प्रशस्ति-पत्र एवं ग्यारह हजार की राशि भेंट की गई। डॉ. बिंदेश्वर पाठक को 'दरिद्र नारायण सम्मान' और श्री पुष्पेंद्र चौहान को 'भाषा परमवीर सम्मान' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर 'संतों की वाणी और हमारा समय' विषय पर परिचर्चा की गई, जिसमें सर्वश्री रमेश सोनी, शिवकुमार खंडेलवाल, संत विजेंद्र दास, अशोक वैरागी, नरेश शांडिल्य, आचार्य फुलोरिया, संजय प्रभाकर व जयप्रकाश गौतम ने अपने विचार व्यक्त किए। □

## काका साहेब कालेलकर सम्मान से सम्मानित

विगत दिनों काका साहेब कालेलकर के जन्मदिन के उपलक्ष्य में आयोजित समारोह में गांधी हिंदुस्तानी साहित्य सभा में श्रीमती ममता कालिया व श्री प्रेमपाल शर्मा ने शिक्षा के लिए डॉ. साधना शाह, कला के लिए सुश्री हेना चक्रवर्ती, संगीत के लिए पंडित देवेंद्र वर्मा, पत्रकारिता के लिए श्री केतन रूपेरा व साहित्य के लिए चेन्नई की सुश्री रोचिका शर्मा को सम्मानित किया गया। श्रीमती कुसुम शाह एवं श्री अतुल प्रभाकर ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री प्रसून लतांत व श्रीमती किरण आर्या ने किया। □

## श्री आलोक पुराणिक सम्मानित

१३ फरवरी को नई दिल्ली के हिंदी भवन सभागार में 'साहित्य अमृत' के संपादक व पूर्व राज्यपाल श्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी की अध्यक्षता में आयोजित पं. गोपालप्रसाद व्यास की जयंती समारोह में मुख्य अतिथि डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी, विशिष्ट अतिथि डॉ. हरीश नवल एवं सर्वश्री अशोक चक्रधर, सुभाष चंदर, गोविंद व्यास, रत्ना कौशिक, हरीशंकर बर्मन द्वारा व्यंग्यकार श्री आलोक पुराणिक को 'व्यंग्यश्री सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें रजत श्रीफल, प्रशस्ति-पत्र, शॉल, पुष्पहार, वाग्देवी की प्रतिमा तथा एक लाख ग्यारह हजार एक सौ ग्यारह रुपए की राशि भेंट की गई। संचालन श्री नीरज बधवार ने किया। □

## श्री कैलाश चंद्र पंत सम्मानित

११ फरवरी को भोपाल में मीडिया विमर्श पत्रिका की ओर से गांधी भवन में डॉ. हिमांशु द्विवेदी की अध्यक्षता में 'अक्षरा' के संपादक श्री कैलाश चंद्र पंत को 'पं. बृजलाल द्विवेदी अखिल भारतीय पत्रकारिता सम्मान-२०१७' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री राजेंद्र शर्मा, विशिष्ट अतिथि श्री कृपाशंकर शर्मा एवं सर्वश्री विजयदत्त श्रीधर, राजीव वर्मा, परमात्मानाथ द्विवेदी ने अपने विचार व्यक्त किए। इससे पूर्व प्रो. बृजकिशोर कुठियाला की अध्यक्षता में श्री हरेंद्र प्रताप ने पंडित दीनदयाल उपाध्याय की पुण्यतिथि प्रसंग पर एकात्म मानवदर्शन की प्रासंगिकता पर व्याख्यान दिया। प्रस्तावना श्री संजय द्विवेदी ने दी। संचालन डॉ. सौरभ मालवीय ने किया। □

## संस्कृत युवा सम्मेलन

८ फरवरी को जयपुर में राजस्थान संस्कृत अकादमी में आयोजित 'संस्कृत युवा सम्मेलन' में सर्वश्री महेश शर्मा, पुरुषोत्तम अग्रवाल, आशुतोष शर्मा व जया दवे ने अपने विचार व्यक्त किए। प्रो. राजेंद्र मिश्र की अध्यक्षता में आयोजित 'संस्कृत के भीतर' विषयक प्रथम सत्र में सर्वश्री कौशल तिवारी, मोनिका वर्मा, लोकेश शर्मा, विक्रमजीत, कपिल गौतम, दीपक भारद्वाज ने अपने विचार व्यक्त किए। श्री मनीष तिवारी की अध्यक्षता में आयोजित 'संस्कृत के बाहर' विषयक द्वितीय सत्र में सर्वश्री कुलदीप शर्मा, देवेंद्र कुमार शर्मा, मुरारी गुप्ता, शोएब खान, अवधेश आकोदिया ने अपने विचार व्यक्त किए। संयोजन श्री शास्त्री कोसलेंद्र दास ने किया तथा संचालन डॉ. उमेश नेपाल ने किया। □

## स्मृति समारोह संपन्न

८ जनवरी को देहरादून में श्री गोवर्धन सरस्वती विद्या मंदिर इंटर कॉलेज में डॉ. विजय धस्माना की अध्यक्षता में 'कर्मयोगी डॉ. नित्यानंद स्मृति समारोह' आयोजित किया गया, जिसमें सर्वश्री अशोक बेरी, दिनेश चंद्र, रविदेव आनंद, प्रभाकर उनियाल, महेश शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री विजय कुमार ने किया तथा धन्यवाद डॉ. माधुरी शर्मा ने ज्ञापित किया। □

## श्रीमती रोहिणी अग्रवाल सम्मानित

विगत दिनों लखनऊ में साहित्यिक पत्रिका 'रेवांत' की ओर से सर्वश्री

नरेश सक्सेना, प्रताप सिंह, कौशल किशोर, वीरेंद्र यादव, अखिलेश ने श्रीमती रोहिणी अग्रवाल को 'मुक्तिबोध साहित्य सम्मान २०१६' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें प्रशस्ति-पत्र, स्मृति-चिह्न, अंगवस्त्र व ग्यारह हजार रुपए की राशि भेंट की गई। □

## भारतीय कविता बिंब का आयोजन

विगत दिनों दिल्ली में हिंदी अकादमी ने कला-संस्कृति, भाषा एवं पर्यटन मंत्री श्री कपिल मिश्र के मुख्य आतिथ्य में 'भारतीय कविता बिंब' का आयोजन किया गया, जिसका उद्घाटन श्री कुमार विश्वास ने किया। सर्वश्री दुर्गादान सिंह गौड़, गोकुलेंद्र गोस्वामी, फरहत एहसास, के.वी.के. पेरूमाल, असंग घोष, पंकज सुबीर, कैलाश वानखेड़े, तरकश प्रदीप, लाला शंकर गयावाल, रमाकांत शुक्ल, वीणा श्रृंगी, प्रेमचंद गांधी, संपत सरल, सुशील सिद्धार्थ, मृदुला शुक्ला, अभिषेक शुक्ल, रश्मि शर्मा, जौहर सफईवादी, बलदेवानंद सागर, गीत चतुर्वेदी, चारुलता ने काव्य पाठ किया। संचालन डॉ. जीतराम भट्ट ने किया। □

## साहित्य सम्मान समारोह एवं काव्य गोष्ठी संपन्न

विगत दिनों चंडीगढ़ में केंद्रीय विद्यालय संगठन भवन में डॉ. रणजीत की अध्यक्षता एवं श्री जगदीश मोहन रावत के विशिष्ट आतिथ्य में साहित्य सम्मान समारोह एवं काव्य गोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें श्री यशपाल शर्मा की कृति 'उजाले की ओर' एवं श्री केवल कृष्ण शर्मा की 'दृष्टि से सृष्टि' को 'लखटकिया पुरस्कार' देने की घोषणा की गई। इस अवसर पर सर्वश्री सुरजीत कौर, बैंस तारन, गुजराल निर्मल, निम्मी कँवलजीत भाटिया, एवम माणुके, परमजीत परम, जितेंद्र सिंह, ध्यान सिंह जख्मी, सुरेंद्र कपिला, शशिप्रभा, सतीश महाजन, दलजीत कौर, सुरेंद्र सिंगला, गुरमान सैनी, फूलचंद मानव, योगेश्वर कौर, आनंद तिवारी ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री टेकचंद अत्री ने किया। धन्यवाद प्रो. योगेस्वर कौर ने ज्ञापित किया। □

## डॉ. घमंडीलाल अग्रवाल सम्मानित

१८ दिसंबर को चंदौसी में सुदामा देवी इंटर कॉलेज में के.बी. हिंदी साहित्य समिति के तत्त्वावधान में आयोजित एक भव्य समारोह में डॉ. घमंडीलाल अग्रवाल को उनके नवगीत संग्रह 'खोई-खोई गंध' के लिए सुधा शर्मा स्मृति 'हिंदी विभूषण श्री सम्मान' प्रदान किया गया। मुख्य अतिथि डॉ. राम सनेही लाल शर्मा 'यायावर' ने डॉ. अग्रवाल को २१०० रुपए की राशि, प्रशस्ति-पत्र, स्मृति-चिह्न एवं शॉल भेंट कर सम्मानित किया। संचालन डॉ. नितिन सेठी ने किया। □

## संस्कृत काव्य गोष्ठी संपन्न

१४ फरवरी को वाराणसी में विद्याश्री न्यास द्वारा स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र की १३वीं पुण्यतिथि पर योग साधना केंद्र, संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय में प्रो. यदुनाथ प्रसाद दूबे की अध्यक्षता एवं प्रो. शिवजी उपाध्याय के मुख्य आतिथ्य में संस्कृत काव्य गोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री रमेश द्विवेदी, पवन कुमार शास्त्री, गंगाधर पंडा, विवेक पांडेय, लेखमणि त्रिपाठी, शिवराम शर्मा, धर्मदत्त चतुर्वेदी, प्रभुनाथ द्विवेदी, हरि प्रसाद अधिकारी, हरप्रसाद दीक्षित, राजनाथ त्रिपाठी, केशव पोखरेल, गायत्री प्रसाद पांडेय, माधवी तिवारी ने काव्य पाठ किया। संचालन डॉ. चंद्रकांता राय ने किया तथा धन्यवाद डॉ. दयानिधि मिश्र ने ज्ञापित किया। □

## पाटोत्सव ब्रजभाषा समारोह संपन्न

१८ फरवरी को नाथद्वारा में साहित्य मंडल के तत्त्वावधान में 'पाटोत्सव ब्रजभाषा समारोह' संपन्न हुआ, जिसमें साहित्य, पत्रकारिता के क्षेत्र के विशिष्ट जनों को सम्मानित किया गया। सर्वश्री सतीशचंद्र शर्मा 'सुधांशु', ब्रह्मजीत गौतम, अजय शर्मा, अरविंद पथिक, विमलेश श्रीवास्तव, श्रुति सिन्हा, अजय गुप्त, शिवचरण सरोहा को 'हिंदी साहित्य मनीषी' की मानद उपाधि से; सर्वश्री किशनवीर यादव 'ब्रजवासी', चंद्रेश अग्रवाल 'निडर' को 'पत्रकार प्रवर' की मानद उपाधि से; सर्वश्री भगवतसिंह राठौड़, प्रमोद त्रिपाठी, सुरभि सोनी, किशनलाल रावल, ऋषभसिंह राजावत, जयंति सामोता, कीर्तन खत्री, रेणु परिहार, कविता पुरोहित, भूमिका बागोरा, सागरसिंह बल्ला, राजेश्वरी पालीवाल, नरेंद्रसिंह कितावत, दिव्या श्रीमाली, चेतना पालीवाल, निखिल राठौड़, दिव्यांशु कुमावत, डिंपल कुँवर चौहान, पायल राठौड़, जयंत सेन को 'विद्यार्थी रत्न प्रतिभा सम्मान' से; सर्वश्री शंकरलाल नागदा, राधेश्याम कटारिया, रामचंद्र गुर्जर, तुलसीदास पालीवाल को 'श्रीनाथद्वारा रत्न' से सम्मानित किया गया। सर्वश्री विमलेश्वर श्रीवास्तव ने 'वात्सल्य एवं बाल मनोविज्ञान के सिद्ध कवि सूरदास', वीरेंद्रप्रताप सिंह 'भ्रमर' ने 'भक्त नागरीदास अरु बिनकौ साहित्य', रामस्नेहीलाल शर्मा ने 'ब्रजलोक गीतन माँहि लोकमंगल कामना' एवं कृष्णचंद्र गोस्वामी ने 'ब्रजविभूति स्वामी भगवत रसिक' विषयों पर आलेख पाठ किया। सर्वश्री वीरेंद्रप्रताप सिंह 'भ्रमर', सुरेश चतुर्वेदी 'सुमनेश', जगदीशचंद्र शास्त्री, हरिदत्त चतुर्वेदी 'हरीश', मोहनलाल गौतम 'मोही', हरीशचंद्र शर्मा 'हरि', अनुराग भारद्वाज, रामकिशन सैनी 'दुश्मन', ताराचंद 'प्रेमी', केवलराम 'निर्मल', रामलखन शर्मा 'राम', मनोज 'मनु', राकेशबाबू 'ताबीश' को 'ब्रजभाषा विभूषण' की मानद उपाधि से; दो हजार एक सौ रुपए की राशि से डॉ. विनोद बब्बर को 'श्री गोपीलाल दुग्गड़ स्मृति सम्मान-२०१७', डॉ. मधुकांत को 'श्रीमती कंचनबाई दुग्गड़ स्मृति सम्मान', डॉ. राजकुमार रंजन को 'श्री गयाप्रसाद शर्मा स्मृति सम्मान-२०१७', डॉ. नागेश पांडेय 'संजय' को 'दौलतराम जागेटिया स्मृति सम्मान-२०१७', श्री सागर सूद को 'श्रीदिनेशचंद्र सिंहाल स्मृति सम्मान-२०१७', श्री गोपाललाल चौहान को 'श्रीमती शशिकला मेहता स्मृति सम्मान-२०१७' से; पाँच हजार एक सौ रुपए की राशि से देवर्षि कलानाथ शास्त्री व कृष्णचंद्र गोस्वामी को 'श्री गणेशवल्लभ राठी स्मृति सम्मान-२०१७', गोपाल प्रसाद मुद्गल को 'श्रीरामचरण पीवलिया स्मृति सम्मान-२०१७' से सम्मानित किया गया। संस्था की पत्रिका 'हरसिंगार' का लोकार्पण संपन्न हुआ। कवि सम्मेलन में सर्वश्री राधागोविंद पाठक, श्यामसुंदर 'अकिंचन', ब्रजेंद्र चकोर, शिवसागर शर्मा, भूपेंद्र भरतपुरी, भगवान मकरंद, विट्ठल पारीक, सुरेंद्र सार्थक, हरिओम 'हरि', अनुपम गौतम, अंजीव अंजुम एवं अभिषेक 'अमर' ने काव्य पाठ किया। मंच-संचालन श्री विट्ठल पारीक एवं कवि श्री अंजीव अंजुम ने किया। संस्था के प्रधानमंत्री श्री श्याम प्रकाश देवपुरा के धन्यवाद ज्ञापन के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ। □